॥ રામ ॥

॥ रामकथा ॥

मोरारिबापू

मानस-मातृदेवो भव

वैष्णोदेवी-कटरा(जम्मु)

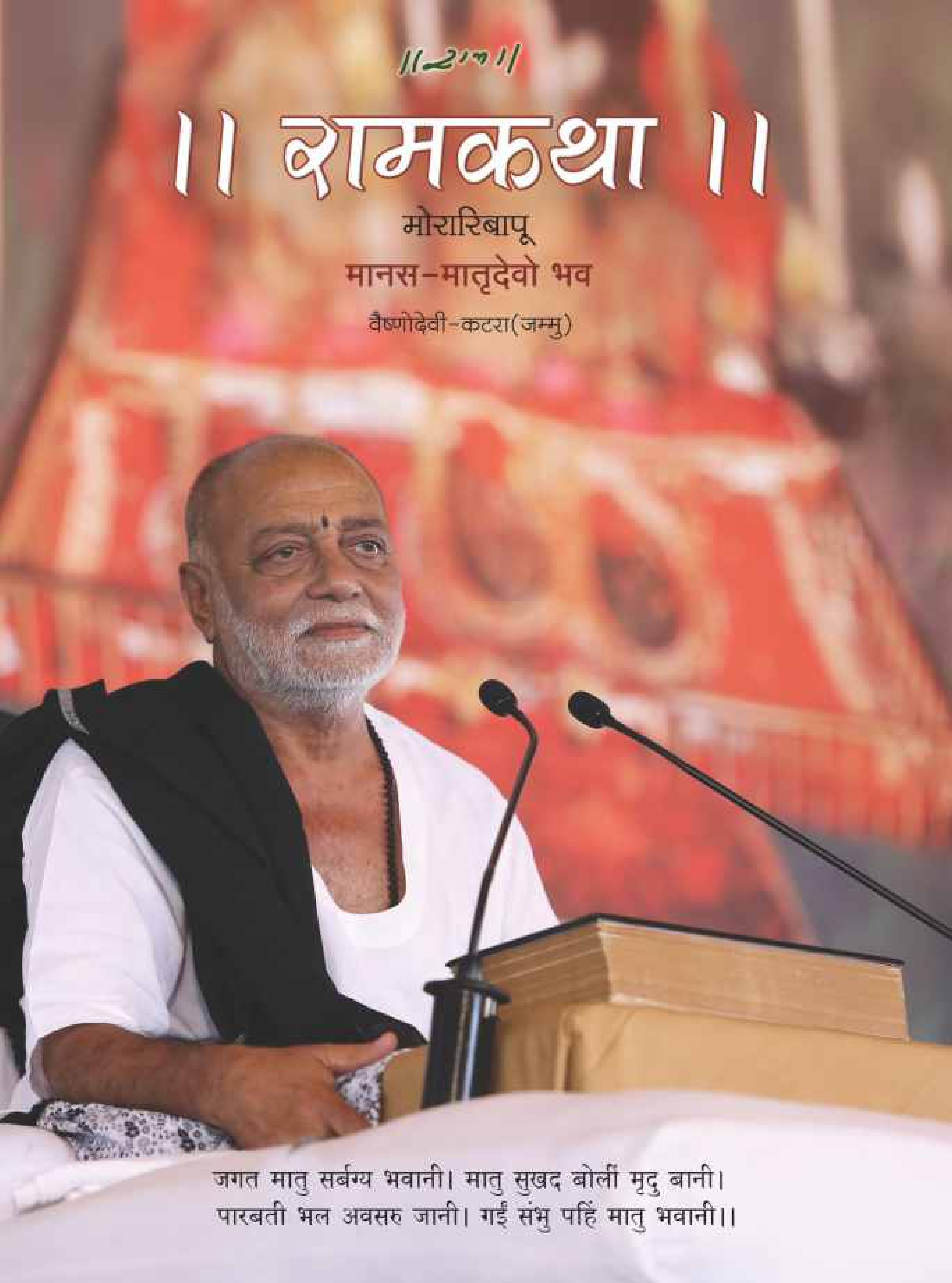

जगत मातु सर्बग्य भवानी। मातु सुखद बोलीं मृदु बानी।
पारबती भल अवसरु जानी। गईं संभु पहिं मातु भवानी॥

।। रामकथा ।।
मानस–मातृदेवो भव

मोरारिबापू
वैष्णोदेवी–कटरा(जम्मु)
दिनांक : १-१०-२०१६ से ९-१०-२०१६
कथा-क्रमांक : ८०१

प्रकाशन :
सितम्बर, २०१८

प्रकाशक
श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट,
तलगाजरडा (गुजरात)
www.chitrakutdhamtalgajarda.org

कोपीराईट
© श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट

संपादक
नीतिन वडगामा
nitin.vadgama@yahoo.com

रामकथा पुस्तक प्राप्ति सम्पर्क–सूत्र :
ramkathabook@gmail.com
+91 704 534 2969 (only sms)

ग्राफिक्स
स्वर एनिम्स

प्रेम–पियाला

परामबा माँ वैष्णोदेवी के पवित्रधाम कटरा(जम्मु) में अश्विन नवरात्रि के पावन दिनों में ता. १–१०–२०१६ से ९–१०–२०१६ दरमियान मोरारिबापू ने रामकथा का अनुष्ठान किया। समग्र जम्मु–कश्मीर के विकास और विश्राम के लिए अनुष्ठान हो और इसके द्वारा पूरे संसार में शांति बनी रहे, ऐसे शुभ हेतु बापू ने इस भूमि पर रामकथा का गान किया।

'मानस–मातृदेवो भव' विषय पर केन्द्रित इस रामकथा में बापू ने 'मानस' में माँ का जो दर्शन है और माँ के विभिन्न स्वरूप है उसका परिचय दिया एवम् माँ की महत्ता, विशालता और उदारता के संदर्भ में माँ का माहात्म्य प्रकट किया।

'माँ कभी छोटी नहीं हो सकती, माँ कभी संकीर्ण नहीं हो सकती।' ऐसे सूत्रात्मक निवेदन के साथ बापू ने कहा कि माँ और मातृत्व आकाश की तरह उदार और असीम होते हैं। किसी के पास यह धर्म है। किसी के पास कोई धर्म है। कोई इसको माने, कोई उसको माने। सबकी अपनी–अपनी निजता है लेकिन प्रत्येक घर में माँ तो होती ही है। बिना माँ हम नहीं होते। इसलिए माँ का अर्थ आकाश है।

'बिना मातृशक्ति शक्तिमान पाया नहीं जाता।' और 'माँ एक बहुत बड़ी सुरक्षा है।' जैसे सूत्रपात के साथ बापू ने इस तरह मातृशक्ति का महिमागान किया कि आदमी को श्रद्धारूपी माँ के द्वारा या भक्तिरूपी माँ के द्वारा परमतत्त्व का परिचय प्राप्त होगा। दुर्ग में सुरक्षा सीमित है पर जो दुर्गा के पास पहुंच जाता है उसकी सुरक्षा असीमित है।

'महाभारत' का संदर्भ देते हुए बापू ने कहा कि अष्टभुजावाली माँ साधक की पूर्ति करती है। माँ अष्ट वस्तु से हमें भर देती है और माँ धन, प्रजा, शरीर, लोकयात्रा, धर्म, स्वर्ग, ऋषि और पितृओं की रक्षा करती है। बापू ने 'दुर्गासप्तशती' में निर्दिष्ट दुर्गा के सहस्त्र नाम का स्मरण किया और संस्कृत वाङ्मय में 'मातृ', 'जननी', 'शिवा', 'धरती', 'दया', 'त्रिभुवनश्रेष्ठा', 'देवी', 'सर्वदु:खहरा' इत्यादि मातृवाचक जो इक्कीस नाम दिये गये हैं उसका विवरण भी किया।

बापू ने उमा, अंबिका और भवानी ये तीनों नामों के भिन्नभिन्न स्तर को निजी ढंग से रेखांकित किया कि विश्व की कोई भी कन्या का नाम उमा है। दुनिया की कोई भी विवाहिता स्त्री ये अंबिका है। और कोई भी स्त्री जब माँ बन जाती है तब दुनिया की कोई भी स्त्री भवानी बन जाती है। ये तीन स्तर है। कन्या आती है। कन्या आती है तो हम कहते हैं कि बेटी आई। जो कन्या आती है वो कन्या ब्याहती है वो जाती है। अंबिका बनने अपने घर से कहीं दूर जाती है। और माँ कायम, कायम, कायम रहती है। चाहे गिरिशृंग पर हो या रावण के इष्टस्वरूप में पाताल में हो। माँ कायम रहती है।

दुर्गापूजा के अनुष्ठानीय दिनों में माँ वैष्णोदेवी के दरबार में माँ के सामने मोरारिबापू की व्यासपीठ के माध्यम से यूं मातृ–वंदना हुई।

– नीतिन वडगामा

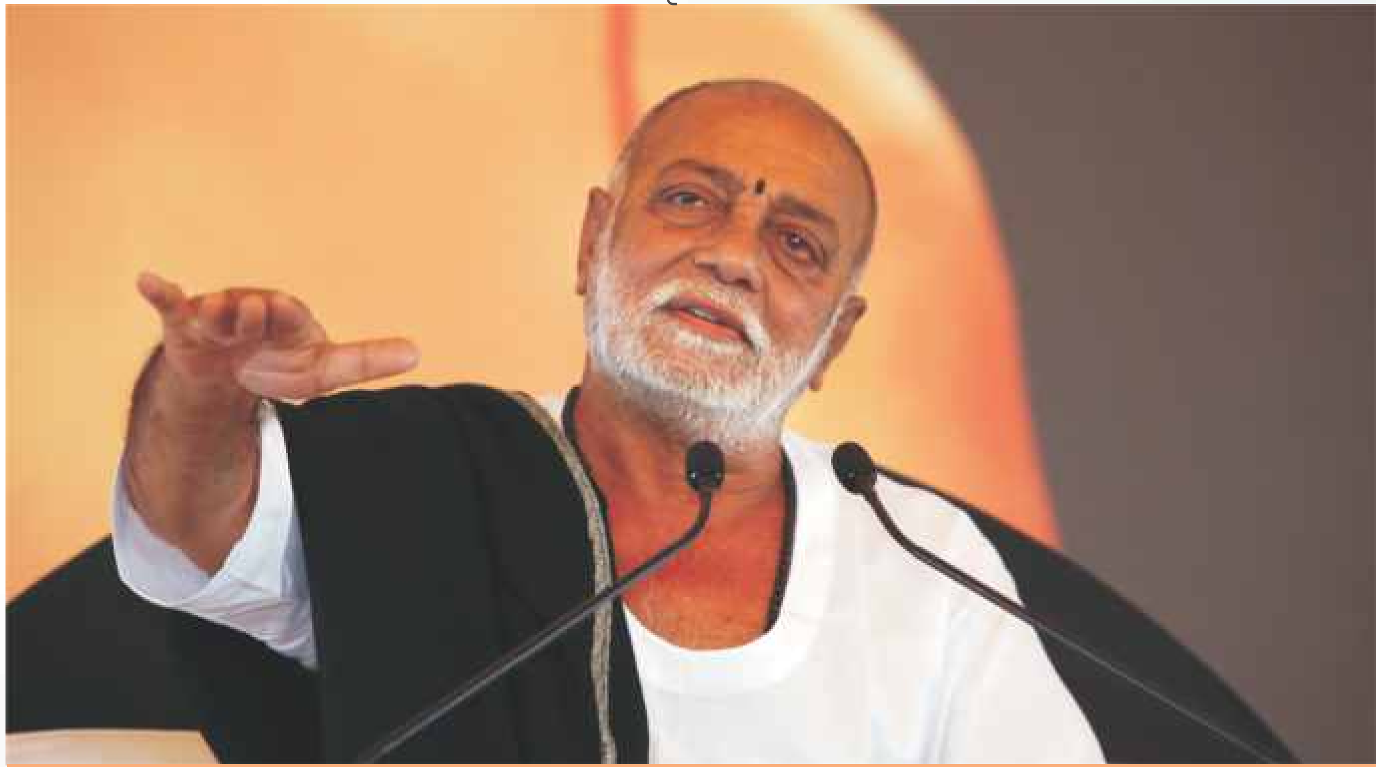

माँ कभी छोटी नहीं हो सकती, माँ कभी संकीर्ण नहीं हो सकती

जगत मातु सर्बग्य भवानी। मातु सुखद बोलीं मृदु बानी।
पारबती भल अवसरु जानी। गईं संभु पहिं मातु भवानी।।

बाप! माँ वैष्णोदेवी की अहेतु कृपा से दुर्गापूजा, अनुष्ठानपूजा के दिनों में माँ के नवरात्र, माँ के अंक में, माँ की छाया में बैठकर नव दिन के लिए भगवान राम की कथा गाने का अवसर हम सब को प्राप्त हुआ है। यह केवल, केवल और केवल माँ की कृपा का ही परिणाम है। मेरी व्यासपीठ को था कि एक बार मैं भगवान बाबा अमरनाथ की गुफा के पास बैठकर रामकथा का नव दिवसीय अनुष्ठान करूं और गायन करूं। उसके बाद मेरे मन में भी था और दो बार तो यह कथा होते-होते स्थगित हुई थी। हमारे मुख्य निमंत्रक उस समय के जनेश्वर जैन और उनका परिवार। इस बार माँ की कृपा से सुंदर योग बन गया। जनेश्वर और उनके साथ व्यासपीठ को समर्पित कई परिवार जुड़ गये और माँ के अंक में, माँ की कृपाछाया में, माँ की गोद में इन पवित्र दिनों में आज हम 'मातृदेवो भव' की चर्चा करने इकट्ठे हुए हैं।

मेरे पास श्रीनगर की कथा का भी निमंत्रण है और जम्मु की कथा का भी निमंत्रण है। मैं यथावकाश जैसे परमात्मा की इच्छा हो, योग हो तब क्रम में रामकथा लेकर श्रीनगर भी जाउंगा। पहाड़ पर तो कथा की। आज माँ की गोद में, छाया में कथा गाने का अवसर प्राप्त हुआ है। और खीण में भी जाकर, कश्मीर खीण में कथा करने का भाव तो है। तो आपका निमंत्रण फिर प्रभु ने चाहा तो वो भी करेंगे। एक तो माँ की कृपा। माँ के चरणों में बैठकर कथा गाने का मनोरथ था। यजमान परिवार का भी और आप सभी का भी। दूसरा हेतु यह भी है यह कथा के पीछे कि समग्र जम्मु-कश्मीर के विकास और विश्राम के लिए मैं एक कथा जम्मु-कश्मीर में जाकर गाउं। यह योग आया माँ की कृपा से।

शुरूआत में ही जम्मु-कश्मीर की सरकार, यहां के महामहिम गवर्नरसाहब, हमारे आर्मी के जवान, पुलिसजवान और जो-जो इस कथा के लिए पूरे मन से सहयोग और सुविधा प्रदान कर रहे हैं वो सभी को भी मैं व्यासपीठ की ओर से बहुत-बहुत धन्यवाद कहता हूं। और हम शुक्रगुजार है सरकार से लेकर आखिरी व्यक्ति तक इस कथा में सहयोग किया। हेतु है समग्र जम्मु-कश्मीर के विकास और विश्राम के लिए हम अनुष्ठान करे और इसके द्वारा पूरे संसार में शांति रहे।

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग्भवेत्।।

सब के लिए अनुष्ठान हो और वो दिन माँ की कृपा से आया। मैं व्यासपीठ से आप सब का स्वागत करता हूं। आप सब को प्रणाम करता हूं और सब को जय माता दी।

बाप! अभी-अभी कटरा से एक आदरणीय स्नेही ने आप सब का, व्यासपीठ का सम्मान करते हुए, आदर करते हुए अपने दिल के भाव व्यक्त किये। मैं बहुत-बहुत आपको और यहां की जनता को धन्यवाद देता हूं। और किसी यहां के ही शायद मेरे श्रोता होंगे इन्होंने आज पहले दिन चिठ्ठी लिखी है और मुझे मीठी चुटकी ली है कि बापू, इन्डिया में आपका स्वागत है! मैं समझ गया कि आपका कहना क्या है? क्योंकि निरंतर चार कथा विदेश में कर के आ रहा हूं। बीच में भारत में कोई कथा नहीं कर पाया क्योंकि मैं केनेडा था, टोरेन्टो। उसके बाद एथेन्स और उसके बाद जपान और अबू धाबी। इसलिए यह मीठी चुटकी लेते हुए मेरे श्रोता लिखते हैं, इन्डिया में कथा के लिए वेलकम। थेन्क यू, बहुत-बहुत शुक्रिया। कभी जगद्गुरु शंकराचार्य ने कहा था, कभी तुकाराम ने कहा था, पूरा विश्व मेरा परिवार है। 'वसुधैव कुटुम्बकम्।'

तो एक तो मैं अपनी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं यहां आने के लिए, और आप सब को मेरा प्रणाम। मैंने पहले से ही विषय घोषित किया था कि माँ के चरणों में, अश्विन नवरात्र में, शारदीय नवरात्र में कथा का गायन हो तो इस सब्जेक्ट लेकर कथा बोलूं, 'मानस-मातृदेवो भव।' 'मानस' में माँ का जो दर्शन है, आदि अंबा का और इनके साथ-साथ जितने-जितने स्वरूप है, जहां तुलसी ने मातृशरीर के साथ 'मातृ' शब्द का प्रयोग किया है, मेरे गुरु की कृपा से बातों को आपके सामने 'मानस' के आधार पर रखने की कोशिश करूंगा। तो 'मानस-मातृदेवो भव' इस कथा का केन्द्रबिंदु रहेगा। दो पंक्तियां जो उठाई है वो 'बालकांड' की है। जो निरंतर पाठ पारायण करते हैं उनको तो पता चल गया होगा, बिलग-बिलग जगह से ली है पंक्तियां। एक पंक्ति जो है-

जगत मातु सर्बग्य भवानी।
मातु सुखद बोलीं मृदु बानी।।

जिसमें जगत मातु महामाया, आदिशक्ति, पराअम्बा जो सर्वज्ञ है, मृदुभाषिणी है और ऐसी बोली बोलती है, जो सुननेवाले को बहुत सुख प्राप्त होता है ऐसी माँ, ऐसी जगदंबा भवानी बोली और दूसरी पंक्ति-

पारबती भल अवसरु जानी।

कैलास के शिखर पर वटवृक्ष की छाया में भगवान शिव के पास योग्य समय जा कर के पार्वती भगवान राम की कथा के बारे में जिज्ञासा करती है। उसके आधार पर कथा करेंगे 'मानस-मातृदेवो भव।' मुझे जिस तरह से स्मरण होता है, ग्रंथों से प्राप्ति होती है, रामकथा प्रेमी कई भाई-बहन भी अपने ढंग से खोज कर के विषय के अनुकूल कुछ न कुछ सोचते रहते हैं। इस स्वाध्याय के लिए भी मैं अपनी प्रसन्नता व्यक्त करूं। लेकिन मैं आप से बात करना चाहूंगा कि 'मातृदेवो भव' यह तीन शब्द है। मातृ मानी माँ। हमारे शास्त्रों में 'माँ' शब्द समझाने के लिए इक्कीस शब्दों का प्रयोग किया है। माँ के पर्याय, माँ के सगोत्री शब्द इक्कीस है। इसकी चर्चा मैं जैसे-जैसे स्मरण बनेगा, आपके सामने संवाद के रूप में पेश करूंगा। लेकिन मातृ का एक अर्थ है आकाश। हमें पता नहीं कि माँ शब्द का अर्थ आकाश है। भारतीय शास्त्र बड़े गहरे हैं; सब के लिए है; सब के रचे गये हैं। माँ छोटी नहीं हो सकती। 'माँ' सीमा में बाध्य नहीं हो सकती। माँ और मातृत्व आकाश की तरह उदार और असीम होते हैं।

किसी के पास यह धर्म है। किसी के पास यह धर्म है। किसी के पास कोई धर्म नहीं है। कोई इसको माने, कोई उसको माने, कोई किसी को भी न माने। सब की अपनी निजता है लेकिन प्रत्येक घर में माँ तो होती ही है। बिना माँ हम नहीं होते इसलिए माँ का अर्थ आकाश है। देव का अर्थ होता है साधु और मुनि। जैसे वैदिक देव होते हैं, पौराणिक होते हैं। इसलिए 'मानस' पांच देवों की पूजा करते हैं। यह तैंतीस कोटि देव तो होंगे। लेकिन मेरे लिए जो पांच देव है, रामदेव यानी भगवान राम। दूसरा नामदेव, प्रभु का नाम। तीसरा ज्ञानदेव, 'मानस' का विचार, उसका ज्ञान, विवेक वो मेरी दृष्टि में ज्ञानदेव है। चौथा जो वास्तविक स्वरूप में इन्कार नहीं किया जाता वो है कामदेव; यह चौथा है और पांचवां है मेरा महादेव। देव का एक अर्थ जो मैंने जाना वो है देव मानी साधु, मुनि, संत; उसको भी देव कहते हैं। साधु-संत-मुनि ये वो स्वार्थी देव नहीं है, यह परमार्थी देव है; एक बिलग ढंग के देव है। देव का अर्थ होता है वृषभ, बैल। देव का एक अर्थ है कपास की एक जात। हमारे यहां कपास की जाति का नाम है। तो जब 'माँ' शब्द आता है तब आकाश, साधु, कपास और बैल। एक अर्थ होता है बरसता हुआ मेघ, बारिश। तो इसका अर्थ हुआ माँ कैसी है? माँ आकाश जैसी है। दूसरा, माँ कैसी है? माँ 'साधुचरित सुभ चरित कपासू।' माँ शुद्ध चरित्र कपास के फूल की तरह होती है। वृषभ यानी धर्म। माँ धर्म का प्रतीक है। माँ कृपा की वर्षा करनेवाली है। और मेघ की तरह सार्वभौम है।

'मानस-मातृदेवो भव' का यह प्रारंभिक अर्थ आपके ध्यान में रहे ताकि उस पर माँ का मढ़ बनाने में सहयोग रहे। एक मंदिर बना दूं। एक मानसिक मंदिर का निर्माण करूं जो हमारे संग-संग चले। माँ की ममता, माँ की कृपा बनी रहे। 'मानस-मातृदेवो भव' एक नया विषय है। मैंने पहले कहा, उस पर कथा हो। मैं पहली बार आया। मुझे पता नहीं। बोले, उपर तो कथा हो ही नहीं सकती। नीचे हो सकती है कटरा में। मैंने कहा, ठीक है। मैं खुश हुआ। मैंने कहा, उपर होती तो कृपावर्षा हम शायद कम झिल पाते। लेकिन हम नीचे हैं तो माँ की जितनी कृपा बरसेगी विचारों की वो मैं आपके सामने व्यक्त करता रहूंगा।

मेरे भाई-बहन, 'मानस-मातृदेवो भव' कथा का विषय रहेगा। वैसे तो नवदुर्गा के रूप में माँ को पूजते हैं। और अश्विन नवरात्र में तो शैलपुत्री की पूजा होती है। विधिवत् स्थापन में हम घट स्थापन करते हैं। नवरात्र में तो शैलपुत्री का पूजन होता है। शैलपुत्री मानी पार्वती, शैलजा, हिमगिरि नंदिनी, एक अर्थ में पार्वती। पहला रूप हमारे सामने आया वो शैलपुत्री। शैलपुत्री का अर्थ मेरी व्यासपीठ करना चाहेगी शैल मानी पर्वत। वैसे माँ की ममता और करुणा अपने संतानों, अपने बच्चों पर अचल और स्थिर रहती है। क्योंकि यह शैलपुत्री है, अडिग रहती है। जगद्गुरु शंकराचार्य ने गाया, 'कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति।' पुत्र कुपुत्र बन सकता है लेकिन माता कभी कुमाता नहीं बन सकती। शैलपुत्री का एक अर्थ मेरी व्यासपीठ यह भी करना चाहेगी। 'रामचरित मानस' में लिखा है-

बूंद अघात सहहिं गिरि कैसें।
खल के बचन संत सह जैसें।

'किष्किंधाकांड' में लिखा है वर्षाऋतु वर्णन में कि आकाश से बारिश की बूंदे गिरती है, बहुत प्रहार के रूप में गिरती है। पर्वत ऐसे सहन करता है जैसे खलों के वचनों को कोई साधु सहन करता है। माँ शैलपुत्री होने के कारण कोई बालक शठता के कारण या कोई बालक विकलांग बन गया है, विकृत बन गया है, जो ट्रेक पर नहीं है, ऐसे बालकों के वचनों को माँ सहती है। शैलपुत्री जो है वो सहन करती है। वो माँ की मूर्ति है इसलिए प्रथम नवरात्र में उसकी पूजा होती है। माँ इतनी ऊंची है, शैल की तरह, ऊंचाई से भरी है। माँ कभी छोटी नहीं हो सकती, माँ कभी संकीर्ण नहीं हो सकती। आगे की एक बात करें तो यह भी कह सकता हूं कि पर्वत जितना ऊंचा होता है उतनी शीतलता ज्यादा होती है। यहां तो बर्फ़ ही बर्फ़ है। माँ की ऊंचाई दूसरों को उष्मा देनेवाली है। जो ऊंचाई दूसरों को उष्णता दे, दाह दे उस ऊंचाई की विश्व में कोई किंमत नहीं है। जो उष्मा दे, एक ऐसी शीतलता। 'मातु सुखद बोलीं मृदु बानी।' जो सुख दे, जलाये ना, जीयायें।

जैसे यह कश्मीर हिमालय की गिरिमाला की शृंखला है। उच्च शिखरों पर श्वेत बर्फ़ छाया हुआ है। क्या मतलब है? माँ जब शैलपुत्री है तब उसका मतलब है उसकी ऊंचाई तालबद्ध है। उसकी ऊंचाई धवल है। उसकी ऊंचाई श्वेत है। कोई दाग नहीं। कोई कलंक नहीं। बिलकुल निष्कलंक है। एक बात ओर भी कहने को जी करता है, पर्वतों से जैसे झरनें बहते हैं, शैलपुत्री वहाल, वात्सल्य, करुणा, दुलार किन-किन शब्दों का प्रयोग करूं? वो बहाती रहती है और नीचे तक आती है। है तो इतनी ऊंचाई पर लेकिन वात्सल्य का प्रवाह खीण तक जाता है। मेरी व्यासपीठ मानती है कि आदमी को इतनी ऊंचाई तक कभी नहीं जाना चाहिए जो नीचे गिरा दे। एक शे'र है-

जिस जगह जाके इन्सान छोटा लगे,
उस बुलंदी पे जाना नहीं चाहिए।

लेकिन माँ वो नहीं है। माँ ऊंचाई तक जाने के बाद अपने बच्चों को, अपनी करुणा को झरनें की तरह जो नीचे तक खीण में पड़े हैं इनको पवित्र करने के लिए निरंतर बहती रहती है। धर्मजगत में बहुत सावधान करनेवाला ओर एक शे’र आपके सामने पढ़ूं कि-

जिस दीये में हो तेल खैरात का,
उस दीये को जलाना नहीं चाहिए।
- ज़हूर आलम

धर्मजगत के लिए यह संदेश है। तो माँ अचल है। माँ की ऊंचाई गजब है! माँ का चरित्र धवल है। माँ सुखद और शैत्य से भरी हुई है। और शैलपुत्री होने कारण उनकी ऊंचाई, उनकी करुणा हमें इर्द-गिर्द घूमने के लिए मजबूर करती है, तुम परिकम्मा करो। तुम चारों और से देखो। मेरे लिए तो ‘रामचरित मानस’ ही माँ है। तुलसीदासजी ने स्पष्ट लिखा है-

कलिमल हरनि बिषय रस फीकी।
सुभग सिंगार मुक्ति जुबती की।
दलन रोग भव मूरि अमी की।
तात मात सब बिधि तुलसी की।
आरति श्रीरामायनजी की।

गोस्वामीजी कहते हैं, आदमी में रहे हुए सद्‌गुण, अच्छे संस्कार, सद्‌गुणरूपी देवताओं को जन्म देनेवाली यह ‘रामचरित’ मैया देवमाता है, देवजननी है। इसलिए जब ‘मातृदेवो भव’ इस कथा का विषय माँ की कृपा से निश्चित कर रहा हूं तब हम ‘गीता’ को भी माँ कहते हैं। हम गंगा को भी माँ कहते हैं। हम गायत्री को भी माँ कहते हैं। हम पृथ्वी को भी माँ कहते हैं। अब तो नौ दिन हमारे पास है। माँ की कृपा से, गुरु की कृपा से बातें संवाद के रूप में चलेगी। इक्कीस रूप में, उसमें नव तो मुख्य है, बाकी इक्कीस रूप में बिलग-बिलग संज्ञा में माँ के रूप हररोज हमें मिलने आते हैं। हम दरवाजा बंद कर के बैठे हैं! इच्छा तो है, मैं तुम्हे ग़ज़ल सुनाउं, गली में मैं फिरा, किसी के मकान की बारी खूली नहीं थी-

राशिद किसे सुनाउं गली में तेरी ग़ज़ल,
उनके मकां का कोई दरीचा खुला न था।

इक्कीस-इक्कीस रूप में माँ हमारे आसपास घूमती है। हमारे देश की, हमारे ऋषिमुनियों की जो परंपरा है, कोई संकीर्णता से न स्वीकारे तो उसको कौन समझाये? लेकिन ये वैश्विक विचारधारा है उसमें खिड़कियां खूली रखो। हम क्यों माँ की कृपा महसूस नहीं कर सकते? अद्‌भुत काम किया भारत के ऋषिमुनियों ने कि भगवान शिव जगत के पिता है लेकिन पिता के लिए हमने हमारी संस्कृति में एक रात्रि निश्चित की है और उनका नाम है शिवरात्रि। लेकिन माँ के लिए हमने नव रात्रि का आयोजन किया और उसको हम नवरात्रि कहते हैं। यही प्रमाण है कि माँ कितनी महान है, कितनी विशाल है और कितनी उदार है। तो ‘मानस-मातृदेवो भव’ लेकर हम संवाद करेंगे।

मेरे भाई-बहन, पहले दिन सद्‌ग्रंथ का परिचय दिया जाता है। और ‘रामचरित मानस’ का परिचय मैं क्या दूं? विश्व वंदनीय गांधीबापू, जिसकी कल जन्मजयंती है, दो अक्टुबर, जिसको पूरी दुनिया अहिंसादिन के रूप में मनाती है और मैं आप से यह भी निवेदन करनेवाला हूं कि पूरे भारत में स्वच्छता अभियान चल रहा है। हम भी यहां आए हैं, तो हम भी स्वच्छता का ध्यान रखे। आप सब बाहर से आए हैं, हम भी आए हैं, यहां के भाई-बहन जो भी हैं, आप यहां माँ की कृपा से विश्राम में रहिएगा लेकिन वातावरण अस्वच्छ न बने। स्वच्छता अभियान में भी सहयोग करे। सरकार ने जब से स्वच्छता अभियान छेड़ा, बहुत अच्छा मिशन है। लेकिन मैं कहता रहता हूं कि मैं करीब पचपन साल से अंदर का कचरा साफ़ करने का अभियान चला रहा हूं। कम से कम मेरा कचरा साफ़ हो और समाज का कचरा साफ़ हो। आप सब सावधानी से, प्रसन्नतापूर्वक घूमे-फिरे लेकिन विश्राम में रहे और अपना ध्यान खुद आप रखे।

पहले दिन जो ग्रंथ महिमा की बात होती है। यद्यपि ‘रामचरित मानस’ में गोस्वामी तुलसीदासजी ने ग्रंथ का परिचय दिया है। उसके रूप में बिलग माहात्म्य प्रकरण नहीं लिखा। मुझे तो इतना ही कहना है, गांधीबापू ने कहा कि जिसको ‘रामायण’ और ‘महाभारत’ का ख्याल नहीं वो अपने को हिन्दुस्तानी कैसे कहला सकते हैं? तो इस देश में तो कहना नहीं पड़ता कि ‘रामायण’ क्या है? ‘महाभारत’ क्या है? पवित्र ग्रंथों में क्या है? फिर भी वाणी पवित्र करने के लिए तुलसीदासजी ने ‘रामचरित मानस’ को सात सोपान में विभाजित किया है। तुलसीदासजी ने ‘कांड’ शब्द का प्रयोग नहीं किया है, वाल्मीकिजी ने किया है। मूलतः तुलसी ने ‘सोपान’ शब्द का प्रयोग किया है। सात सोपानों की सीढ़ी है जो आदमी को उपर लिये चलती है। लेकिन मेरी व्यासपीठ राजी नहीं कि आदमी यहां से उपर चढ़ जाए। अच्छा है, सलाम, प्रणाम, दंडवत्। लेकिन उसकी परिक्रमा तो तभी करनी चाहिए कि उपर जाकर फिर अपनी जनता के लिए नीचे आए। यह सीढ़ी दोनों काम करेगी। आप उपर भी जाए और कमाई कर के साधना की, अनुभूति की, बंदगी की नीचे आकर इस साधना का प्रसाद सब को बांटे। इसलिए गोस्वामीजी ने ‘सोपान’ शब्द रखा है।

प्रथम सोपान ‘बालकांड।’ उसका मंगलाचरण जब गोस्वामीजी ने किया तब सात मंत्रों में संस्कृत वाङ्‌मय में मंगलाचरण किया। उस समय तुलसी पर आक्षेप हुआ कि तुलसीदासजी को संस्कृत नहीं आता था! मैं कोई वर्णवाद की बात नहीं करता लेकिन आप सोचिए, तुलीदासजी एक पवित्र ब्राह्मण कुल में जन्मे थे। उसको संस्कृत न आता हो यह मानना मुश्किल है। और कितना समय वो बनारस में रहे? तुलसीदासजी का पूरा ज्ञान संस्कृत में रहा लेकिन तुलसी ने हम पर करुणा कर के मंत्रों में संस्कृत का उपयोग किया उसके बाद ग्राम्यगिरा में, देहाती भाषा में भोजपुरी, अवधी, तरल हिन्दी उसमें पूरे शास्त्र को उतारा क्योंकि पवित्र श्लोक लोक को पवित्र करने के लिए नीचे उतरे। श्लोक तो ओलरेडी पवित्र है, यस। इसलिए तो हमारे शब्दकोश में एक शब्द है ‘पुण्यश्लोक’; ये शब्द हम युझ करते हैं। श्लोक तो पवित्र है लेकिन उसको लोक तक पहुंचाने के लिए सात मंत्रों के बाद तुलसीदासजी स्वयं लोकबोली में उतर आए। जितने भी विशेष प्रकार के बुद्धपुरुष हुए हैं हमारी भूमि पर वो सब लोकबोली में ही बोले हैं। चाहे बुद्ध को देखो, महावीर को देखो, जिसस को देखो, पयगंबरसाहब को देखो। सब अपनी-अपनी देहाती बोली में बोले हैं। और कबीर तो बिलकुल साधुकडी में बोले हैं। तुलसी ने लोकबोली में शास्त्र रचने का शिवसंकल्प किया। लेकिन इसमें पहले सात मंत्रों में मंगलाचरण किया। एक-दो मंत्र का मनन कर लें-

वर्णानामर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि।
मङ्गलानां च कर्त्तारौ वन्दे वाणीविनायकौ।।
भवानीशंङ्करौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ ।
याभ्यां विना न पश्यंति सिद्धाः स्वान्तःस्थमीश्वरम् ।।

कुल सात मंत्र लिखे हैं। संतों ने उसके पर भी अपने-अपने विचार प्रगट किये हैं। सात मंत्र गोस्वामीजी ने प्रारंभ में इसलिए लिखे हैं कि यह सात सोपान का शास्त्र है। मानो एक-एक मंत्र, एक-एक सोपान का प्रतिनिधत्व कर रहा है। यह जरा भी शास्त्र का अर्थवाद नहीं है। अतिशयोक्ति नहीं है। ‘रामायण’ की गहराई में जो गये हैं। गुजराती में पंक्ति है-

अमे तो समंदर उलेच्यो छे प्यारा!
नथी मात्र छबछबियां कीधां किनारे।
मळी छे अमोने जगा मोतीओमां
तमोने फक्त बुद्‌बुदा ओळखे छे।
-शून्य पालनपुरी

किनारे की बात नहीं है-

इस राज़ को क्या जाने साहिल के तमाशाई।
हमने डूब के जाना है सागर तेरी गहराई।

जिस महापुरुष ने इसमें गोता लगाया है उसने सात मंत्रों के बारे में अपने-अपने विचार प्रस्तुत किये हैं। एक, सात सोपानों का प्रतिनिधित्व करता है। दूसरा, हमारे यहां सात आसमान है और सात पाताल है, यानी ‘रामचरित मानस’ चौदह ब्रह्मांडीय ग्रंथ है। वो सात आसमान तक उड़ान भर सकता है और सात पाताल तक गुरुकृपा से उसमें गोता भी लगा सकते हैं। एक संत कहते हैं कि हमारे यहां सात समुद्र की मान्यता है वो सप्तसिंधु है। ‘रामचरित मानस’ सप्तसिंधु है। एक चौथा विचार एक साधु का कि संगीत के सूर सात है; ‘रामचरित मानस’ सूरमय शास्त्र है। शास्त्रीय संगीतज्ञ है वो ‘मानस’ की कोई भी चौपाई, कोई भी छंद, किसी भी शास्त्रीय राग में गा सकते हैं। लोकढाळ में भी गा सकते हैं। सुगम संगीत में गा सकते हैं। कभी-कभी गुरुकृपा से हम प्रयोग करते रहते हैं कि यह राग में गाये, उसमें गाये, उसमें गाये। सात सूरों का यह शास्त्र है।

गोस्वामीजी ने सब से पहले वाणी और विनायक की स्तुति की है। वाणी एक देवी है, वाणी एक माता है। हमारे पूर्वजों ने कहा है, हमें अंधेरों से उजालों की तरफ ले जाओ, हमें प्रकाश में दीक्षित करो। हम अमृत के पुत्र हैं। हम मरणधर्मा नहीं है, हम जीवनधर्मा है। इसकी ओर लिए चल। तो बाप! उजाले की तरफ़ जाना। हम मनुष्य है,

कमियां होती है। जब कमियां की बात आती है तो दीक्षित दनकौरी का शे'र याद आता है-

या तो कुबूल कर मेरी कमज़ोरियों के साथ,
या छोड़ दे मुझे मेरी तनहाईयों के साथ।
लाज़िम नहीं कि हर कोई हो कामयाब ही,
जीना भी सीख लीजिए नाकामियों के साथ।

हे परमात्मा, मुझे यदि कुबूल करना है तो मेरी कमजोरियों के साथ कुबूल कर। जीव है, हम संसारी है, कमजोरियां होती है। इस सत्य को कुबूल करना चाहिए। तो बाप! जितनी सावधानी हमारे जीव भाव में रहे। प्रकाश में रहने का संकल्प यह सूर्यपूजा है। शिवपूजा, भगवान शिव का अभिषेक करे, उसका स्तोत्र गायन करे ये तो महिमावंत है अवश्य लेकिन शिव का अर्थ है कल्याण। 'सर्वे भवन्तु सुखिन:।' सब का कल्याण हो यह भावना से हम जीए तो रोज हम रुद्राभिषेक कर रहे हैं। और पांचवां विष्णु। विष्णु का अर्थ होता है व्यापकता। हम हृदय की विशालता में जीए, संकीर्णता में नहीं। ये हो गई विष्णुपूजा। हम हमारे धर्म के अनुसार तो करते रहते हैं लेकिन तात्त्विक रूप में उसको लेना मुझे आवश्यक लगता है। उसके बाद तुलसीदासजी ने 'रामचरित मानस' में पहला प्रकरण लिखा वो गुरुवंदना है।

बंदउँ गुरु पद कंज कृपा सिंधु नररूप हरि।
महामोह तम पुंज जासु बचन रबि कर निकर।।

गुरुवंदना से 'रामचरित मानस' का चौपाइयों से प्रारंभ होता है। सब की अपनी रुचि, अपना-अपना निर्णय मुबारक। कई लोग कहते हैं, गुरु की कोई जरूरत नहीं। हम वाय-वाया क्यों जाए? डायरेक्ट जाए। कभी-कभी महापुरुषों ने गुरु को एजन्ट भी कह दिया है, दलाल भी कह दिया है! लेकिन हमारे यहां प्रवाही परंपरा की एक अपनी पहचान है। हम जैसों के लिए कोई मार्गदर्शक चाहिए, कोई गाईड चाहिए। कोई करुणा कर के, दीप जला के हमारे हाथ में दे दे और फिर कहे, 'अप्पदीपो भव।' अपना दीया अब तू खुद बन। लेकिन कोई जलाकर दे। ये जलाकर देनेवाला ये जो माध्यम है और जलाकर जो हट जाता है, परम की प्राप्ति में बाधा नहीं बनता। ऐसा कोई जो हमें बंधन में न डालें। एक-दो पंक्ति जहां से 'मानस' चौपाईयों से शुरू होता है-

बंदऊँ गुरु पद पदुम परागा।
सुरुचि सुबास सरस अनुरागा।।

गुरवंदना, गुरुमहिमा का पहला प्रकरण तुलसी ने दिया है। गुरु के चरण कमल है। यह बहुत प्यारा शब्द है। किस गुरु के चरण के पीछे हम चलें? जिसके चरण कमल हो। कमल का एक बहुत प्यारा गुण है असंग। जिसके चरण असंग है, निर्लेप है, निर्लोभ है, निर्व्यय है, निष्पक्ष है। जिसकी यात्रा केवल और केवल अहेतु हो, निर्लोभ कदम उठे हो, किसी के प्रति द्वेष नहीं। ऐसे भाव से जिसके कदम उठे ऐसे गुरु के चरण जो असंग है उसको मैं वंदना करता हूं। फिर कहा कि गुरुचरण की रज को मैं प्रणाम करता हूं। रज मानी आखिरी अंश। गुरु का समग्र जीवन जो हमें बोध देता है उसका छोटा-सा अंशमात्र भी हमारे जीवन में हम उतार सके तो एक बहुत बड़ी तात्त्विक पूजा हो जाएगी। फिर तीसरी बात लिखी, गुरुचरण के नख की जोति। गोस्वामीजी कहते हैं, असंग गुरु के चरण की ज्योति को देखना नहीं, सुमिरन करने से उसमें दिव्य चेतना प्रगट हो जाती है।

और ऐसे गुरु की थोड़ी मात्रा में भी कृपा प्राप्त कर के मैं 'रामचरित मानस' का वर्णन करने जा रहा हूं। मेरे नेत्रों को पवित्र कर के पहले नयन शुद्ध करूं, बाद में बचन बोलूं ऐसा कहकर कथा का प्रारंभ होता है।

मेरे भाई-बहन, गुरुकृपा से विवेक दृष्टि प्राप्त हो गई। तुलसी को पूरा जगत राममय लगने लगा। सब की वंदना की- असुरों की, खलों की, सठों की, देवताओं की, दानवों की, जड़ की, चेतन की, नर-नारी और आखिर में प्रसिद्ध पंक्ति लिख दी-

सीयराम मय सब जग जानी।
करऊँ प्रनाम जोरि जुग पानी।।

पूरे संसार को सीताराममय समझकर पूरे जगत को गोस्वामीजी कहते हैं, मैं प्रणाम करता हूं, 'सर्व खलु इदं ब्रह्म।' उपनिषद का मानो सीधा उतारा हो रहा है। गुरुकृपा से विवेकदृष्टि प्राप्त हो गई, पूरा जगत राममय हो गया। पूरे जगत को मैं प्रणाम करता हूं। फिर वो ब्राह्मणों की वंदना करते हैं। पृथ्वी के देवताओं की वंदना करते हैं। साधुसमाज की वंदना करते हैं। खलों की वंदना करते हैं। सब की वंदना करते-करते 'रामचरित मानस' के मुख्य-मुख्य पात्र जो है, वंदना के बहाने इन पात्रों का परिचय तुलसीजी करवाते हैं। इसमें कौशल्याजी की वंदना; महाराज दशरथजी की वंदना; मिथिलेश जनक की वंदना; लक्ष्मण की वंदना; भरत की वंदना; शत्रुघ्न की वंदना। और फिर सीताराम की वंदना करते हैं। लेकिन बीच में तुलसीजी हनुमंत वंदना करते हैं-

महाबीर बिनवउँ हनुमाना।
राम जासु जस आप बखाना।।

मेरे भाई-बहन, हनुमानजी शंकरावतार है। कोई हनुमानजी को न माने तो कोई गिला नहीं लेकिन मैं 'हनुमान को नहीं मानता' ऐसा कहने के लिए आदमी जीवित होना चाहिए। और जीवित होने के लिए प्राणवायु लेना पड़ता है। और प्राणवायु हनुमान है। हनुमंत तत्त्व को नकारने के लिए भी हनुमान चाहिए। हमारे शरीर में पांच प्राण है, ऐसे 'रामचरित मानस' के सीता, सुग्रीव, लक्ष्मण, भरत और बंदर-भालू, उसको पांच प्राण माने गये हैं। ये पांच प्राणों की रक्षा हनुमानजी ने की है।

मेरी व्यक्तिगत दृष्टि में हनुमंतवंदना प्राणतत्त्व वंदना है; प्राणबल का आह्वान है; प्राणशक्ति को जागृत करने की एक विधा है। और हनुमानजी की वंदना, हनुमानजी की स्तुति भाई-बहन कोई भी कर सकते हैं। मुझे पता नहीं कि किसने यह सूत्र लगा दिया कि हनुमानजी की पूजा बहनलोग नहीं कर सकते हैं! कोई विशेष अनुष्ठान हो तो बात ओर है बाकी हनुमानजी तो सब के हैं। सब में निवास करते हैं, पवन के रूप में, श्वास के रूप में। 'रामचरित मानस' में तो स्पष्ट लिखा है कि हनुमानजी जब रावण पर विजय के बाद सीताजी को अशोकवाटिका में खबर देने गये कि माँ, राम विजय हुआ। तब लंका की राक्षसियां हनुमानजी की पूजा करने लगी। तो मैं कहता रहता हूं, राक्षसियों को भी पूजा का अधिकार हो तो मेरे देश की बहन-बेटियों को अधिकार क्यों नहीं? हनुमान की वंदना कोई भी कर सके। 'हनुमानचालीसा' कोई भी कर सकता है। हनुमानजी की वंदना बहुत आवश्यक है। गोस्वामी ने हनुमानजी की वंदना की। 'विनयपत्रिका' में हनुमानजी की वंदना करते हुए छोटी-सी पंक्ति में लिखा है, उसका हम गायन करेंगे-

सकल-अमंगल-मूल-निकंदन।
मंगल-मूरति मारुत-नंदन।।
पवनतनय संतन-हितकारी।
हृदय बिराजत अवध-बिहारी।।

हमारे शास्त्रों में 'माँ' शब्द समझाने के लिए इक्कीस शब्दों का प्रयोग किया है। माँ के पर्याय, माँ के सगोत्री शब्द इक्कीस है। माँ छोटी नहीं हो सकती। माँ सीमा में बाध्य नहीं हो सकती। माँ और मातृत्व आकाश की तरह उदार और असीम होते हैं। किसी के पास यह धर्म है। किसी के पास यह धर्म है। किसी के पास कोई धर्म नहीं है। कोई इसको माने, कोई उसको माने, कोई किसी को भी न माने। सब की अपनी निजता है लेकिन प्रत्येक घर में माँ तो होती ही है। बिना माँ हम नहीं होते। इसलिए माँ का अर्थ आकाश है।

मानस-मातृदेवो भव : २

‘रामचरित मानस’ ही सत्य, प्रेम, करुणा का प्रत्यक्ष परिचय है

बाप! कल भी मैंने स्मरण किया था। आज दो अक्टुबर, विश्ववंद्य महात्मा गांधीबापू की जन्मजयंती। मन ही मन जम्मु-कश्मीर की इस भूमि पर बैठकर पोरबंदर के कीर्ति मंदिर के छोटे-से कमरे को मैं यहां से प्रणाम करता हूं। दिल्ही में जहां गांधीबापू को प्रार्थना के पूर्व गोली मारी गई उस स्थान को भी मन ही मन प्रणाम करता हूं। और जहां राजघाट पर दिल्ही में महात्मा गांधीबापू समाधि में सोये नहीं है लेकिन जाग रहे हैं, जहां से राष्ट्र की गतिविधियां देख रहे हैं, ऐसे महात्मा की चेतना को व्यासपीठ से और मेरे असंख्य श्रोता भाई-बहनों सब को साथ लेकर आज हम सब बापू की जन्मजयंती के अवसर पर हमारी श्रद्धा समर्पित करें और एक मिनट के लिए-

रघुपति राघव राजाराम पतित पावन सीताराम।
ईश्वर अल्लाह तेरे नाम सब को सन्मति दे भगवान।

और बाप! साथ-साथ कद में वामन लेकिन राष्ट्र के लिए विराट विचार प्रदान करनेवाले ‘जय जवान-जय किसान’ का नारा देनेवाले लालबहादुर शास्त्री, जो एक समय में हमारे प्रधानमंत्री रहे, हम सब मिलकर उनकी चेतना को भी आज प्रणाम करें और अपनी श्रद्धा समर्पित करें। साथ-साथ आप जानते हैं, जो-जो प्रवृत्ति हो, चाहे व्यक्ति के द्वारा, परिवार के द्वारा, समाज के द्वारा, राज्य के द्वारा, राष्ट्र के द्वारा और समग्र पृथ्वी के द्वारा जो-जो प्रवृत्ति होती हो, कल्याणकारी प्रवृत्तियां होती हो उसके साथ मेरी व्यासपीठ सदैव एक प्रामाणिक डिस्टन्स रखकर जुड़ी रहती है इसलिए स्वच्छता अभियान चल रहा है उसके लिए भी हम सहयोग करें। अपना आंगन, अपनी गली और पूरे राष्ट्र को स्वच्छ रखें। आदमी अंदर से तो पवित्र है आत्मा के रूप में, बाहर से स्वच्छ भी बहुत दिखता है लेकिन कुछ कमी तो हैं; उसको हम निवारें। स्वच्छता अभियान को भी हम सफल करें। ‘सर्व जन हिताय, सर्व जन सुखाय।’ यह कहूंगा।

नव दिवसीय कथा में माँ के अंक में बैठकर जो विषय चुना गया है, जो केन्द्रीय विषय है इस कथा का ‘मातृदेवो भव।’ उसकी कुछ कथा के माध्यम से सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा करें उसमें मैं प्रवेश करूं उससे पूर्व कुछ प्रश्न है मेरे पास। ‘बापू, आप जूनागढ में रूखड पर एक कथा कर चुके हैं। यह जो रूखड है वो कोई उपनाम हैं या फिर एक अवस्था का नाम रूखड है? क्या कोई भी व्यक्ति अपने नाम के आगे रूखड लिख सकता है?’ यद्यपि एक व्यक्ति का नाम जरूर है, जो गुजराती शायर झवेरचंद मेघाणी ने उस पर प्रकाश डाला और हमारे समर्थ कवि, विचारक, तंत्री क्या नहीं थे वो, हरीन्द्रभाई दवे ने भी अपना भाष्य प्रस्तुत किया रूखड पर। जूनागढ में वैसे तो एक ज्ञाति से आया था वो लेकिन पा गया था परम को और अवधूती दशा थी उसकी। इसलिए उसको रूखड कहते हैं। ये नाम तो है, मान लो है। लेकिन मेरी दृष्टि से व्यक्ति से भी एक अवस्था का नाम है। एक स्थिति का नाम रूखड है। आपने लिखा हमारे नाम के आगे-पीछे रूखड लगा सकते हैं? आपकी अवस्था हो तो जरूर लगा सकते हैं। आपकी अवस्था हो और मुझे बताओ, मैं अपनी तलगाजरडी आंख से देखूं और मुझे उसमें रूखडत्व दिखाई दे तो जरूर मैं आपको कहूं। मुझे उसमें क्या आपत्ति हैं? दुनिया में दो हो जाए, एक रूखड और एक सुखड। रूखड समझा नहीं जाता। सुखड समझा जाता हैं। रूखड एक अवस्था, एक अनुभूति, एक अद्‌भुती है। मैं पूरे देश में से एक रूखड का लिस्ट बना रहा हूं। मेरी आंखों से, मेरी नज़र में रूखड कौन-कौन है? परमात्मा मदद करे, माँ की कृपा हो तो मुझे एक सौ आठ रूखड ढूंढने हैं। देश-विदेश में कहीं भी मिले। मेरी दृष्टि में सोक्रेटिस रूखड है। मेरी दृष्टि में जलालुद्दीन रूमी रूखड है। मेरी दृष्टि में खलील जिब्रान रूखड है। वहां कोई भाषा, देश, कोम का भेद नहीं होगा। बहुत है जूनागढ में। एक रूखड नामक वृक्ष भी है जिसको रूखड कहते हैं। वहां लोग अपनी श्रद्धा समर्पित करते हैं। भजन कहो, लोकगीत कहो; मेघाणीभाई ने भी प्रकाशित किया है अपने पुस्तक में रूखड के बारे में।

रूखड़ बावा तुं हळवो हळवो हाल्य जो,
गरवाने माथे रे रूखड़ियो झळुंबियो।

मेरी दृष्टि में गांधीबापू रूखड है। आज तो उनका खास स्मरण करना चाहिए। मेरी दृष्टि में जूनागढ का नरसिंह मेहता रूखड है। साधक की भीतरी स्थिति का नाम रूखड है।

एक ओर जिज्ञासा है, ‘‘बापू, बचपन से माँ ने एक ही ‘जय माता दी’ बोलना सिखाया है। हमारे घर में एक वैष्णवदेवी माँ की ही तसवीर लगी रहती है। ससुराल में आई तो वहां घर के मंदिर में सभी भगवान की तसवीरें थी। एक बार मेरे ससुरजी ने नारायणजी का व्रत कर के नारायणजी को भोग लगाने को कहा, तो मैंने कहा कि इनमें से नारायण भगवान कौन है? तब ससुर बोले, बेटी, जिनके चार हाथ होते हैं वो नारायण है। बापू, मैं यह कहना चाहती हूं कि मुझे अपनी मातारानी के सिवाय कोई भगवान नहीं दिखते। वैसे तो राम-सीता, राधा-कृष्ण, शिव-पार्वती लेकिन जब भी मैं मंदिर जाउं तो मैं अपनी माँ को ही ढूंढती रहती हूं। माँ को देख के ही मेरी आंख आंसूओं से छलक जाती है। जब से मैं कथा सुन रही हूं, राम-सीता, राधा-कृष्ण, शिव-पार्वती को श्रद्धा से पूजती हूं। ‘ॐ नम:शिवाय’ और रामनाम का महामंत्र भी जपती हूं। बापू, जैसे भी मुझे खतरे का आभास होता है या जब भी मुझे चोट लगती है, मेरे मुंह से ‘जय माता दी’ ही निकलता है। बापू, मैं क्या-क्या करूं? ‘जय मातादी’ को ही पकड़ रखूं?’’ बहनजी, मेरा बिलकुल छोटा-सा जवाब है, अपनी माता को ही पकड़ रखिए। जो तुम्हारे आत्मा तक पहुंचा हुआ ‘जय माता दी’ मंत्र है, शब्दब्रह्म है उसको ही पकड़ रखिए। प्रणाम सब को करो, समर्पण एक को ही करो। ‘हनुमानचालीसा’ में लिखा है, ‘ओर देवता चित्त न धरई। हनुमंत सेई सर्व सुख करई।’ मैं तो वहां तक कहूं, आपकी श्रद्धा को कोई विचलित करने की कोशिश करे लेकिन आपकी श्रद्धा जहां हो वहां से हटाना नहीं। आपको अनुभव हो रहा है, फ़ायदा हुआ है तो उसमें ही लगे रहिए।

‘सत्य, प्रेम, करुणा तीनों परस्पर है?’ मैं इतना ही कहूंगा मेरी जिम्मेवारी के साथ। सत्यपूर्ण जीवन का नाम राम है। सत्य वो ही परमेश्वर। शब्द याद रखिएगा। सत्यपूर्ण जीवन राम है। प्रेमपूर्ण जीवन चरित है। करुणामय जीवन ही ‘मानस’ है। मेरी दृष्टि में ‘रामचरित मानस’ ही सत्य, प्रेम, करुणा का प्रत्यक्ष परिचय है। जिसमें प्रेम होगा उसका जीवन आचरणीय होगा, अनुकरणीय होगा, अनुसरणीय होगा। प्रेम हिंसा नहीं करता। प्रेम कुरबानी देता है। प्रेम बलिदान देता है। प्रेम वचनात्मक नहीं होता, रचनात्मक

होता है। केवल बोली में प्रेम नहीं होता। नारद तो 'भक्तिसूत्र' में कहते हैं, जैसे गूंगा व्यक्ति वस्तु का स्वाद नहीं बता सकता, मन ही मन मुस्कुराता है वैसे प्रेम की व्याख्या नहीं हो पाती। ये चरित्र में दिखा सकता है। आदमी का प्रेमपूर्ण व्यवहार पहचान लिया जाता है। सत्य, प्रेम, करुणा 'रामचरित मानस' का पर्याय है। उसका सगोत्री शब्द है।

आइए, अब 'मानस-मातृदेवो भव' में उसकी विशेष चर्चा के लिए आगे बढ़ें।

जगत मातु सर्बग्य भवानी। मातु सुखद बोलीं मृदु बानी।
पारबती भल अवसरु जानी। गईं संभु पहिं मातु भवानी।।

इन पंक्तियों के आधार पर दुर्गापूजा के अनुष्ठानीय दिनों में माँ के दरबार में माँ के सामने तोतली बोली में हम संवाद कर रहे हैं। जो पंक्ति उठाई गई है उसमें 'जगत मातु सर्बग्य भवानी।' पहला जो शब्द है माँ के लिए वो है 'जगत मातु।' हे माँ, हे भवानी, हे पराम्बा, तू जगत की माँ है। शास्त्र कहता है, जगत बनता है पांच तत्त्वों से। यह पूरा जगत जो हमारा दृश्य बना है वो मूल में पांच तत्त्वों से बना है-पृथ्वी, जल, वायु, आकाश और तेज। हमारे पिंड से लेकर ब्रह्मांड तक यह पूरा जगत पांच तत्त्वों का संयुक्त दृश्य है। यह पांच तत्त्वों से बना जगत उसकी माँ, उसकी जननी माँ पार्वती है। अब आप उसका वर्गीकरण करें।

मैं आप से यह भी निवेदन करूं कि 'माँ' शब्द यहां बहुत परम अर्थ में हैं। यहां जब 'माँ' शब्द बोला जाए तो माँ को एक स्त्रीरूप में ही मत देखना। हमारी सांसारिक माताएं, वो भी हमारे लिए देवी हैं लेकिन जिस माँ की चर्चा कथा में है वो केवल स्त्रीधारिणी है वैसा मत समझना। मैंने कई बार कहा, राम तो पुरुषरूप में हैं, नररूप में है। आकार उसका नररूप का है लेकिन तुलसीदासजी 'उत्तरकांड' में लिखते हैं, राम अनेक दुर्गा का समन्वित रूप है। 'दुर्गा कोटि अमित अरि मर्दन।' कई रूप में माँ है तो पुरुष और स्त्री का वहां भेद नहीं होता। उपासना पद्धति में जरूर हम मातृशरीर की वंदना करते हैं। लेकिन वहां कृष्ण भी माँ है। आखिर में नारायण भी माँ है। राम भी माँ हैं। यह परम रूप में यहां भेद नहीं है। यह पांचों तत्त्वों से बनी पृथ्वी की जननी है परमतत्त्व, पराम्बा माँ।

एक-एक तत्त्व को आप उठाइए। पृथ्वी की प्रसूता जगत मातु भवानी है। वैज्ञानिक रूप में पृथ्वी सूरज से बिलग हुई है और फिर घूम रही है। और सूरज कहां से पैदा हुआ? एक महाकाश, एक महा गेप, एक खालीपन, उसमें से सूरज निकलता है। तो वैज्ञानिक रीत से भी सिद्ध होता है कि तेज की माता भवानी है। जलतत्त्व की माता भवानी है। आकाश तत्त्व की माता भवानी है। और वायुतत्त्व की माता भी भवानी है। इसलिए जानकीजी 'रामचरित मानस' में गौरीपूजा में जब स्तुति करती है तब यह पंक्ति आप जानते हैं-

जय जय गिरिबरराज किसोरी।
जय महेस मुख चंद चकोरी।।

तुलसी कहते हैं, जगतजननी दामिनी दुति गाता है। हे गणेश और कार्तिकेय की माता; गणेश का अर्थ मैंने कल भी किया विनय-विवेक। और तुलसीदासजी कार्तिकेय का तात्त्विक अर्थ करते हैं पुरुषार्थ। सच्चा पुरुषार्थ और विवेक दो भाई है। कई लोग मेरे पास आते हैं, कहते हैं, बापू, हम इतना पुरुषार्थ करते हैं पर परिणाम नहीं आता! परिणाम आएगा या नहीं आएगा, मैं वादा नहीं कर सकता लेकिन एक प्रयोग करो, विवेक को साथ में रखकर पुरुषार्थ करो। विवेक मंगलमूर्ति है। उसका परिणाम शुभ आता है। विवेक हो या पुरुषार्थ उसकी माँ भी तू है। कार्तिकेय और गणेश की माँ। और आखिर में कहा, 'जगत जननी।' सृष्टि की जन्मदात्री, पालन करनेवाली और समय पर संहार करनेवाली हे माँ, तू ही तो है। तेरा न आदि है, तेरा न मध्य है, तेरा न अंत है। ऐसी तू जगत माँ है। जिसके दरबार में हम बैठकर 'मानस' के आधार पर मातृत्व की चर्चा करते हैं। उसका पहला लक्षण है, वो जगत मातु तत्त्व है। अनेक ब्रह्मांड उसके उदर में निवास करते हैं। अनेक आकाश उसके उदर में निवास करते हैं। ऐसी हैं माँ।

दूसरा शब्दब्रह्म जो आया 'सर्वग्य।' हे माँ, तू सर्वग्य है। तलगाजरडी दृष्टिकोण में इसका मैं छः विभाग करना चाहूंगा। मेरी जिम्मेवारी से यहां मैं मेरी बात कहता हूं। 'मैं' अहम्ता का प्रतीक है, मैं जानता हूं लेकिन शब्द का उपयोग करना पड़ता है। इनको कोई अन्यथा न ले कि बापू 'मैं-मैं' कर रहे हैं! जो कुछ कहा जाए उसकी जिम्मेवारी मेरी है। यह बात कभी शास्त्रों में न भी मिले तो आप मुझे कह सकते हैं, बापू, यह कहीं से मिला नहीं। इसलिए मैं कहता हूं यह मेरी जिम्मेवारी है। यहां कोई अहम् की बात नहीं है। हमारा नरसिंह मेहता हमें सिखा गया है। हम तो रूखड की परंपरा में है। नरसिंह ने गाया-

'हुं करुं, हुं करुं' ए ज अज्ञानता,
शकटनो भार ज्यम श्वान ताणे।

आपकी दुआ से, थोड़ी सभानता से बोल रहा हूं। मेरी जहां तक सावधानी है मैं इसी रूप में कह रहा हूं। तलगाजरडी दृष्टि में जागृति के छः पडाव है। ज्ञान यानी जानना। यहां शब्द आ रहे हैं 'सर्वग्य।' हे पराम्बा, हे माँ, तू सर्वज्ञ है लेकिन सर्वज्ञ तक पहुंचने से पहले पांच मुकाम होते हैं ऐसा मुझे गुरु की कृपा से समझ में आया है।

हमारे 'भागवत' जगत के बहुत बड़े ब्रह्मलीन डोंगरेबापा। वो बार-बार 'सावधान' शब्द का प्रयोग करते हैं, 'शुकदेवजी सावधान करते हैं।' मैं जो कहता हूं ना कि ये योग जो है उसको गुफाओं से निकालकर मेदान में लाये हैं रामदेव बाबा। कई महापुरुषों का योगदान है। योग तो पहले से चल रहा है लेकिन ग्रंथ और गुफा में से बाहर लाये हैं। वैसे मुझे कहना चाहिए कि भागवती कथा कमरे में होती थी। पाटला पारायण होती थी उसको नगर के चौक में लानेवाले कई महापुरुष, इनमें यह प्रथम पंक्ति में नाम है वो डोंगरेबापा कथा को मेदान में लाये। ऐसे ही एक 'भागवत' की परम कथा कहनेवाले और पुष्टिमार्ग की आचार्य, जिसने पुष्टिमार्ग का देश और विदेश में बहुत सुचारु रूप में वल्लभ परंपरा को प्रसिद्ध किया ऐसी जीजी, परम वंदनीया इन्दिरा बेटीजी हमारे बीच में नहीं रहे हैं। व्यासपीठ से आप सब को साथ में लिये हुए मैं उसको भी अपनी श्रद्धांजलि समर्पित करता हूं। एक मिनट के लिए गायन कर लें।

श्री वल्लभ विठ्ठल गिरधारी। यमुनाजी की बलिहारी।

तो बाप! सर्वज्ञ है भवानी। उसके आगे पांच पडाव है। एक शब्द है हमारे यहां, 'मानस' में भी है 'अग्य'; बिलकुल अज्ञानी। कुछ भी जानकारी नहीं। नितांत अज्ञानता।

खोजई सो कि अग्य इव नारी।
ग्यानधाम श्रीपति असुरारी।।

पार्वती विचार कर रही है सती के प्रसंग में। भगवान राम जानकी के वियोग में लीला कर रहे हैं, रो रहे हैं तब सती को मन में होता है कि यह तो ज्ञानधाम है। परमात्मा तो ज्ञान के धाम है। वो एक अज्ञानी की तरह सीता को खोज रहे हैं, सीता कहां गई? सीता कहां गई? यह तो रो रहे हैं! यह तो बिलकुल मूढ है! 'अग्य' शब्द 'मानस' में उठाया तो एक पडाव मुझे लगता है अज्ञानता। मेरे भाई-बहन, सत बोलो, वर्ना मत बोलो। जीवन में आदमी जितना कम बोलता है, शारीरिक शक्ति भी बढ़ती है, आंतरिक ऊर्जा भी विशेष रूप में विकसती है। इसलिए हमारे यहां मौन की बड़ी महिमा हैं। और अध्यात्म फायदें छोड़ो। मौन रहने से चूकें कम होती है; झूठ कम बोला जाता है; किसी को ठेस लगे ऐसे वचन नहीं निकलते। बहुत-से फ़ायदे हैं-

कुदरत को नापसंद है सख्ती जबान में।
इसलिए नहीं रखी हड्डी जबान में।

मेरे भाई-बहन, हम कुछ नहीं जानते, ऐसी ज़ाहिरात करना हमारे फायदे में है। मैं अज्ञ हूं, मैं कुछ नहीं जानता, यह ज़ाहिरात करने जैसी बात है। यह पडाव कुबूल करने जैसा है कि मैं कुछ नहीं जानता। आदमी क्या है, हमारा अहंकार इतना मजबूत हो चुका है कि हम कुछ जानते नहीं और जानते हैं उनकी मानते नहीं! घाटे का सौदा किये जा रहे हैं!

दूसरा पडाव जो समझ में आ रहा है वो है अल्पज्ञ। कई लोग हैं जो थोड़ा-थोड़ा जानते हैं। अल्पज्ञ जिसको कहते हैं। भाई, हम पूरा नहीं जानते लेकिन हमारे पास थोड़ी माहिती है। यह पडाव भी साधक को कुबूल करने जैसा है। कोई कहे कि आपने सब कुछ जान लिया तब एकरार करने जैसी वस्तु है कि थोड़ा जान पाया। आत्मा तक की यात्रा बहुत दूर है।

तीसरा पडाव आता है मेरे साधक भाई-बहन, मेरे श्रावक भाई-बहन, स्वज्ञ। खुद को जानना। स्व को जानना। इसलिए उपनिषद में बात आती है, 'कोऽहम्?' रमण महर्षि पूरी जिंदगी बोलते रहे, 'Who am I?' उसकी अरुणाचल की गुफा का कोना-कोना गुंजता था, 'Who am I?' 'Who am I?' स्व का बोध, स्व की जानकारी। मेरी जिम्मेवारी से मैं विचार पेश कर रहा हूं। हम सर्वज्ञ न बन जाए तो कोई बात नहीं। हम स्वज्ञ बन जाए तो बहुत है। हमें हमारी जानकारी हो। यह सर्वज्ञ बहुत बड़ा खतरा है। यह भवानी के सिवा, राम के सिवा कोई नहीं हो सकता। मैं खोजकर बताउंगा कि 'मानस' में कौन-कौन सर्वज्ञ है? प्रभु सर्वज्ञ समर्थ। राम भी सर्वज्ञ; वशिष्ठजी सर्वज्ञ। स्मृति में आएगा तो मैं आपको कहूंगा। परमपूज्य, प्रातः स्मरणीय, धर्मधुरंधर, विश्वसंत यह सब पहचान नहीं

है। मुझे इतना पता चले कि तलगाजरडा में जन्मा मैं एक मोरारिबापू हूं। मेरे लिए यह पर्याप्त है। आदमी जो विशेषण लगाते हैं! मैं कहता हूं, 'रामकथा' और 'मोरारिबापू' इतना ही रखो ना। लोग समझ जाएंगे कि किसकी कथा है? मुझे मेरी खबर हो। अपनी हैसियत, अपनी औकात, अपनी मर्यादा उसकी आदमी को खबर होनी चाहिए। आदमी अपने को पहचान ले। मैं कौन? मैं कौन? करते-करते कभी ना कभी भीतर से जवाब मिलता है। दूसरों का प्रमाणपत्र नहीं, स्वयं का मिलता है, जिसको शंकराचार्यजी कहते हैं, 'अहं ब्रह्मास्मि।' मैं ब्रह्म हूं। तुलसीदासजी 'सोऽहस्मि' वो शब्दप्रयोग 'उत्तरकांड' में करते हैं। एक अखंड वृत्ति बन जाती है, 'सोहऽस्मि', स्वयं का बोध। अध्यात्म को छोड़िए। बस हम यह है, इतनी खबर रहे तो भी बहुत है। कथा में भी सुनते-सुनते, गाते-गाते कभी न कभी हमें हमारा पता लग जाए। कितने झूठे घराने का पता हम दुनिया को देते हैं! तत्त्वत: हम कहां है? उसको मेरी व्यासपीठ कहती है स्वज्ञ।

चौथा पड़ाव परज्ञ। हममें से कई लोग जो खुद को नहीं जानते, दूसरे को बहुत जानते हैं! हम को पता है नखशिख वो क्या है? उसको तार-तार हम जानते हैं! ऐसा तुम जानो ना तो भी जानने जैसा नहीं है। इससे फ़ायदा नहीं है। इससे नफ़रत पैदा होगी, उपेक्षा पैदा होगी। अच्छा जानते होंगे तो आप उसके वश में हो जाओगे। और उसकी बुराई जानते होंगे तो आप अपराध करने तुल जाएंगे। इससे बेटर है कि दूसरे के बारे में जानने की बहुत कोशिश न करे। दूसरों के बारे में बहुत जानने की चेष्टा न करे, दु:खी हो जाओगे! खुद को संभाले। तो यह चौथा पड़ाव है मेरी समझ में। पांचवां पड़ाव है त्रिकालज्ञ, तीन काल को जाननेवाले। और आखिरी पड़ाव है सर्वज्ञ। दोनों शब्दों का प्रयोग तुलसीजी ने नारद के लिए किया 'मानस' में। त्रिकालज्ञता पचे तो अच्छा है। ना पचे तो बहुत बुरा है। तीनों कालों को जो जाने वो सुखी ही होता है ऐसा मत समझना। त्रिकालज्ञ को एक जगह स्थिर होना मुश्किल है। वो घूमता रहेगा। तीनों काल को जानते हैं, उसका स्थिर होना मुश्किल है इसलिए नारद को हम घूमते हुए पाते हैं। तीनों काल का जानना अच्छा भी है, ठीक भी नहीं है। किसी व्यक्ति का तुम भूतकाल जानो तो अच्छा भूतकाल होगा तो राग होगा। बुरा भूतकाल होगा तो आपके मन में उसके प्रति एक उपेक्षाभाव पैदा होगा। और भविष्य जो जानता है वो भी पहुंचे हुए व्यक्तियों की बात ठीक है लेकिन मुश्किल है।

'रामचरित मानस' में मुझे तीन पात्र मिले जो तीनों काल जानते थे। कोई एक काल को जानता है; कोई दो; कोई तीन। मुझे तो लगता है, कई कालातीत होते हैं। समय से पर। मैं जिम्मेवारी के साथ कहूंगा, 'रामचरित मानस' का रावण भूतकाल को बहुत जानता है। मैंने दिग्पालों के पास मेरी भुजा में समंदर ने जल भरवाया है! मैंने कैलास उठाया! मैंने पूरी पृथ्वी को वश की है! और इस भूतकाल की जानकारी में आदमी वर्तमान को खो देता है हमें सिखावन देने के लिए। मुझे कहने दो, परम वैष्णव रावण का छोटा भाई विभीषण वर्तमान को जानता है। अब जो मेरे सामने बात है वो मैं सुधार लूं बस। मुझे कोई दोष न देना। मैं राम के पास जा रहा हूं। वर्तमानवादी विभीषण है। वर्तमान को उसने जान लिया। गंगासती का हमारे गुजराती में पद है। ऐसे साधु को आप बार-बार प्रणाम करना। प्रणाम का अर्थ है उसके विचारों के सामने झुके रहना।

शीलवंत साधुने वारेवारे नमीए पानबाई,
जेना बदले नहीं व्रतमान रे...

इस भजन में मूल शब्द तो 'व्रतमान' है। दो-तीन संस्करणों में मैंने देखा। गंगासतीमाँ ने तो यही कहा, व्रतमान लेकिन मेरे व्यक्तिगत विचार में मैं गाने में गंगासती की चेतना को क्षमा मांगते कहता हूं, 'जेना बदले नहीं वर्तमान।' जो कायम वर्तमान में जीये। साधु को क्या भूत? क्या भविष्य? साधु को वर्तमान। कायम वर्तमान में जीये। रोज नया हो जिसका जीवन। महामुनि विनोबाजी कहा करते थे अपने साधकों को, मेरी बात पर भरोसा मत करना। मैं आज यह कहूंगा। कल दूसरा बोल सकता हूं क्योंकि मुझे रोज नया अनुभव होता है। एक ही वर्तमान नहीं होता। बदलते रहते हैं। साधु मौन रखे तो उसके समान कोई मौन नहीं रख सकता और साधु बोले तो उसके समान कोई बोल भी नहीं सकता। शीलवंत साधु आश्रम का महंत नहीं होता। नीतिन वडगामा की भाषा में वो मन का महंत होता है, आश्रम का महंत नहीं। मन का महंत वो शीलवंत है। तो मैं गाउंगा, 'जेना बदले नहीं वर्तमान।' जिसका वर्तमान कायम हो।

भूतकाल बड़ों-बड़ों का खराब होता है। भविष्य निम्न से निम्न व्यक्ति का भी उच्च हो सकता है। प्रश्न है मध्यम मार्ग का। जो बुद्ध ने स्थापित किया। मैं कथा बोलूं तो कथा ही बोलूं। मेरे मन में ओर विचार चले ही नहीं। आप सुनो तो कथा ही सुनो बस। उस समय इधर-उधर न जाओ। कथा सुनते-सुनते आप यह सोचे कि बापू ने फलां कथा में तो इस पद की यह बात की थी। कथा सुनते-सुनते आप यह सोचे कि इस कथा के बाद जो कथा होगी रामदेवरा में तो वहां बापू क्या बोलेगे? अभी माँ के दरबार में जो हो रहा है उसको पकड़ लो। जैसे बोल को क्रिकेटर केच करता है वैसे ही हम और आप किसी बुद्धपुरुष के बोल को केच कर लें।

छठ्ठी भूमिका होती है सर्वज्ञ। जो सब कुछ जानता है। मैं इसका ज्यादा विस्तार कर सकता हूं लेकिन ज्यादा न करूं क्योंकि कई लोग काल जानते हैं, स्थान नहीं जानते। समय का ज्ञान होता है लेकिन स्थल का ज्ञान नहीं होता। स्थल के बारे में उसको दूसरे को पूछना पड़ता है। काल का पता होता है उसको देश का पता नहीं होता। हमारे यहां देश-काल की जानकारी की बातें आती है। 'सर्वज्ञ' आखिरी शब्द है, जो सब कुछ जानता है। यह बुद्धत्व का अंतिम शिखर है। कोई बुद्धपुरुष बोले नहीं इसका मतलब यह नहीं कि उनकी जानकारी में नहीं आया। और इसका मतलब यह नहीं कि पूछताछ की, जासूसी की और जानने की कोशिश की। यह भी मत समझना। उसको स्वत: लगता है, जो सर्वज्ञ की ओर जाता है। यह तो कोई-कोई हो सकता है। माँ हो सकती हैं। राम हो सकते हैं। कृष्ण हो सकता है। और सर्वज्ञ होता है वो शायद कुछ बोलेगा भी नहीं। कुछ नहीं बोलेगा। दूसरों के लिए बंदगी करेगा, रोएगा।

अच्छे नहीं लगते रोज़ यह आंसू।
खास मौके पे मज़ा देता है।

आंसू बार-बार अच्छा नहीं लगता लेकिन किसी के कष्ट निवारण के लिए या तो कृष्णयाद में आंख डबडबा जाये। खास मौके पे मजा देता है। और-

आग तो अपने ही लगा सकते हैं,
गैर तो सिर्फ़ हवा देते हैं।

मेरे भाई-बहन, सर्वज्ञता उससे उंचा कुछ नहीं। ऐसे तो माँ हो सकती है; जगतपिता शंकर हो सकते हैं; भगवान राम हो सकते हैं; नारद जैसे कोई भगवान की विभूति हो सकती है अथवा तो विवेकसागर गुरु वशिष्ठ जैसे महापुरुष हो सकते हैं। कागभुशुंडि जैसे कोई महापुरुष हो सकते हैं, जो सर्वज्ञ है। तुलसी कहते हैं-

जगत मातु सर्बग्य भवानी।
मातु सुखद बोलीं मृदु बानी।

भवानी सब कुछ जानती है। अभी मैंने कहा ना जो सर्वज्ञ होता है वो चुप रहता है। और बोलने की मजबूरी हो तब बोलेगा। बोलेगा तब भी 'मातु सुखद बोली।' सामनेवाली व्यक्ति को चोट न पहुंचे। सुख पहुंचानेवाली बोली बोले उसका नाम है माँ। पीड़ा देनेवाली बोली नहीं। और आक्रोश में नहीं बोलेगी। मृदु बानी, कोमल बानी। यह सब माँ की परिभाषा है। मैं प्रार्थना करूं, घर में जो मातृशरीर है उसको सुखद बोली, मृदु बोली बोलनी चाहिए। पुरुष थोड़ा सख्त बोले तो ठीक है, दु:खद बोले तो भी चलेगा। उसको कोई अधिकार नहीं लेकिन माता सुखद बोले और मृदु बोले। तो यह पराम्बा तक की यात्रा संपन्न कर सकते हैं।

तो 'मानस-मातृदेवो भव' के बारे में कुछ सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा यहां हो रही है। कथा के क्रम में, वंदना प्रकरण में तुलसीजी सब की वंदना करते हैं, उसमें कल हनुमानजी की वंदना तक की चर्चा संक्षेप में हुई।

सत्यपूर्ण जीवन का नाम राम है। सत्य वो ही परमेश्वर। सत्यपूर्ण जीवन राम है। प्रेमपूर्ण जीवन चरित है। करुणामय जीवन ही 'मानस' है। मेरी दृष्टि में 'रामचरित मानस' ही सत्य, प्रेम, करुणा का प्रत्यक्ष परिचय है। जिसमें प्रेम होगा उसका जीवन आचरणीय होगा, अनुकरणीय होगा, अनुसरणीय होगा। प्रेम हिंसा नहीं करता। प्रेम कुरबानी देता है। प्रेम बलिदान देता है। प्रेम वचनात्मक नहीं होता, रचनात्मक होता है। केवल बोली में प्रेम नहीं होता। आदमी का प्रेमपूर्ण व्यवहार पहचान लिया जाता है। सत्य, प्रेम, करुणा 'रामचरित मानस' का पर्याय है; उसका सगोत्री शब्द है।

उसके बाद गोस्वामीजी ने भगवान राम के रामकार्य में जो-जो संलग्न हुए थे। उसमें भालुपति जामवंत, युवराज अंगद, शिल्पी नल-नील, कपिपति सुग्रीव, श्री हनुमानजी इन सब की वंदना गोस्वामीजी ने की। उसके बाद आखिर में वंदना की है सीता-राम की, जो इस ग्रंथ के केन्द्र में है। राम है केन्द्र में 'रामचरित मानस' में। यद्यपि 'वाल्मीकि रामायण' का केन्द्रबिंदु सीता है। वाल्मीकि के केन्द्र में सीता है, तुलसी के केन्द्र में राम है। फिर भी वंदना करते हैं तब उपनिषद का ही निर्वाह किया 'मातृदेवो भव।' जनक की कन्या, जगत की माता और फिर राम की अत्यंत प्रिय, करुणानिधान की अति प्रिय सीता के चरणकमलों की वंदना करता हूं क्योंकि उसके चरणों की कृपा से मेरी बुद्धि निर्मल हो। और तुलसीदासजी अच्छा शब्द लिखते हैं कि मैं इसलिए उनके चरणों की वंदना करता हूं कि बुद्धि तो मुझमें है लेकिन निर्मल बुद्धि नहीं है। और ध्यान देना मेरे भाई-बहन, निर्मल बुद्धि केवल माँ ही दे सकती है। जैसे बच्चा गंदा है, अपने कारण वो गंदा बना है तो शुद्ध तो माँ ही करती है। जैसी भी बुद्धि है, माँ ही विशुद्ध करती है। तो जानकी की वंदना से विशुद्ध बुद्धि की मांग की और उनके बाद गोस्वामीजी कहते हैं, 'पितृदेवो भव।' माँ के बाद मैं रघुनायक की वंदना करता हूं। तुलसी ने कहा, कोई उसको दो न समझे। ये तो लीलाक्षेत्र में दो है। ब्रह्म तो एक ही होता है। वो ही ब्रह्म नारी के रूप में सीता बनता है। वो ही ब्रह्म लीला के रूप में पुरुष राम बनता है। तत्त्वत: एक है।

माँ की भूमि पर कथा है। अश्विन नवरात्र है इसलिए स्वाभाविक प्रासंगिक है। जब भी अश्विन नवरात्र होते हैं तब माँ के विषय पर ही गाते रहते हैं। लेकिन माँ के बिना बुद्धि शुद्ध नहीं होती यह बात पक्की। यद्यपि 'भगवद्‌गीता' में बुद्धि को शुद्ध करने के लिए तीन उपाय बतायें-यज्ञ, दान, तप। यज्ञ से बुद्धि शुद्ध होती है। दान से बुद्धि शुद्ध होती है। और तप से बुद्धि शुद्ध होती है। इसलिए गोस्वामीजी कहते हैं, बुद्धिमानों भी सब साधन छोड़े दे तो भी अपनी बुद्धि को अखंड शुद्ध रखने के लिए यज्ञ, तप, दान का त्याग नहीं करना चाहिए। ऐसा 'भगवद्‌गीता' का मंतव्य सार्वभौम है। यहां कहते हैं कि माँ की कृपा से बुद्धि शुद्ध होती है। दोनों एक ही बात है। पराम्बा, जगत्‌अंबा। जगत् अंबा यह यज्ञरूपा है, स्वाहारूपा है। जहां दुर्गा का नाम है वहां स्वधा भी उसका नाम है, स्वाहा भी उसका नाम है। इसलिए यज्ञरूपा है। यज्ञ के रूप में पार्वती हमारी बुद्धि शुद्ध करती है, हमें हरा रखती है। माँ हमारी बुद्धि निर्मल करती है और 'गीता' कहती है, यज्ञ के द्वारा निर्मल होगी। इसलिए माँ ही विशुद्ध बुद्धि करेगी। दान; माँ समान कोई दाता होता है जगत में? हमको जनम देती है इससे बड़ा दान क्या हो सकता है?

सुकामां सुवाडी भीने पोढी पोते,
पीडा पामु पंडे तजे स्वाद तो ते;
मने सुख माटे कटु कोण खातुं,
महा हेतवाळी दयाळी ज मा तुं.

एक माँ चार-चार प्रवाह बहाती है। रक्तप्रवाह; संसार के लिए, परिवार के लिए टूट जाना इतना पसीने का प्रवाह। सब बच्चे नठारे निकले तो लहू के आंसू रोती हो। जब मातृत्व होता है तब अपने वक्ष से दूध का प्रवाह। और चौथा जब कुटुंब की मर्यादा टूटती हो तब आंसूओं का प्रवाह। चार-चार प्रवाह का समन्वित रूप है माँ। जगत् अंबा, यह हमारी बुद्धि को पवित्र करती है। उससे बड़ा कोई दाता नहीं। कौन है दाता? मातृशरीर जितना क्षमा का दान देती है, विश्व में कोई नहीं देता। इसलिए जगद्‌गुरु आदि शंकराचार्य को एक स्तोत्र की रचना करनी पड़ी; उसका नाम है, 'देवीक्षमापन स्तोत्र।'

कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति।

तीसरा, तप। माँ के समान कौन तपस्वी है विश्व में? ओशो को जब पूछा गया, विश्व में जितने परम क्षेत्र है उसमें स्त्री आगे क्यों नहीं है? अब ऐसा नहीं है। अब हर जगह मातृशरीर आगे हैं और होने चाहिए। लेकिन मात्रा में माताएं पीछे क्यों हैं? ओशो ने बड़ा प्यारा जवाब दिया था कि माँ को कोई बड़प्पन की जरूरत नहीं। एक चेतना को जन्म देती है, ऐसा दुनिया में कोई नहीं कर सकता। तपस्या के आगे कोई नहीं है। माँ बड़ी तपस्वी है। यज्ञरूपा है माँ। दानरूपिणी है माँ और तपस्या की मूर्ति है माँ। पार्वती का तप तो देखिए 'मानस' में! भवानी के रूप में नारद की सिखावन पर जो तपस्या की है यह माँ ही कर सकती है। सतजुग में भगवान का ध्यान कर के भगवान की प्राप्ति करते थे। त्रेतायुग में बड़े-बड़े यज्ञ का विधान आया। लोग बड़े-बड़े यज्ञ करते थे और परम को पाते थे। द्वापरयुग में घंटों तक पूजन-अर्चन यह सब चला और परम की प्राप्ति होती थी। कलियुग में भगवान का नाम सरल, सुगम और सब को सुलभ है।

मानस-मातृदेवो भव : ३

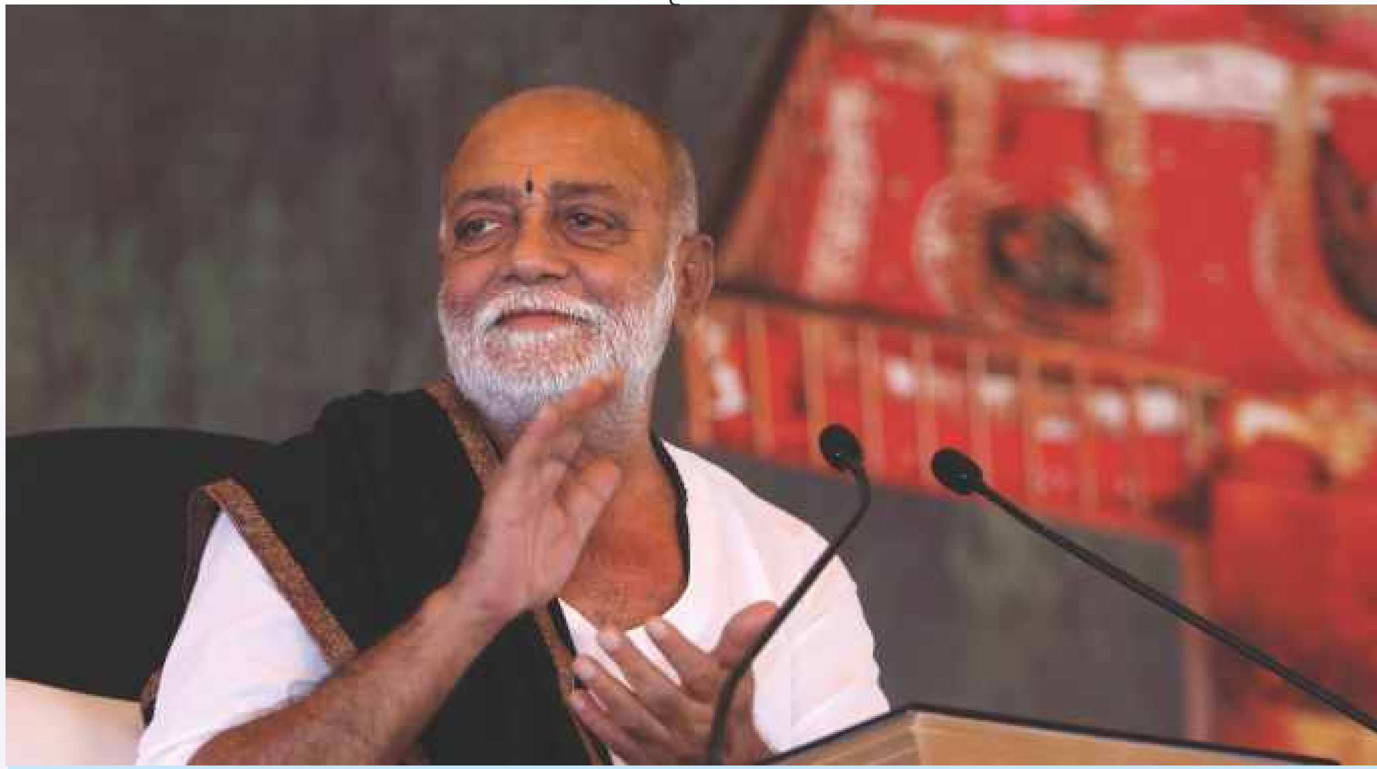

माँ एक बहुत बड़ी सुरक्षा है

'मानस-मातृदेवो भव', ये केन्द्रीय विचार है, उसकी चर्चा मूल 'मानस' के आधार पर हो रही है और यत्र-तत्र संदर्भों से विशेषकर गुरुकृपा से संवाद चल रहा है। प्रारंभ में आपकी बहुत जिज्ञासाएं हैं। आप कई ऐसे प्रश्न भी पूछते हैं, जो मेरे क्षेत्र के बाहर है अथवा तो जिसके बारे में मैंने सोचा नहीं है। ऐसे किसी प्रश्न का उत्तर आपको यदि व्यासपीठ से न मिले तो आप ये मत समझना कि बापू ने हमारी जिज्ञासा की उपेक्षा की। इतना समझना कि बापू को हमारे प्रश्न का जवाब आता नहीं है। मेरी तलगाजरडी कथा करीब-करीब तीन भागों में विभाजित है। उसमें पहले मैं आपके प्रश्न लेता हूं। बीच में केन्द्रीय विषय को मैं छूता हूं। ये मेरी व्यासपीठ का प्रेम है। मैं इन पात्रों को, प्रसंगों को प्रेम से चरणस्पर्श करता हूं। फिर जितना हो सके कथा के प्रसंगों में जाता हूं। ये व्यासपीठ की करुणा है। सत्य, प्रेम और करुणामय मेरे आंतरिक विकास के लिए ये बातें हो रही है। मैं आप से निवेदन करूं कि मोरारिबापू से पूछने के बदले सीधा मुरारि को पूछो। आपकी श्रद्धा जरूर है। हम परमतत्त्व की ओर जाते हैं तो किसी को माध्यम बनाकर जाते हैं। सीधे जाए उसको मेरा प्रणाम है। पर कोई जाते हैं, सब नहीं जा पाते। आप शास्त्रीय दृष्टि से देखो, मैं इस कथा में 'मातृदेवो भव' की चर्चा विशेष रूप से कर रहा हूं। बिना माँ की आराधना आप परमतत्त्व को पा ही नहीं सकते ये याद रखना। रुकमिणी को कृष्ण को पाना था तो किसके माध्यम से गई?

कल सौरभभाई ने विचार दिए, उसमें से दो विचारों का प्रसाद बांट दूं। यहां जितने लोग जीत जाते हैं वो ज्यादातर अपनी योग्यता से नहीं जीतते हैं, सामनेवाले की अयोग्यता से जीतते हैं। ये सच्ची बात है। पुरातन कहानियां में आता है कि कोई राजा बहुत बड़ा होता है लेकिन नि:संतान हैं तो ब्राह्मणों को, पुरोहितों को, पंडितों को पूछते हैं, इतना बड़ा साम्राज्य का कोई वारिस नहीं? तो बताया जाता है, ऐसा यज्ञ करो, अनुष्ठान करो इसमें बत्तीस लक्षणा पुरुष का बलिदान दो। राजा की संतानप्राप्ति की इच्छा के लिए बत्तीस लक्षणा को चढ़ाया जाता है। सौरभभाई ने लिखा, जो बत्तीस

लक्षणें होते हैं उन्हें मौत के लिए तैयार ही रहना पड़ता है। मुझे नवाज़ देवबंदीसाहब का शे'र याद आ रहा है-

मज़ा देखा मियां सच बोलने का?
जिधर तू है, उधर कोई नहीं है!

सत्य अकेला ही रहता है, 'एकम् सत्।' 'एक ॐकार सतनाम्।' जिसस के पास चंद सेवक थे आखिर में। उसमें से एक को कहा कि तू आखिर तक मेरे साथ रहेगा। वो खुश हो गया। लेकिन आखिर में जाते-जाते सुन ले, तू भी मेरी विरुद्ध में खड़ा रहेगा! आखिर में सत्य अकेला ही रहता है। जो अच्छे मानुष होते हैं, जो वैश्विक मानव बन जाता है, उसका जीवन तो बलिदान ही बन जाता है।

मेरे कहने का मतलब है, कोई सीधा पहुंच जाए तो अच्छा है लेकिन आधार तो चाहिए ही। रुकमिणी सीधा कृष्ण के पास न जा पाई। लिखा, हे वासुदेव, मैं पत्र भेजती हूं। मेरे नगर के बाहर माँ जगदंबा का मंदिर है। मैं सखियों के साथ गौरीपूजा के लिए जाउंगी और आप आकर मुझे ले जाओ। शिशुपाल खड़ा है तामसी। मुझे कोई गुणी नहीं चाहिए, मुझे गुणातीत चाहिए। 'श्रीमद्भागवत' में रुकमिणी पत्र लिखती है, हे वासुदेव, तुम्हारे गुणों को मैंने सुना है, गुणवान को देखा नहीं है। मैंने मन ही मन निर्णय कर लिया है कि होउंगी तो तेरी ही होउंगी। तू मुझे ले जाना। आज भी द्वारिकाधीश के पट बंद होते हैं तब पूजारी द्वारिकाधीश के पत्र का गायन सुनाते हैं। पंढरपुर में विठ्ठोबा के दरबार में भी 'भागवत' अंतर्गत रुकमिणी के पत्र का पाठ किया जाता है। किसी बाप के पास भी माँ के माध्यम से ही जाना पड़ेगा। पहले माँ के पास तुलसी गए फिर पिता के पास गए। जगद्गुरु शंकराचार्य स्वयं शंकर के अवतार थे। शंकराचार्य दंडी स्वामी बत्तीस साल का भारत का नवयुवान अपनी माँ के पास पहुंचता है।

'भागवत' का एक प्रसंग है। एक गोपीजन ने कृष्ण के साथ रास खेलने के लिए पहले देवी की पूजा की फिर उसे वरदान मिला कि अब मैं तुम्हे मिलूंगा। 'रामचरित मानस' में जानकी पहले गौरीपूजा करने गई। दुर्गा ने आशीर्वाद दिया कि जानकी, तुझे करुनानिधान राम वर के रूप में प्राप्त होगा। सब शास्त्रप्रमाण है। चलो, इन देवीओं को प्रणाम करो। मधुसूदन सरस्वतीजी महाराज अद्वैत सिद्धि के कर्ता ने कहा, 'आदौ श्रद्धा।' पहले श्रद्धा होती है। भवानी ही श्रद्धा है। 'भगवद्गीता' के कहा, 'श्रद्धावान लभते ज्ञानम्।' श्रद्धावान ही ज्ञान को उपलब्ध कर सकता है। तुलसीदासजी ने ज्ञान को पुरुष कहा। तो माँ का सहारा लेना पड़ेगा। माँ के बिना बाप के पास नहीं जा सकते। माँ ही बाप का परिचय करवाती है। भक्ति भी माँ है। भक्ति से भगवान मिलेगा। आप यदि मुझे पूछे कि आप कोई देवी उपासना करते हो? तो मैं कहूंगा, नहीं। लेकिन मूल में तो सावित्री माँ, अमृत माँ है। मूल में है 'रामायण माँ', उसीने मुझे राम का परिचय कराया। बिना मातृशक्ति शक्तिमान पाया नहीं जाता। कोई तो चाहिए ही। और ऐसा चाहिए, राम को दिखा दे फिर बीच में से वो हट जाए। 'मानस' की पुष्पवाटिका में रामदर्शन कर के एक सखी आई और जानकीजी को कहती है, माँ की स्तुति बाद में करना। राम बाग में घूम रहे हैं, पहले उनको देख ले। तब जानकीजी उसी गुरु बनी हुई सखी को आगे करती है। गुरुरूपी सखी जानकी को राम की और लिये चलती है लेकिन राम के सामने सीता को छोड़कर वो सखी बीच में से हट जाती है। इसका मतलब है, गुरु भी कभी परमतत्त्व के बीच में खड़ा नहीं रहता। सच्चा गुरु वो है जो अवकाश दे।

अपनी माँ की पूरे दिल से सेवा करो तो ये वैष्णोदेवी की पूजा है। अपनी पत्नी की सेवा करो तो भी चलेगा। कृष्ण ने राधिका के पैर दबाएं हैं। 'देख्यो पलोटत राधिका पायन।' कृष्ण को खोजने पर वो न गोकुल में मिला, न वृंदावन, न साकेत, न गोलोक में, न पहाडों में मिला। ढूंढता साधक कुंजगली में जाता है तो कृष्ण राधिका के चरणों की सेवा करते दिखाई दिए। बाप! कोई भी मातृशरीर की सेवा करो। कई समाज में बेटियों को माँ-बाप पैर नहीं छूने देते। खलील जिब्रान का एक वाक्य है कि संतान तुम्हारे द्वारा आये हैं, तुम्हारे नहीं है। तुलसी बोले, 'जन्म हेतु तहँ कहँ पितु-माता।' कोई चेतना माँ-बाप के द्वारा आती है पर होती है परम की। जिसको हम कन्याकुमारी कहते हैं। वैष्णोदेवी कुंआरी है। कल्कि अवतार होगा तब उसकी शादी होगी। जगत में बहुत पीड़ा हो गई तब देवतागण त्राहिमाम् पुकारते हैं। तो समाज की महाशक्तियों ने मिलकर स्तुति की। कोई ऐसी शक्ति प्रगट हो जाए जो दुरित का नाश कर के नया निर्माण करे। दक्षिण में रत्नाकर सिंधु से एक शक्ति प्रगट हुई। फिर वो पूछती है कि मुझे क्यों प्रगट करवाया? तो बताया कि उनको ये-ये करना है। तो वो बोली, मैं तो अभी शक्तिस्वरूपा हूं, कैसे जन्म लूं? फिर समुद्र में समाती है और विष्णु के अंश के रूप में प्रगट होती है, इसीलिए हम उसको वैष्णवीदेवी या वैष्णोदेवी कहते हैं। दो-तीन प्रकार के चरित्र आते हैं, इनमें से साररूप मैं कहूंगा।

एक कथा तो इतनी विचित्र है कि वैष्णोदेवी कुंआरी है। राम को वन में घूमते देखकर उनके प्रति आकर्षण हो गया और राम से प्रस्ताव करती है कि आप मेरा स्वीकार करे। राम ने कहा, ये मेरा मर्यादा का अवतार है। मैं एक पत्नीव्रत लेकर निकला हूं। ये शक्ति और चेतना की बातें है। उसको अन्यथा मत लेना। राम ने कहा, आप शक्तिरूप मेरे साथ जुड़ जाओगे कल्की अवतार में। ऐसी एक कथा है। मेरा मूल कहना ये है, आदमी को श्रद्धारूपी माँ के द्वारा या भक्तिरूपी माँ के द्वारा परमतत्त्व का परिचय प्राप्त होगा। अथवा जमीन पर आए तो अपनी माँ ही दुर्गा है। मैंने दुर्ग की कथा में शायद कहा है, दुर्ग यानी किल्ला। दुर्ग में जो आश्रित होता है उसे सीमित आश्रय मिलता है। कृष्ण 'गीता' में कहते हैं, अर्जुन, मेरे में तेरे चित्त का प्रवाह मिल जाए तो जितनी भी बाधाएं आएगी, मेरी कृपा से सब से तू दूर निकल जाएगा लेकिन अहंकार से मेरी बात तूने नहीं सुनी तो नाश होगा। दुर्ग में सुरक्षा सीमित है पर जो दुर्गा के पास पहुंच जाता है, उसकी सुरक्षा असीमित है। माँ एक बहुत बड़ी सुरक्षा है। पर्वत पर बिराजमान माँ, अंबाजी हो, बहुचराजी हो, गिरनार की अम्बा हो वो तो पराम्बा है ही लेकिन अपने घर में कन्या के रूप में, बहु के रूप में, सास, दादी किसी भी रूप में है वो माँ है। इसकी अवहेलना कर के परमतत्त्व के पास पहुँचना कठिन है। कई लोग माँ की अवहेलना करते हैं!

इससे उम्मीदे वफ़ा न रख फ़राज़।
जो मिलते हैं किसी से, होते हैं किसी के।

माँ को मिलना है तो घर की माँ से शुरू करो। वैष्णोदेवी भी कोई माँ ने, दादी ने, बेटी ने भेजा है इसीलिए इस माँ के पास आए हैं। तीर्थों का अपमान भी नहीं होना चाहिए।

आज एक प्रश्न है, 'मातारानी त्रिशूल क्यों रखती है?' उसका क्रोध भी निर्वाण करनेवाला है, ऐसा 'मानस' में लिखा है। तो केन्द्र में माँ है, उसकी महिमा है। परमात्मा तो सब जगह होता है लेकिन कभी-कभी हवा भरने के लिए वैष्णोदेवी जाना पड़ता है; वृंदावन, बद्रीनाथ, नाथद्वारा, सोमनाथ, द्वारिका, अयोध्या, चित्रकूट जाना पड़ता है। तीर्थों की आलोचना मत करो। गुरु के चरणों में अडसठ तीर्थ कहलाते हैं लेकिन वो गुरु ही कहेगा कि तुम तीर्थ में जाओ। देवताओं के हाथ में हथियार होते हैं उसके भी गलत अर्थ निकाले हैं हमने! गंजेडी लोग शंकर को अपना आदर्श मानकर गांजा पीते हैं!

मेरे दादा कहते थे, परम को पाना है तो पांच निष्ठा बनाए रखना। पहली, नामनिष्ठा; तुम्हारे इष्टदेव का नाम या जिस पर श्रद्धा हो उसके नाम की निष्ठा। दूसरी, गुरुनिष्ठा; जो स्वयं मार्गदर्शक बनने के बाद हमारे मार्ग की बाधा न बने ऐसे गुरु की निष्ठा। तीसरी, ईष्टग्रंथ की निष्ठा। चौथी, शब्दनिष्ठा; सर्जकों को, कविओं को, शब्दसेवीओं को ईश्वर का पर्यायनाम बताया है। पांचवीं, शिवनिष्ठा; उपर की चारों निष्ठा शायद फलित न हो जब तक शिवनिष्ठा न हो। महादेव मानी विश्वास।

न जानामि योगं जपं नैव पूजां
नतोऽहं सदा सर्वदा शंभु तुभ्यं।
जरा जन्म दुःखौध तातप्यमानं
प्रभो पाहि आपन्नमामिशशंभो।।

●

आपो दृष्टिमां तेज अनोखुं, सारी सृष्टिने शिवरूप देखुं,
दया करी दर्शन शिव आपो, शंभु शरणे पडी...
हुं तो एकलपंथी प्रवासी, छतां आतम केम उदासी?
थाक्यो मथी रे मथी, कारण जडतुं नथी, समजण आपो,
दया करी दर्शन शिव आपो...

कई लोग मुझे पूछते हैं, 'बापू, आप निवृत्ति कब लेंगे?' यहां निवृत्ति नहीं होती। ये मेरी सद्प्रवृत्ति है। हम जहां है, वहां सब कुछ है माना लेकिन जहां से जीवन में उर्जा पूरित की जाए ऐसे स्थान भी होते हैं। एक स्थान गुरुद्वार, जहां हमारी उर्जा सचेत होती है। तो बनाए रखना नामनिष्ठा, गुरुनिष्ठा, ग्रंथनिष्ठा, शब्दनिष्ठा और महादेवनिष्ठा।

एक जिज्ञासा आपकी ये है, 'आपने कल अज्ञ से सुज्ञ के छः प्रकार तलगाजरडी दृष्टि से बताएं तो ये तलगाजरडी दृष्टि क्या है?' अर्थ मुझे पूछते हैं और खुद ने तलगाजरडी दृष्टि की व्याख्या लिखी है! 'त' पवनतनय, 'ल' लक्ष्मण, 'ग' गाधीतनय विश्वामित्र, 'ज' जानकी, 'र' राम, 'ड' डाकोरजी। मुझे पूछा है तो सुनो, तलगाजरडी दृष्टि का मेरा अर्थ है, तलगाजरडा का पंचभूत। जिस भूमि में जन्म लिया वो भूमितत्त्व। जिस भूमि में मैंने पहली सांस ली वो वायुतत्त्व। हमारे गांव के बाहर जो रूपावा नदी है अथवा गांव के बीच में गढ कुआं है वो मेरा जलतत्त्व है। पूरी दूनिया जानती है मेरा गंगाजल का व्रत है। गंगाजल पीता हूं। गंगाजल में बनी रसोई खाता हूं पर मेरे जीवन का पहला जलतत्त्व गढ कुआं है। अगर जीवन में मेरे पास गंगाजल न हो और गढ कुआं का पानी पिला दे तो मेरे लिए गंगाजल से कम नहीं होगा। तो ये पंचतत्त्वों की छोटी-सी मेरी दुनिया है। जिस तलगाजरडा की भूमि में से 'रामायण' लेकर उड़ा हूं, 'पोथीने परतापे क्यां-क्यां पूगिया!' ये मेरा आकाश है। तेज; मेरी माँ चूल्हा जलाती थी। माँ कहती थी, तुम्हारे लिए चूल्हा नहीं जलाया है। रामजी मंदिर के ओटे पर कोई अतिथि बैठा है तो पहले उसको दो। ये अग्नितत्त्व। इन पांचों तत्त्वों की दृष्टि से

बोलना मेरी तलगाजरडा की दृष्टि का निवेदन है। अथवा तलगाजरडा दृष्टि का केन्द्रबिंदु है मेरा गुरुगृह।

यहां यजमान परिवार ने व्यवस्था बहुत अच्छी की है। लेकिन प्रसाद फैंका जा रहा है! मेरी प्रार्थना है आप से कि वैष्णोदेवी का भंडारा है। भरपेट खाइए लेकिन बिगाड़ न करे। स्वच्छता अभियान में सहयोगी हो। आप सब प्रसाद लो ऐसा मेरा निमंत्रण है। कथा में चार घंटे भजन, उसके बाद भोजन लेकिन बिगाड़ना मत। हमारे आदरणीय प्रधानमंत्रीजी ने ठीक कहा कि गांधीजी ने 'सत्याग्रह' कहा और वो 'स्वच्छताग्रह' कहते हैं। सत्याग्रह ने देश को आझादी दिलवाई। और स्वच्छताग्रह से देश को गंदगी से मुक्त करो। हम सब का दायित्व है।

एक प्रश्न है, 'बापू, आप दिन में कितनी बार खाते हैं?' मैं खाता हूं लेकिन जैसे-जैसे कथा के दिन जाते हैं मेरा खुराक कम हो जाता है क्योंकि आनंद ही इतना आता है कि आनंद ही आहार बन जाता है। हमारी निम्बार्की परंपरा में तो लिखा है, हरिनाम आहार है। मैं चार बार खाता हूं। सुबह में नास्ता करता हूं, थेपला, संभारा, छूंदा, खाखरा, अगले दिन रात का ठंडा रोटला, दहीं, गांठिया-जलेबी खाता हूं। दोपहर को फल, दूध लेता हूं। हमारे गुजराती में कहते हैं, सुबह को शिरामण। दोपहर को बपोरा। दोपहर-शाम के बीच में रोंढो और रात को वालु। शाम को भी सेव-ममरा, पूरी कुछ खाता हूं और रात को भोजन करता हूं। आनंद में इतना रहता हूं कि बिना खाए भर जाता हूं।

पहले दिन हमारी चर्चा हुई थी, दुर्गा नव है। उसमें पहले नवरात्र में शैलपुत्री, जो गिरिवरराज किशोरी है। 'द्वितीयं ब्रह्मचारिणी', दूसरे नोरते की माँ है ब्रह्मचारिणी। माँ की जहां-जहां पीठ है वहां माँ के भिन्न-भिन्न रूप बिराजित है। 'दुर्गा सप्तशती' में जो माँ के रूप और मूर्तियों का उल्लेखित किया है उसमें दूसरा रूप है ब्रह्मचारिणी। मैं संस्कृत में उसका भाष्य देख रहा था। ब्रह्मचर्य और ब्रह्मचारिणी उसके शास्त्रीय अर्थ देखने पड़ेंगे। 'ब्रह्मचारी' या 'ब्रह्मचारिणी' शब्द लगने के बाद हो सकता है वो ब्रह्मचारी न भी हो! और कभी-कभी 'ब्रह्मचारी' या 'ब्रह्मचारिणी' शब्द न लगे हुए फिर भी ब्रह्मचारी होते हैं। ओशो ने तो ब्रह्मचारी का अर्थ ये ही किया कि निरंतर जो ब्रह्म में रममाण करता है वो ब्रह्मचारी। वैसे कोई मातृशरीर ब्रह्मचारिणी गृहस्थ हो तो भी चिदानंद ब्रह्म के पास पहुंचने का जिसका स्वभाव है उसको ब्रह्मचारी कहते हैं। कोई वशिष्ठ गुरु हो; तुकारामबाबा जो गृहस्थ थे लेकिन उनका कार्य था जीव को ब्रह्म के पास पहुंचा देना। इसलिए वो गृहस्थ होते हुए भी ब्रह्मचारी है। बुद्धपुरुष ब्रह्मचारी ही होता है। शील के नाते वे ब्रह्मचारी है। हमारे ऋषिमुनि गृहस्थ थे। उनको संतानें भी थी लेकिन वे ब्रह्मचारी थे। शास्त्रमान्य जो है कि अर्थ मुझे ये मिला, जिसका स्वभाव हो जो आदमी को प्रसन्नता की और ले जाए वो ब्रह्मचारी है। कोई भी मातृशरीर अपने शील से परिवारों को ब्रह्म के अभिमुख करे तो वो भी ब्रह्मचारिणी है। ब्रह्मचारी ये लेबल नहीं, लेवल है।

भगवान कृष्ण की इतनी रानियां है फिर भी कथा आती है ना? जमुना के पार जाना था। वो महात्मा बैठा था। कृष्ण ने लोगों को कहा, जाओ, महात्मा को खाना खिलाओ। लोगों ने कहा, इतना पानी है, कैसे जाएं? कृष्ण ने कहा, नदी को कहना, इतनी रानी होते हुए भी हमारा कृष्ण यदि ब्रह्मचारी हो तो नदी रास्ता दे दे। सब रानियां पूछने लगी, आप और ब्रह्मचारी? और नदी को ये बात कही तो नदी ने तुरंत रास्ता दे दिया! सब को शक होने लगा। महात्मा बैठे थे। उपवासी थे। उसको भोजन दिया। फिरते समय रानियों को कहा, नदी को कहना, इतना खाने के बाद महात्मा यदि उपवासी है तो रास्ता दे दो। रानियां ऐसा बोली तो रास्ता मिल गया! मेरे भाई-बहन, जिसका स्भाव हरि की ओर, प्रसन्नता की ओर ले चले वो सब ब्रह्मचारी है।

तो 'मानस-मातृदेवो भव।' मैंने आपको कहा, बुद्धि की विशुद्धि माँ की कृपा से होती है। 'भगवद्‌गीता' का संदर्भ मैंने लिया कि माँ का नाम स्वाहा, स्वधा तो माँ यज्ञरूपा बन जाती है। माँ के समान दातार कौन है? दान के द्वारा बुद्धि शुद्ध करती है और माँ के तप का तेज भी तेजरूप है। माँ के उदर का नाम है यज्ञोदरा। यज्ञ उदर है जिसका। फिर मैं सोचने लगा, माँ का उदर यज्ञ है तो दान है माँ का दूध। दुनिया में दान देनेवाला ही महान होता है लेकिन माँ एक ऐसी दाता है कि बच्चे को दूध पिलाती है, तो बच्चा बड़ा हो जाता है। जो दान स्वीकारनेवाला है उसे बड़ा कर के दुनिया के सामने रखे इससे बड़ा दानी कौन? इसीलिए माँ दान के द्वारा बुद्धि को शुद्ध करती है। और माँ का तेज, माँ का चेहरा ये करुणा अथवा तप है। माँ सदा तेजस्वी लगती है। सब को लगता है कि मेरी माता के समान कोई नहीं है। ये सब का सत्य है और कुबूल करना चाहिए। मैंने कईयों के मुख से सुना है कि हमारे दादा बहुत अच्छे थे। बाप के लिए कम कहते हैं! सास के लिए कम कहते हैं! गुरुसमर्पित लोगों को गुरु बहुत अच्छे लगते हैं। ये सब अपनी निष्ठा और श्रद्धा का सवाल है। वैष्णोदेवी तो दूर नगरी है लेकिन अपने घर में जो बैठी है वो पराम्बा है।

माँ का एक नाम है चन्द्रघंटा। क्या सब की माँ चंद्रघंटा नहीं होती? चन्द्रघंटा का अर्थ है जिसके चेहरे से शीतलता प्राप्त होती है। तो माँ की महिमा गजब है! कल हमने क्रम में लिया था-

जनक सुता जग जननि जानकी।
अतिसय प्रिय करुनानिधान की।।

प्रभु के मंगलमय नाम की महिमा तुलसी ने बहत्तर चौपाईयों में गाई है और ये चौपाई बहत्तर नहीं, बेहतर है। इसका वर्णन करूं उससे पहले नाम संकीर्तन, 'श्री राम जय राम जय जय राम...' प्रभु का नाम सरल-सहज है इसीलिए कभी-कभी उसका मूल्य निर्णित नहीं कर सकता! भगवान करे किसी के जीवन में दुःख न आए लेकिन सुख-दुःख सापेक्ष है। आप इधर-उधर भटके उससे अच्छा है, आप अकेले कोने में बैठकर हरिनाम लो। उसको दूर से आना नहीं पड़ता। जहां से तुम पुकारते हो वहीं वह होता है। प्रार्थना में तो शब्द का आयोजन होता है, पुकार में तो एक चीख होती है। बहुत सरल उपाय है साहब! लेकिन उसका मूल्य समझ में नहीं आता। कई लोग कहते हैं, राम-राम करने से क्या फायदा? कोई विरोधी सूर में नहीं लेकिन पाश्चात्य विद्वान ने कहा ना कि नाम में क्या रखा है? मैंने कहा, भारत के संतों को, भजनानंदी को पूछो कि नाम में क्या रखा है? वो बतायेगा कि नाम में क्या नहीं है? तुलसी ने कहा, मेरे जीवन के दो ही आधार है, गंगा का जल और हरिनाम। तुलसी 'विनयपत्रिका' में कहते हैं, 'बिश्वास एक रामनाम को।' 'अल्लाह-अल्लाह' करो, 'बुद्धं शरणं गच्छामि', 'महावीर स्वामी अंतर्यामी' कुछ भी कहो, क्या फ़र्क पड़ता है?

बंदऊ नाम राम रघुबर को।
हेतु कृसानु भानु हिम कर को।।

तुलसी कहते हैं, परमात्मा के कई नाम है। रघुबीर के भी कई नाम है, उसमें मैं रामनाम को प्रणाम करता हूं, जो अग्नि, सूर्य और चंद्र का कारण है। रामनाम ॐकार स्वरूप है, प्रणव का पर्याय है। ये राम संकीर्ण नहीं है। शिव, कृष्ण, दुर्गा सब प्रणव के ही पर्याय है। तुलसी दृष्टांत देते हैं कि रामनाम महामंत्र भी है और नाम होने के कारण विधि की भी जरूरत नहीं है। मंत्र में विधि है लेकिन नाम के लिए विधि की जरूरत नहीं है। नाम के लिए केवल विश्वास की जरूरत है। गणेश ने पृथ्वी पर 'राम' लिखा और उसकी परिक्रमा की तो गणेश विश्व में प्रथम पूज्य हो गए। आदिकवि वाल्मीकि 'मरा-मरा' बोले तो शुद्ध हो गए। जो-जो घटनाएं घटी वो नाम के द्वारा भी घट सकती है, ऐसा तुलसी ने प्रतिपादित किया।

नहीं कलि करम न भगति बिबेकू।
रामनाम अवलंबन एकू।

गोस्वामीजी कहते हैं, कलियुग में ज्ञानयोग, कर्मयोग, भक्तियोग सब के लिए सुलभ नहीं है। रामनाम कलियुग में मनवांछित फल देता है। भाव से, अभाव से, दुर्भाव से, आवेश में, क्रोध में, बोध में आप नामस्मरण करे, दसों दिशाएं मंगल प्रस्तुत करेगी। मेरी तो ये ही प्रार्थना कि आप जो भी साधना करते हो वो करो लेकिन केवल अपने ईष्टदेव का नामजप करना ये सार है।

तो रामनाम की महिमा का सुंदर वर्णन किया। उसके बाद कथा के करुणा प्रवाह में गोस्वामीजी कहते हैं, जिस कथा का मैं गायन करने जा रहा हूं उसकी रचना भगवान शंकर ने की। साकेतवासी पूज्य रामकिंकरजी महाराज कहा करते थे कि 'वाल्मीकि रामायण' के रचयिता को हम आदिकवि कहते हैं। शंकर तो अनादिकवि है। सब से पहले शिव ने 'रामचरित मानस' की रचना की और अपने मानस में-हृदय में रखा। समय पाने पर महादेव ने 'रामचरित मानस' कागभुशुंडि को दिया। और वही 'मानस' भुशुंडि ने खगपति गरुड को सुनाया। ये ही

आदमी को श्रद्धारूपी माँ के द्वारा या भक्तिरूपी माँ के द्वारा परमतत्त्व का परिचय प्राप्त होगा। अथवा जमीन पर आए तो अपनी माँ ही दुर्गा है। दुर्ग यानी किल्ला। दुर्ग में जो आश्रित होता है उसे सीमित आश्रय मिलता है। दुर्ग में सुरक्षा सीमित है पर जो दुर्गा के पास पहुंच जाता है उसकी सुरक्षा असीमित है। माँ एक बहुत बड़ी सुरक्षा है। पर्वत पर बिराजमान माँ, अंबाजी हो, बहुचराजी हो, गिरनार की अम्बा हो वो तो पराम्बा है ही लेकिन अपने घर में कन्या के रूप में, बहु के रूप में, सास, दादी किसी भी रूप में है वो माँ है। इसकी अवहेलना कर के परमतत्त्व के पास पहुँचना कठिन है। कई लोग माँ की अवहेलना करते हैं!

रामकथा प्रवाही परंपरा में उतरी और याज्ञवल्क्य के पास प्रयाग में ये कथा आई और उन्होंने भरद्वाजजी को सुनाई। वही रामकथा मैंने मेरे गुरु के मुख से वराहक्षेत्र में सूकर खेत में कथा सुनी। गोस्वामीजी कहते हैं, कथा सुनी उस समय मेरा बचपना था; उम्र और समझ दोनों कम थी, इसीलिए मैं अचेत रह गया लेकिन कृपालु गुरु ने कथा दोहराई तब जाकर मेरी समझ में उतरा। मेरे श्रावक भाई-बहन, कथा बार-बार सुननी पड़ती है, क्योंकि कथा रोज नई होती है। गंगा रोज नई होती है। सूरज नया लगता है रोज। बड़े-बड़े वैज्ञानिक न्यूटन, आईन्स्टाईन एक प्रयोग बार-बार करते हैं तब जाकर सिद्ध होता है। मैं भी पचपन साल से कथा करता हूं। कथा रोज नई लगती है। आपको भी रस है इसीलिए कथा सुनते हैं। क्यों आज इतने युवान भाई-बहन कथा सुनते हैं? पहले तो कथा एक उम्र का विषय हो गई थी! जो संसार के कोई काम के नहीं वो कथा में आते थे! कथा एक ऐसी सार्वभौम वस्तु है कि कितने इस्लाम धर्म के लोग भी रामकथा के श्रोता है।

अबू धाबी की कथा में एक पाकिस्तानी भाई ने मेरे श्रोता को पूछा कि आप सब हाथ में बैरखा लेकर क्या करते हैं? श्रोता ने कहा, ये हमारी छोटी-सी तस्बी है जिसमें नाम जपते हैं। उस इन्सान ने कहा, बापू क्या नाम देते हैं? श्रोता ने कहा, बापू के दरबार में छूट है, कोई भी नाम जपो। तो उसने कहा कि मैं मुस्लिम हूं, पाकिस्तानी हूं, मुझे बैरखा मिल सकता है? वो आदमी मुझे पूछने आया। मैंने कहा, उसे बैरखा जरूर दो लेकिन दबाव मत डालना कि बैरखा घूमाओ, ये ही नाम लो। सब को अपनी स्वतंत्रता का आदर दो। फिर उसको बैरखा दिया तो पूछा कि मैं क्या नाम लूं? मेरे श्रोता ने कहा, कोई भी नाम लो। उस आदमी के जवाब को मैं सलाम करूं; उसने कहा, मैं भले मुस्लिम हूं पर बापू को पूछो, 'राम-राम' मैं जप सकता हूं? मात्रा में भेद हो सकता है पर सत्य तो अकेला ही होता है, उसमें भीड नहीं होती।

ना कोई गुरु, ना कोई चेला,
मेले में अकेला और अकेले में मेला

-मजबूरसाहब

मेरी रामकथा कोई धर्मशाला नहीं है, ये प्रयोगशाला है। यहां नव दिन प्रयोग होता है। मैं युवानों को कहता हूं, साल में आप मुझे नव दिन दो, मैं आपको नवजीवन दूंगा। जिन्होंने भगवद्‌कथा का रस पीया है वो बार-बार सुन रहे हैं। बार-बार मैं गा रहा हूं। जुवानलोग बार-बार सुनते हैं। मुझे लगता है, इक्कीसवीं सदी का ये सगुन है। ये कलियुग थोड़ा है? ये कथायुग है।

कल एक इन्टरव्यू में मुझे पूछा, मज़हब, धर्म, संप्रदाय में क्या अंतर है? मैंने कहा, संप्रदाय में आग्रह होता है, कभी हठाग्रह भी होता है। मज़हब आदर देता है। अध्यात्म में औदार्य होता है। प्रेमधर्म श्रेष्ठ है, 'रामहि केवल प्रेमु पिआरा।' मैं रात को सोच रहा था कि भगवान राम को क्या प्रिय है और कौन-कौन प्रिय है, कैसी परिस्थिति राम को प्रिय है? इस पर व्यासपीठ कभी बोलेगी। ये केवल मनोरथ है। शुभ मनोरथ करने में क्या बुरा है? ये माध्यम मेरी दृष्टि से पैंतीस पर्सन्ट तो पास हुआ है। कथा सुननी पड़ेगी।

तदपि कही गुर बारहिं बारा।
समुझि परी कछु मति अनुसारा।

गोस्वामीजी कहते हैं, मैंने मेरे गुरु से कथा सुनी और जब ये बात मेरे मन में बैठ गई तो मैंने गांठ बांध ली कि मैं इस कथा को भाषाबद्ध करूंगा। कथा सुनकर कोई बात आपके दिल तक पहुंच जाए तो पकड़े रहना। न बैठे तब तक सुनो, जब मौका मिले। अपना दायित्व भी निभाओ। प्रसन्नता से मौका मिले तब सुनो। सुनो और चुनो ये दो बात है। सोलह सौ इकतीस की साल, चैत्र शुक्ल नवमी, भौमवासर था। अयोध्या में रामजन्म का अवसर मनाया जा रहा था। उसी समय तुलसी कहते हैं, ये ग्रंथ मैंने प्रकाशित किया। रचना तो शंकर ने करी, संपादन तुलसी ने किया। जंगम मानसरोवर का रूपक बनाया। वो मानसरोवर तो बहुत दूर है, ये कथारूपी मानसरोवर चलता-फिरता है। उसके पास जाने की भी जरूरत नहीं है। तुम्हारे गांव आता है। ग्रंथ के रूप में तुम्हारे घर आता है। श्रवण के रूप में तुम्हारे घट में आता है। उस मानसरोवर में पवित्र जल है लेकिन तुलसी के मानसरोवर में शुद्ध और सिद्ध बानी है। उस मानसरोवर के तट पर हंस निवास करते हैं ऐसा सुना है। लेकिन 'मानस' के तट पर परमहंस जैसे लोग कथा का श्रवण करते हैं। हिमालय के मानसरोवर में कोई डूबे तो मर जाए। तुलसी के मानसरोवर में कोई डूबे तो तैर जाए। फिर चार घाट बनाए। पहला ज्ञानघाट, जहां शिव भवानी को सुनाए। दूसरा कर्मघाट, जहां याज्ञवल्क्य भरद्वाजजी को कथा सुनाए। तीसरा उपासनाघाट, जहां भुशुंडि गरुडजी को कथा सुनाए। चौथा दीनता का घाट, शरणागति का घाट, जहां गोस्वामीजी अपने मन को श्रोता बनाकर साधु-संतों को कथा सुनाते हैं। गोस्वामीजी ने शरणागति के घाट पर से कथा का प्रारंभ किया और हमें ले चलते हैं तीरथराज प्रयाग, जहां याज्ञवल्क्य महाराज भरद्वाजजी को कथा सुनाते हैं। उसके बाद वो शिवचरित्र सुनाते हैं। ये कथा कल गाई जाएगी।

मानस-मातृदेवो भव : ४

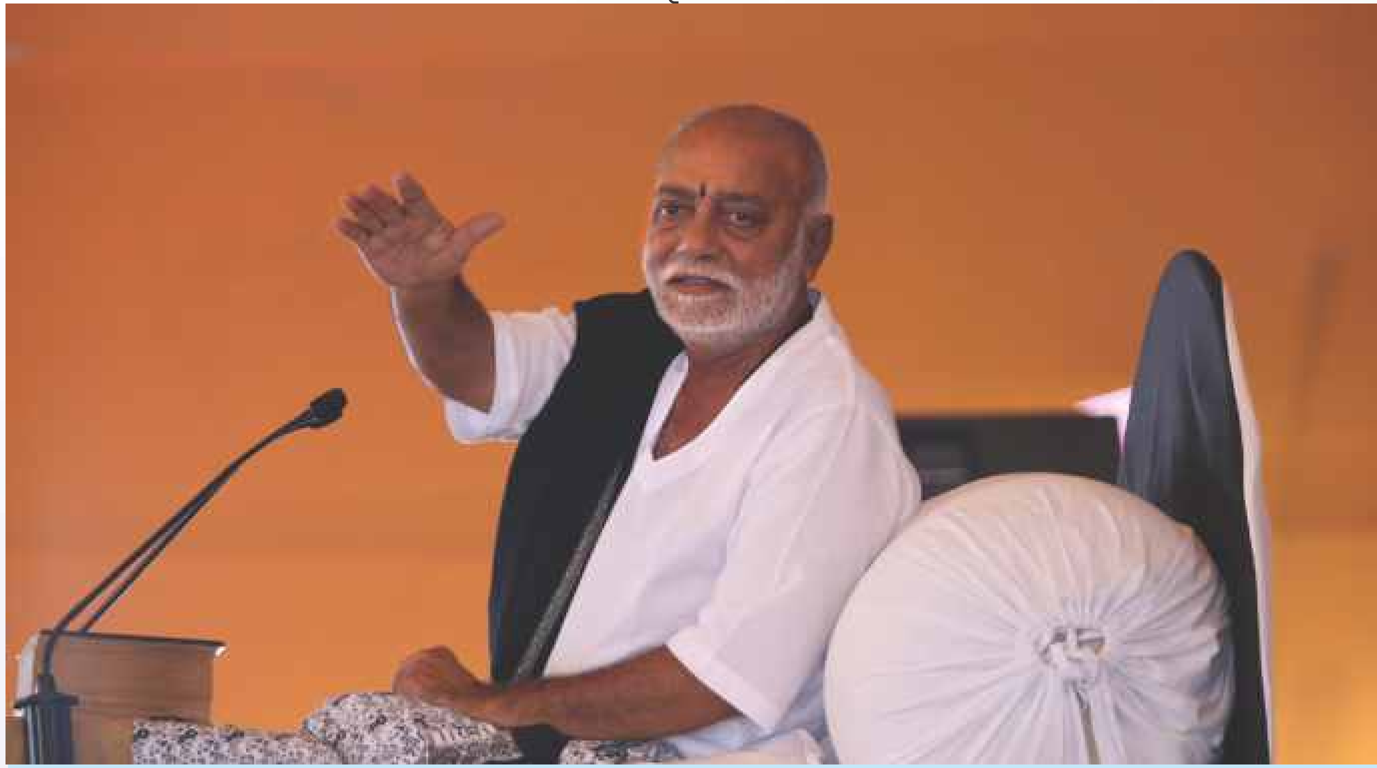

अपना प्रभाव सीमित होता है, माँ का प्रभाव अमित होता है

'मानस-मातृदेवो भव', ये एक सूत्र के रूप में लेकर कुछ सात्त्विक-तात्त्विक संवाद कर रहे हैं। उसीमें हम प्रवेश करे उससे पूर्व अभी जय वसावडा ने 'स्वच्छता अभियान' जो चल रहा है, विश्ववंद्य गांधीबापू की स्मृति में, जिसमें पूरा राष्ट्र जुड़ा है। और कहीं भी, किसीसे भी 'सर्वजन सुखाय सर्वजन हिताय।' जो सद्‌प्रवृत्ति होती है उसमें मेरी व्यासपीठ सदैव प्रसन्नता व्यक्त करती है। जयभाई आया ही है तो मैंने कहा, ये बात जय ही प्रस्तुत करे और आप तक ये पहुंचे। आपका वक्तव्य और रुद्री की प्रस्तुति दोनों सात्त्विक रहे। मेरी प्रसन्नता। बाप! खुश रहो।

निषेध कोईनो नहीं, विदाय कोईने नहीं,
हुं शुद्ध आवकार छुं, हुं सर्वनो समास छुं।

व्यासपीठ पर बैठनेवालों को हमारी परंपरा में 'व्यास' कहा जाता है। हमारे देहातों में भागवतकथा होती थी तो भट्टदादा, व्यासदादा, शास्त्रीबापा कहते थे। व्यास की व्याख्या हमारे शास्त्रों ने की है, 'नमोऽस्तुते व्यास विशालबुद्धे।' मैं एक प्रश्न पूछुं, एक गड्ढे में, डबरे में आप हाथी को नहला सकते हैं? भैंस को, गाय को, घोडे को रख सकते हैं? नहीं। उसमें मच्छर ही रहता है और मेढक रहते हैं। संकीर्ण विचारधारा है वहां बीमारियों के सिवा कुछ नहीं है। मुशायरा, लोकसंगीत, नृत्य सब का स्वीकार किया है व्यासपीठ ने। इससे कोई न कोई मेसेज जाए।

उसका फ़र्ज़ क्या है, वो अहले सियासत जाने।
मेरा मक्सद मोहब्बत है, जहां तक पहुंचे।

एक राजा को बड़ी उम्र में बेटी का जन्म हुआ। बेटी सुंदर है लेकिन विकलांग है। राजा की कन्या के वक्ष में तीन उभार थे। राजा ने सोचा, ये शुभ है कि अशुभ? सब जगह से पंडित आते-जाते थे। फिर कश्मीर से पंडित बुलवाया और

उसका नाम त्रिस्तनी रखा। फिर कहा कि ये कन्या अशुभ है। राज्य का नाश होगा। खबर नहीं, हमारे समाज में बेटी को क्यों अशुभ माना जाता है? मैं सालों से कहता हूं, बेटा जन्मे तब तो 'नंद भयो' करो ही लेकिन कन्या जन्म ले तब तो रास रचो। पंडितों ने कहा कि त्रिस्तनी की शादी करवाओ फिर बेटी और दामाद को देशनिकाल कर दो। या तो दूसरा उपाय ये है कि बेटी को मार दो। रानी ने विरोध किया कि राज्य को बचाने के लिए मैं बेटी को मरने नहीं दूंगी। शादी की बात मंजूर कर दी। तो प्रश्न ये उठा कि बेटी से शादी करे कौन?

उस नगर में दो भिक्षुक रहते थे। एक का नाम है अन्धक। दूसरे का नाम है कुब्जक। अन्धक अन्ध है। कुब्जक की कमर टेढ़ीमेढ़ी थी। दोनों भिक्षुक में दोस्ती हो गई। अन्धक का हाथ पकड़कर कुब्जक जाता है। लोग दयाभाव से भीख देते रहते थे। नगर में बात फैली कि इस लड़की से जो शादी करेंगे उसे राजा सवा लाख सोनामहोर देंगे लेकिन शर्त ये है कि शादी के बाद तुरंत उसे देशनिकाल किया जाएगा। कुब्जक ने अन्धक से कहा, तू शादी कर ले। सवा लाख सोनामहोर मिलेगी। हम देश के बाहर निकल जाएंगे। ये भीख मांगकर कभी हमारा पात्र नहीं भरेगा। अन्धक की शादी त्रिस्तनी से हुई। नियमानुसार जो देना था वो दिया और देशनिकाला भी दिया। उस राज्य की सीमा से बाहर निकलकर अन्धक, कुब्जक और त्रिस्तनी रहने लगे। अन्धक कुछ देखता नहीं था। मानवसहज आकर्षण के कारण त्रिस्तनी और कुब्जक निकट आते हैं। वो दोनों इतने आगे बढ़ गए तो सोचा कि हमारी बाधा है अन्धक। उसे मार दिया जाए तो सवा लाख सोनामहोर हाथ में रहेगी और हम चैन से जी पाएंगे। कथा ऐसी है कि कुब्जक एक सांप को काटकर उसके टुकड़े को पानी में उबालता है। फिर कडछा अन्धक को दे दिया। कुब्जक और त्रिस्तनी प्रेमालाप में बैठे हैं। साप जो ज़हरीला था उसकी बाष्प निकली इसके कारण अंधे की आंख में ऐसी चीज गई कि अंधा देखने लगा! उसने देखा कि अपनी पत्नी और कुब्जक भाव में बैठे हैं! तो उसको गुस्सा आया कि मेरे अंधेपन का तूने गेरफायदा लिया, धोखा दिया! एक लाठी उठाई और कुब्जक के कटिभाग पर जोर से प्रहार करता है! उसका कुबड़ टूट गया! वो सीधा हो गया! लेकिन कुब्जक लाठीप्रहार से ऐसे गिरा कि वो त्रिस्तनी के उपर गिरा और त्रिस्तनी का तीसरा स्तन दब गया और वो और रूपवती हो गई! कहानी पूरी। जिस माँ के चरणों में बैठकर हम 'मानस-मातृदेवो भव' गा रहे हैं वो माँ त्रिस्तनी नहीं है, त्रिस्तरीय है।

कोई भी मातृशरीर के त्रिस्तर है, इसीलिए शायद हम उसको स्त्री कहते हैं। पहली कन्या; दूसरी पत्नी और तीसरी माता। कन्या सत्य है, पत्नी प्रेम है और माँ करुणा है। इस कथा में मैं तीन सूत्रों के प्रति बलात् जा रहा हूं। कोई भी कन्या को हम 'कन्याकुमारी' कहते हैं ये सत्य है। छोटी-छोटी बेटियों में जो कला उभर रही है वो सत्य है। अपने बच्चों की कला को सहयोग दो। पत्नी प्रेम है। पति-पत्नी में प्रेम होना ही चाहिए। माँ करुणा है। इसीलिए रामकथा है माँ दुर्गा। तुलसी ने रामकथा के तीन स्तर बताये हैं। 'सुंदर सहज सुसील सयानी। नाम उमा अंबिका भवानी।।' तीन स्तर मातृशरीर के बताते हैं गोस्वामीजी। पहली सहज सुंदरता। सहजता बहुत बड़ी उपलब्धि है। भाई-बहन अपना शृंगार करे ये ठीक है। पुष्पवाटिका से फूल तोड़ो तो हिंसा है और चुनो तो शृंगार है। 'मानस' प्रमाण है। 'अरण्यकांड' में गोस्वामीजी लिखते हैं-

एक बार चुनि कुसुम सुहाए।

'मानस'कार कहते हैं, चित्रकूट में मंदाकिनी के तट पर एक बार प्रभु फटिक शिला पर बैठे थे और फूल चुना। जीवन की वास्तविकता को 'रामचरित मानस' ने पूरेपूरी कुबूल की है। इसीलिए ये ग्रंथ लेकर मैं घूम रहा हूं। राम ब्रह्म है। सीता पराम्बा है। लीला के लिए एक ब्रह्म पुरुष हुआ, एक ब्रह्म नारी हुई और दो बने। मानवलीला कर रहे हैं, तब ये स्वाभाविक है। दोनों अकेले हैं। लक्ष्मण फूल लेने गए हैं। उसी वक्त फूल लेकर राम जानकी को अपने पास बैठाकर कोई मर्यादा नहीं टूटती और अपने हाथ से जानकी का शृंगार कर रहे हैं। कोई पति-पत्नी शांति से, मर्यादा से बैठे, शृंगार की बात करे, मुस्कुराए तो क्या पाप है? मर्यादाभंग नहीं होनी चाहिए। लेकिन मानव स्वभाव ये भी है कि इन्द्र का बेटा जयंत, वो चित्रकूट में विचरण करने आया तो देखा कि सीता-राम निकट बैठे हैं। राम शृंगार कर रहे हैं। और जयंत की आंख में मेल आया कि ये क्या ब्रह्म? जयंत ने कौए का रूप लिया। दो व्यक्ति बैठे हैं। मर्यादाभंग नहीं हो रही है। एक-दूसरे का शृंगार करे उसमें जो चंचूपात करे वो कौआ ही हो सकता है, इन्द्र का बेटा ही क्यो न हो? 'उंच निवास नीच करतूती।' तुलसी तो मर्यादा के संत है। वाल्मीकि ने तो कहा, इन्द्र के बेटे ने जानकी के वक्ष पर चोंच मारी है। तुलसी कहते हैं, मेरी माँ जगदंबा है। उसके वक्ष पर कोई चोंच नहीं मार सकता। चोंच मारे तो भी चरण में ही, शरण में ही जाना चाहिए। फूल तोड़ना हिंसा और चुनना शृंगार है। सभी मानवीय लक्षण राम में दिखते हैं ईश्वर होते हुए भी। सीता के वियोग में राम कल्पांत करते हैं, पागल जैसे हो गए हैं! और जानकी भी ऐसी मानवलीला कर रही है। तो वास्तविकता को कुबूल करना चाहिए लेकिन हम डबरे के मच्छर बन गए हैं! संकीर्ण विचारधारा बन गई है! धर्म ने आदमी को मरा-मरा बना दिया है! मेरे तो हनुमानजी की कृपा, मेरे गुरु की कृपा और आपकी शुभकामना वर्ना यहां बैठकर फिल्म के गीत गाना, नृत्य देखना तो कई लोगों को तकलीफ़ होती है! धर्मजगत को तो खास! मुस्कुराना धर्म है, मुरझाना अधर्म है। सब से बड़ा स्वच्छता अभियान तो ये है कि हमारे अंदर का मेल निकले।

तो मातृशरीर के तीन स्तर। कोई भी अपने शरीर का शृंगार करे तो वो पाप नहीं है पर व्यक्ति की एक अपनी सहज सुंदरता होती है। बेकल उत्साही का एक शे'र है-

सादगी शृंगार बन गई।
आईनों की हार बन गई।

'रामचरित मानस' में लिखा है, 'मनु जाहिं राचेउ मिलिहि सो बरु सहज सुंदर साँवरो।' माँ भवानी ने जानकी को आशीर्वाद दिया कि तुम्हें ऐसा पति मिलेगा जो सहज सुंदर हो। तो विश्व के कोई भी मातृशरीर का पहला स्तर है कन्या। और कन्या होती है सहज सुंदर। 'सुंदर सहज सुशील', दूसरा स्तर सुशील। सुंदर शील; सुंदर स्वभाव। कन्या बड़ी हो जाए, किसी से ब्याहे तो सुशील बन जाए। और माँ बन जाए तो सयानी, समझदार। तो ये तीन स्तर है। और नारद ने जब माँ का नाम रखा तो भी तीन स्तर है वहां-

सुंदर सहज सुसील सयानी।
नाम उमा अंबिका भवानी।

उमा कन्यावाचक नाम है। यद्यपि शंकर भगवान 'मानस' सुनाते समय कभी-कभी 'उमा' संबोधन करते हैं; कभी भवानी, गिरिराज कुमारी, पार्वती भी कहते हैं। उमा है कन्यारूप। अंबिका है पत्नीरूप। भवानी है मातृरूप। तो कन्या, पत्नी, माँ; सहज सुंदर, सुशील, सयानी; उमा, अंबिका, भवानी ऐसी माँ दुर्गा उसकी कितनी पीठ है! हमारे देश में उनकी पीठों की महिमा है, शक्तिपीठ जिसे कहते हैं। जानकी और भवानी में फ़र्क नहीं, दोनों एक ही तत्त्व है। पावागढ से उतरे वो तो काली है लेकिन छोटी बेटियां जो सीढ़ी से या कहीं से उतरती है तो वो काली नहीं, निराली है। 'सीया राममय सब जगजानी।' सब में सीया का दर्शन करो। मेरा एक मनोरथ है कि नववें दिन की कथा में हम एक रास करवाएंगे। मेरे दुनियाभर के श्रोताओं जो लाईव टेलिकास्ट देख रहे हैं उनको टी.वी. के पास रास करवाना है। तब आप टी.वी. को गरबा समझना। एक महारास करेंगे। पूरा देश एक साथ रास करता है तो शायद हम ह्रास में से रास की और गति कर सकें। रास जम्मु-कश्मीर की भूमि से हो इससे बढ़ियां स्थान क्या हो सकता है? चाचर चोक में, गब्बर गोख में, मीनाक्षी मंदिर में रास होना स्वाभाविक है लेकिन यहां रास हो ये श्रेष्ठ है। मैं चाहूं कि माँ के दरबार से एक विश्वरास हो जाए।

आज रूखड का जन्मदिन है। जिस रूखड को मेरी व्यासपीठ गाती रही है। अंबाजी में कथा थी तो चौथे नोरते पर अचानक मेरे विचार में आया और मैंने गाया। फिर कथा भी गाई रूखड पर। 'रूखड बावा तुं हळवे हळवे...' रूखड पुरुषजाति में ही हो ऐसा नहीं है। कश्मीर की लल्लादेवी भी रूखड है। गंगासती, अमरमाँ और संत देवीदास ये सब रूखड है। रूखड एक पकी हुई अवस्था का नाम है। जूनागढ में 'मानस-रूखड' पे बोल रहा था तो एक भाई ने पूछा था कि रूखड का जन्मदिन तो चौथा नोरता है, उसकी मृत्युतिथि? रूखड को मौत होती ही नहीं। 'न हि तव आदि मध्य अवसाना।' माँ दुर्गा के लिए तुलसी ने कहा, हे माँ, न तेरा आदि है, न तेरा मध्य है, न तेरा अंत है। और 'मानस' में लिखा है, 'आदि अन्त को जासु न पावा।' अमरता को प्राप्त अवस्था का नाम है रूखड।

जानकीजी ने पुष्पवाटिका में जहां गौरी की स्तुति की है, वहां ये तीन स्तरों की ही बात आई है-

जय जय गिरिबरराज किसोरी ।
जय महेस मुख चंद चकोरी ।।

हिमाचलपुत्री, गिरिवरराज किशोरी ये कन्या। महेश के मुखचंद्र की चकोरी ये पत्नी। आपने कभी सोचा है, पार्वती शंकर के मुखचंद्र को चकोरी बनकर क्यों देखती है? एक बहन को भाई से प्यार है तो भाई के चेहरे को देखती है कि मेरा भाई उदास तो नहीं? बेटी अपने बाप का मुख देखेगी। एक पत्नी अपने पति के मुख की चंद्रचकोरी बन के देखती है। माँ तो केवल मुख ही देखती है। भगवान शंकर का

चेहरा चन्द्र है। और माँ नवदुर्गा का तीसरा रूप है चन्द्रघंटा, जो चांदनी को देखने की आदती है; शीतलता का पान करती है। माँ बच्चें को दूध पिलाती है तो मर्यादाभंग न हो इसीलिए साडी का पालव बच्चें पर ढांक देती है, तब भी माँ बच्चें का मुख ही देखती है-

जय गजबदन षडानन माता।
जगत जननि दामिनि दुति गाता।

तू कार्तिकेय और गणेश की माँ है। लेकिन तुलसी सावधान है। माँ जानकी सावधान है। दुर्गा की स्तुति करते समय कहती है, कोई ऐसा संकीर्ण अर्थ न करे कि तू केवल गणेश और पुरुषार्थ की माँ है। गणेश यानी विवेक और पुरुषार्थ यानी उद्यम। जिसका पुरुषार्थ विवेकमय होगा उसकी वो माँ है। तुलसी कहते हैं, तू जगत जननी है। आपने कभी सोचा है कि जगत किसको कहते हैं? दो सौ साल पहले कर्णाटक में संस्कृत के प्रकांड पंडित हुए जिसका नाम था पंडित देवेन्द्रजी। उसने एक दुर्गास्तुति लिखी। पंडित देवेन्द्रजी का अपनी स्तुति पर भाष्य है, उसमें उसने जगत की व्याख्या की, ज=जमीन, ग=गगन, त=तल। तुम केवल कार्तिक और गणेश की ही माँ नहीं हो। तुम पृथ्वी, आकाश और पाताल तीनों की माँ हो। 'जननी' शब्द साहित्य में केवल जनेता के लिए ही प्रयोग होता है; जिसने हमें जन्म दिया है। माँ किसीको भी कह सकते हैं। हम पूरी पृथ्वी को माँ कहते हैं, 'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरियसि।' 'रामायण' ने जननीवाली वास्तविकता को कुबूल कर के शब्दविवेक का दृष्टांत दिया है। राम के वनवास की खबर राम को मिल गई और राम कैकेयी के भवन गए पिता को मिलने। पिताजी बेहोश है। मंथरा षडयंत्र की खिलाड़ी खड़ी है और कैकेयी कोपभुवन में बैठी है। और राम ने माँ को प्रणाम किया। तो गोस्वामीजी कहते हैं-

सुनु जननी सोइ सुतु बड़भागी।
जो पितु मातु बचन अनुरागी।।

राम कहते हैं, हे जननी, वो पुत्र बड़भागी है जो माता-पिता के बचनों को अनुराग से निभाता है। कैकेयी बहुत पढ़ी-लिखी महिला है। भरत की माँ के रूप में वंदनीय है, कैकेयी देश की पुत्री के रूप में निंदनीय है। तुरंत कैकेयी सावधान हो गई कि राघव, तू मुझे जननी कहता है? जननी तो तेरी कौशल्या है और तेरे जैसा विवेकी पुत्र शब्दविवेक कभी चुकता नहीं! राम ने कहा, अयोध्या के राम का जन्म कौशल्या ने किया, इसीलिए उसकी जननी कौशल्या है लेकिन रामराज्य के राम की जननी तू है।

तो तीन स्तर में चल रही है पूरी मातृवंदना। जानकी माँ की स्तुति करती हुई बोली, हे माँ, तेरा शरीर जो है, तेरा स्फुरण होता है तो मानो बीजली कोंध जाती है। क्या अर्थ है? बीजली कोंध जाए ना तभी दर्शन के मोती पीरो लेना, 'वीजळीने चमकारे मोती परोववां।' बीजली जैसी कोंध साधक का वरण करती है कि तू ये छबी मेरी देख ले।

नहिं तव आदि मध्य अवसाना।
अमित प्रभाउ बेदु नहिं जाना।

हे पराम्बा, न तेरा आदि है, न मध्य है, न अंत है। तेरा प्रभाव अमित है। ध्यान देना मेरे भाई-बहन, सब के पास अपना प्रभाव होता है लेकिन सीमित होता है। ये अमित प्रभाव है माँ का। कई लोगों के पास कुल का प्रभाव होता है। आज का विज्ञान कहता है, संतान में बाप की आवाज़ आती है, माँ का चेहरा आता है और सुंदरता दोनों की मिलकर आती है। कई के पास धन का प्रभाव होता है। ये सब प्रभाव सीमित है। रूप का प्रभाव होता है। वो बुद्धकालीन गणिका, तथागत को भिक्षा देकर उसने कहा, मैं आपके साथ चलूं? बुद्ध ने कहा, आज तेरे साथ चलनेवाले बहुत है लेकिन साधु हूं, वचन देता हूं, तुझे जब भी जरूरत पड़ेगी, मैं चलकर तेरे पास आउंगा। क्योंकि रूप, विद्या, कला तेरा प्रभाव है लेकिन सीमित है सब। रूप का प्रभाव सीमित है। कोई भी अवस्था को मुस्कुराकर स्वीकार लो तो प्रत्येक अवस्था की एक शोभा होती है। कविवर रवीन्द्रनाथ के सफेद बाल और सफेद दाढ़ी उसके रूप में वृद्धि कर गई। बूढ़ापे की भी एक शोभा होती है। इसका स्वीकार करो। अस्वीकार अधर्म है। ओशो की दाढ़ी अच्छी लगती थी। भगतबापू कवि काग की दाढ़ी अच्छी लगती थी। सफेद बाल का भी अपना वैभव होता है। शब्द का, कला का, विद्या का प्रभाव होता है। लेकिन मुझे आप पूछे और 'मानस' के आधार पर कहना है कि सब से बड़ा प्रभाव क्या? तो 'देखेउ भजन प्रभाव'; भजन के प्रभाव के समान विश्व में कुछ भी नहीं है। माँ दुर्गा में अमित प्रभाव है।

भव भव बिभव पराभव कारिनि।
बिस्व बिमोहनि स्वबस बिहारिनि।।

भव का एक अर्थ होता है संसार। भव का एक अर्थ होता है उद्भव करना, प्रकट करना। माँ, तू संसार को प्रकट करती है। तू विभव संसार का संचालन करती है, पोषण करती है। और समय आने पर पराभव करती है। तू विश्व मोहिनी है। पूरे विश्व को प्रभावित करती है। माँ, जब तेरा मायारूप, अविद्यारूप आता है तो पूरा जगत तुझ में विमोहित हो जाता है। और हे जगदंबा, जब तेरा विद्यारूप आता है तो वो ही जीव इस भवकूप से बाहर निकल जाता है। हे पराम्बा, तू स्वबस विहार करनेवाली है। और आदमी कहीं भी विहार करे, कोई रोकटोक न करे तो खतरा नहीं है। स्वतंत्रता का अर्थ यदि समझा नहीं गया तो स्वतंत्रता के नाम पर स्वच्छंदता आ सकती है। पराम्बा के रूप में उसमें कोई बंधन नहीं है। हे माँ, तू खुद को वश कर के विहार करती है। उपर बैठी माँ हो कि घर में बैठी माँ हो, माँ सदैव कुल की मर्यादा, अपनी मर्यादा को वश कर के विहार करती है।

मोर मनोरथु जानहु नीकें।
बसहु सदा उर पुर सबही कें।।

हे माँ, तू मेरे मनोरथ को जानती हो, क्योंकि सब के हृदयरूपी नगर में तू वास करती है इसीलिए मेरे अंदर क्या है वो तू जानती है। लेकिन माँ, मेरे जो 'नीक' मनोरथ हो उसको ही पूरा करना। 'नीक' यानी अच्छे। देवदर्शन करो तो भगवान को कहना, मेरे अच्छे विचारों, अच्छी मांग की ही पूर्ति करना। एक शे'र ऐसा है कि मैं कुछ ऐसा न मांग लूं कि तेरे दर से मेरा रिश्ता टूट जाए।

खता मत कीजिए कि मैंने तुझसे मांगा है,
तेरे दर से मेरा ताल्लुक न टूट जाए।
-अंदाज़ दहेलवी

छोड़ूंगा नहीं ईमान जान दे दूंगा।
है तेरे खिलाफ़ मगर बयान दे दूंगा।।

परमात्मा कहता है, तू मेरी बात मान ले तो जमीन तो दे ही दी है, आसमान भी दे दूंगा। भगवान के पास कभी लाभ की मांग मत करना, शुभ की मांग करना। सभी लाभ शुभ नहीं होते लेकिन एक छोटा-सा शुभ हो उसमें लाभ ही होता है। माँ वरदायिनी है, उसके भी दो अर्थ तलगाजरडी दृष्टि करती है। पहला, वरदान देनेवाली। दूसरा, वर यानी श्रेष्ठ, तू श्रेष्ठ देती है। जानकी कहती है, तू वरदायिनी हो। मुझे भी श्रेष्ठ वर चाहिए राम के रूप में। आज मेरे मन में चल रहा था कि माँ को हम 'मातृदेवो भव' क्यों कहते हैं? तब मेरे मानस में 'महाभारत' घूम रहा था। 'महाभारत' ने 'मातृदेवो भव' को जो महत्त्व दिया है तो वो ही बात मैं कहूं। 'महाभारत'कार कहते हैं, माँ को हम इसीलिए 'मातृदेवो भव' कहते हैं कि माँ अपने संतान के आठ मनोरथ की पूर्ति करती है। क्योंकि माँ है अष्ट भुजावाली। मेरा थोड़ा अनुभव है। मेरी माँ है 'रामचरित मानस।' उसने कई मनोरथ पूरे किए हैं मेरे। संकल्प नीक हो, विश्वमंगल की भावना हो तो 'मानस' मनोरथ पूरा करता ही है। गोस्वामीजी ने इसको कालिका कहा-

रामकथा ससि किरन समाना।
संत चकोर करहिं जेहि पाना।।
महामोहु महिषेसु बिसाला।
रामकथा कालिका कराला।।

नवोनव दुर्गा मुझे 'मानस' में दिखती है। 'कालिका' शब्द दोनों और से पढ़ें तो 'कालिका' ही पढ़ा जाता है। ये माँ ही रहती है। दूसरा रूप नहीं धारण करती। ये माँ कैलास से

उतरी है। तो अष्ट भुजावाली माँ, आश्रित निर्दोष बन के माँ के चरणों में गिर जाए तो ये मनोरथ पूरा करती है माँ।

रामजन्म की कथा के क्रम में आगे बढें। लेकिन रामजन्म तब ही होता है जब शिवकथा आती है। शिव है विश्वास, भवानी है श्रद्धा। जब तक साधक के हृदय में श्रद्धा और विश्वास संलग्न नहीं होते तब तक राम प्रगट नहीं होता। इसीलिए याज्ञवल्क्य ने भरद्वाजजी के सामने शिवचरित्र सुनाया। 'मानस' में पांच चरित्र है। पहला रामचरित्र; उसी में सीता का चरित्र। दूसरा शिवचरित्र; उसी में उमाचरित्र। तीसरा भरतचरित्र। चौथा हनुमंतचरित्र। पांचवां कागभुशुंडिचरित्र। ये पंचचरित्रामृत रामकथा में है। भरद्वाजजी ने कथा राम की पूछी और याज्ञवल्क्य ने प्रारंभ किया शिवचरित्र से। ये भी सेतुबंध किया। शिव है द्वार राममंदिर का। शिवतत्त्व के बिना रामतत्त्व जाना नहीं जाएगा। ये था समन्वय।

एक बार शिव दक्षकन्या सती को लेकर कुंभज ऋषि के आश्रम में जाते हैं। कुंभज ऋषि ने कथा सुनाई तो शिव ने बहुत ध्यान से सुनी लेकिन सती ने ध्यान नहीं दिया। उसको लगा कि ये कुंभज का जन्म घडे में से हुआ है और राम की कथा तो सागर जैसी है। ये क्या रामकथा गायेगा? तो सती ने सुना नहीं और उसको सुख भी नहीं मिला। शिव ने कथा सुनी तो सुख भी मिला। वक्ता श्रोता परायण होना चाहिए और श्रोता वक्तापरायण होना चाहिए। मैं आपके लिए जो 'श्रावक' शब्दप्रयोग करता हूं उसका अर्थ ये ही है। यहां वक्ता श्रोतापरायण होगा। कथा पूरी हुई। अधिकारी समझकर शिव ने कुंभज को भक्ति दी। कुछ दिन वहां रुके फिर लौटे।

दंडकवन से निकले तो त्रेतायुग था। उस समय रामजी सीता के वियोग में रो रहे थे और शिव-सती वहां से निकले। राम-लक्ष्मण जानकी की खोज में ललित नरलीला करते हुए निकलते हैं। शिवजी राम के दर्शन कर के भाव में डूब जाते हैं और मुख से शब्द निकला, 'हे सच्चिदानंद, हे जगपावन!' सती को लगा कि ये आदमी अपनी पत्नी के वियोग में रो रहा हैं और मेरे पति उसे सच्चिदानंद कहते हैं? यहां कहां सत् है? कहां चित्त है? और आनंद कहां है? भवानी के संदेह को अंतर्यामी शिव जान गए और कहने लगे, सती, आपका नारी स्वभाव है। आप ऐसा संशय न करे। जिसकी कथा कुंभज ने सुनाई, वो ही मेरे परमात्मा, इष्टदेव राम है। वो लीला कर रहे हैं। लेकिन सती मानी नहीं। शिवजी ने कहा, मेरे कहने पर आपका संदेह न जाता हो तो आप ऐसा करे, मैं इस वटवृक्ष की छाया में बैठा हूं। आप जाकर अपनी दृष्टि से परीक्षा करो कि ये ब्रह्म है या मेरा भ्रम है? बुद्धिप्रधान व्यक्ति परीक्षा के बिना नहीं मानती। सती तो दक्ष की कन्या है। दक्ष मानी बहुत बुद्धिमान। ब्रह्म परीक्षा का विषय है ही नहीं, ज्यादा से ज्यादा समीक्षा का विषय है अथवा तो मूल में ये प्रतीक्षा का विषय है। जैसे कृष्ण दवे कहता है, 'ए आवशे, ए आवशे, ए आवशे।' सती बौद्धिक होने के नाते परीक्षा करने जाती है। शिव ने सोचा, मेरे कहने पर सती नहीं मानी, विधि विपरीत हो गया लेकिन मैंने तो प्रामाणिक प्रयत्न कर लिए।

होइहि सोइ जो राम रचि राखा।
को करि तर्क बढ़ावै साखा।।

शिव हरिनाम जपने लगे। सती राम के पास सीता का रूप लेकर जाती है। भगवान सती को पहचान लेते हैं। प्रणाम करते हैं, आप अकेली क्यों घूमती हैं? मेरे पिता शंकर कहां है? सती को लगा कि मैं पकड़ी गई! भगवान ने व्यापकता दिखाई। फिर सती शिव के पास आती है। शिव ने पूछा, परीक्षा कर ली आपने? राम ब्रह्म है या भ्रम है? अब सती झूठ बोलती है कि मैंने कोई परीक्षा नहीं की। शिवजी ने आंखें बंद कर के ध्यान में देखा तो सती ने जो-जो किया सब देख लिया लेकिन बोले नहीं। महादेव तो उदार है। शिवजी ने मन ही मन सोचा कि जिस सीता को मैं माँ कहता हूं, मेरी पत्नी सीता बन गई तो अब मैं उसके साथ गृहस्थ जीवन कैसे जीउं? भक्ति कुंठित हो जाएगी। इतने में अंदर से प्रेरणा हुई और एक संकल्प लिया कि सती का ये शरीर जब तक रहेगा, मेरा और उसका संबंध नहीं रहेगा। विश्वनाथ कैलास पहुंचे। भवन में नहीं गए और बाहर बिराजमान होकर सहज स्वरूप का अनुसंधान किया और शिव को अखंड समाधि लग गई। शिव समाधि में, सती उपाधि में!

सत्तासी हजार साल के बाद शिव आंख खोलते हैं। सती गुनहगार की तरह आती है। भगवान शंकर ने सती को सन्मुख आसन दिया, जो वामभाग में बैठने की अधिकारिणी थी। शिव ने कथा शुरू कर दी ताकि उसका मन व्यथा से दूर हो। दक्षराजा यज्ञ कर रहे थे। सब देव जा रहे हैं। सती ने प्रश्न पूछा कि ये सब कहां जा रहे हैं? तो शिव बोले, आपके पिता के घर यज्ञ है। मेरे साथ उसको मुश्किल है तो आपको भी नहीं बुलाया है। शिवजी ने समझाया। सती ने जिद्द की और शिव ने कहा, जाओ। नंदी को लेकर सती पिता के घर जाती है। पिता ने, बहनों ने सती का अपमान किया। आखिर में सती दक्षयज्ञ में जलकर भस्म हो जाती है और दूसरा जन्म हिमालय के घर शैलपुत्री के रूप में होता है। सती पार्वती बन गई। कन्या जन्मी और आनंद हो गया हिमाचल में। और एक दिन नारदजी को कहा, मेरी बेटी का नामकरण करो। और हिमालय ने कहा, बापजी, जरा बताओ ना मेरी बेटी को पति कैसा मिलेगा? नारदजी ने कहा, आपकी बेटी को ऐसा पति मिलेगा जो नग्न, दिगंबर रहता होगा; भस्मांग होगा; भिक्षा मांगकर पेट भरता होगा; अगुन होगा; उसके माता-पिता ही नहीं होंगे; उदासीन वृत्तिवाला होगा। माँ-बाप कांप गए कि इतनी सुंदर बेटी और ऐसा वर मिले? सती समझ गई, जिस वर की बात बाबा बता रहे हैं वो तो महादेव के सिवा कोई हो ही नहीं सकता। नारद ने माता-पिता को कहा, तुम्हारी बेटी तप करे और यदि शंकर भगवान मिल जाए तो तो दूषण भूषण हो जाए। सती तप करती है। फिर आकाशवाणी होती है, तुम्हें शिव मिलेंगे।

शंकर भगवान ध्यान में बैठ गए। तारकासुर नामक एक राक्षस उत्पन्न हुआ, जिसने समाज को बहुत पीड़ित किया। देवता लोग पीड़ित होकर ब्रह्मा के पास गए। ब्रह्मा ने कहा, तारकासुर को शंकर का पुत्र ही मार सकता है। शंकर की समाधि तुड़वाओ। देवता खुश हो गए कि शंकर की शादी हो। पुत्रजन्म हो और तारकासुर मरे। हमारे भोग सलामत रहे। कामदेव को भेजा। भगवान की समाधि में विक्षेप हुआ। काम को जला दिया। देवता आए। प्रार्थना करने लगे तो शंकर भगवान ने कहा, आप बड़े स्वार्थी हैं! आप देव है, मैं महादेव हूं! काम क्या है वो बताओ। ब्रह्मा ने कहा, सब देव मेरे पीछे पड़े हैं कि देवताओं में किसी की शादी ही नहीं होती! तो मैंने कहा, चलो शंकर को प्रार्थना करे, वो ब्याहे। शंकर समझ गए कि मुझे तो ब्रह्म का आदेश है इसीलिए मैं तैयार हूं। शादी की हां कर दी।

बारात सजी। शंकर भगवान ने गणों को कहा, ऐसा करो कि मेरी जटा को मुकुट बना दो। सांप के गहने बना दो। भस्म का लेपन किया। नंदी की सवारी। हाथ में त्रिशूल लेकर सवारी निकली। मृगचर्म कटिभाग पर लपेटा और देवता लोग मजाक करने लगे कि क्या होगा? गणों ने मंत्रजाप किया कि दुनिया के सारे भूत-प्रेत आए। भूत है हमारे कमजोर विचार। यही हमारे शिवरूप को घेरे हुए हैं। बारात हिमाचलप्रदेश पहुंची है। शिवजी का स्वरूप देखकर स्वागत समितिवाले बेहोश हो गए! महादेव महाराणी मैना के द्वार पर आए हैं। मैना अपनी अष्ट सखियों के साथ दामाद का परिछन करने आई है। शंकर का रूद्ररूप देखकर हाथ में से आरती की थाली गिर गई! मैना बेहोश हो गई! निजमंदिर में सखियां मैना को ले गई। हिमाचल, सप्तर्षि, नारद को खबर मिली। सब मैना के पास गए। नारद ने समझाया कि ये आपकी बेटी नहीं, आपकी माँ है। हे देवी, आपकी बेटी जगत की माँ है। आप सब का सौभाग्य है कि आपके यहां आई। सब पार्वती को वंदन करने लगे। हमारे घट में ही पार्वती होती है। हमारे घट के बाहर खड़े हैं कोई शिवतत्त्व लेकिन नारद जैसा गुरु परिचय न करवाये तो सब भ्रांति में रह जाते हैं। महादेव की सवारी निकली। पार्वती को मंडप में लाया गया और शिव ने जब पार्वती का पाणिग्रहण किया तो आकाश में से पुष्पवृष्टि होने लगी। हिमालय अपनी बेटी को बिदा देता है। पार्वती पतिगृह चली। हिमालय ढीला हो गया क्योंकि बेटी की बिदाई हो रही है। भवानी कैलास पहुंची। शिव-पार्वती का नूतन विहार चला। पार्वती ने पुत्र को जन्म दिया। छः मुखवाले कार्तिकेय पुरुषार्थ का प्रतीक है। उस कार्तिकेय ने तारकासुर को निर्वाण दिया। देवता प्रसन्न हुए। ऐसे महादेव एक बार कैलास के वटवृक्ष के नीचे सहजासन में बैठे हैं। पार्वती शिव के पास आती है। वामांग बिराजती है। और भगवान शंकर रामकथा का प्रारंभ करते हैं।

सब के पास अपना प्रभाव होता है लेकिन सीमित होता है। ये अमित प्रभाव है माँ का। कई लोगों के पास कुल का प्रभाव होता है। कई के पास धन का प्रभाव होता है। ये सब प्रभाव सीमित है। रूप का प्रभाव होता है। शब्द का, कला का, विद्या का प्रभाव होता है। लेकिन मुझे आप पूछे और 'मानस' के आधार पर कहना है कि सब से बड़ा प्रभाव क्या? तो 'देखेउ भजन प्रभाव' ; भजन के प्रभाव के समान विश्व में कुछ भी नहीं है। माँ दुर्गा में अमित प्रभाव है।

परमतत्त्व निरंतर हमारी सेवा में हाज़िर रहता है

'मानस-मातृदेवो भव', जिसकी 'रामचरित मानस' को आधार बनाकर के और संदर्भों को गुरुकृपा से जो स्मरण में आता है उसे जोड़ते हुए आपसे मेरा संवाद चल रहा है। कुछ आगे बढ़ें इससे पूर्व एक जिज्ञासा है, 'बापू, जयसीयाराम। सत्य और असत्य का भेद समझनेवाला और समझानेवाला इस पृथ्वी पर सब से पहला कौन?' मेरी दृष्टि में अच्छी जिज्ञासा है। इस पृथ्वी पर सत्य और असत्य का भेद समझनेवाला और समझानेवाला सब से पहला कोई है तो वो है सत्य। सत्य ही समझता है कि सत्य क्या है और असत्य क्या है? सूरज समझता है कि मेरा न होना ही अंधेरा है। सत्य समझता है, मेरा न होना ही असत्य है। सत्य के सिवा सत्य की परिभाषा कोई नहीं कर सकता। मोरारिबापू के बारे में आप कुछ कहे ना तो आदर होगा तो अहोभाव व्यक्त करोगे। आपके मन में कुछ ऐसा होगा तो आप अधोभाव व्यक्त करोगे। यदि व्यक्ति निर्लोभी, निष्पक्ष, निर्वैर, निर्भय है तो वो ही अपने बारे में अपना मूल्यांकन दे सकता है। इस बारे में रावण मुझे बहुत सीख देता है। मैं दशानन से बहुत सीखता हूं। इस दुनिया में सब से सीखना मिलता है, यदि आप सीखना चाहे। खिड़कियां खुली रखो।

कल प्रदीप पूछ रहा था कि हम दो मिनट शांत हो जाए तो वो आता है? मैंने कहा, परमतत्त्व कभी होली-डे पर नहीं होता। वो निरंतर अपनी सेवा में हाज़िर रहता है। हम उसे मौका नहीं देते हैं। हमारी खिड़कियां बंद है। वो राशिद का शे'र जो मुझे बहुत प्रिय है-

राशिद किसे सुनाउं गली में तेरी गज़ल,
उनके मकां का कोई दरीचा खुला न था।

द्वार खुले नहीं है हमारे। ये तो सूरज हमारे यहां बारह घंटे के बाद अस्त होता है, चला थोड़ा गया? वो दूसरी जगह होता है। चौबीस घंटे भगवान भास्कर हमारी सेवा में रहता है। जरा दरवाजा खुला रखो। माँ चौबीस घंटों हमारे द्वार पर दस्तक दे रही है। हमारे किवाड़ बंद है। बाप! मौका मिल जाए। मेरा कुछ अनुभव ऐसा भी है कि आप कोई ग्रंथ न भी पढ़ो, केवल खिडकियां खुली रखो तो स्वयं ग्रंथ तुम में अवतरित होगा। जैसे ऋषियों को ऋचा उतरी होगी; पयगंबरसाहब को आयातें उतरी होगी; किसी को कोई सूत्र उतरा होगा; कोई कवि को रचना उतरती होगी। कल मैंने कहा, कोई कलम मुझे अनुष्ठानी कलम लगती है। वो स्याही से नहीं लिखते। कुछ लोग कभी आंसू से, कभी रक्त से, कभी पसीने से लिखते हैं। जुबान एक अनुष्ठान है। एक शे'र है-

बोलकर हर लफ़्ज़ का मातम करें।
इससे तो बेहतर है बातें कम करें।

मुझे गुरुकृपा से महसूस होता है कि कुछ अवतरण जो भीतर से उपर आता है या तो उपर से उतरता है। चारों ओर से घेरे रहते हो आप! चारों और से भरा हुआ एक सन्नाटा होता है। कुछ अंदर से आए। कुछ उपर से आए। कुछ उधर से आए। आदमी उसे आवकार दे। खिड़कियां खुली रखे तो सब में उतरता है। व्यक्ति के पास ऐसे अनुष्ठानी विचार हो, अनुष्ठानी लेखनी हो, रचना हो तो ये उतरता है। जल्दी न करे हमारे लिए यदि कोई कुछ कहे चढ़ा-चढ़ाकर या अधोभाव से तो। मूल्यांकन हमारे अतिरिक्त कोई नहीं कर पाता। हम अपना मूल्यांकन करे तब चार वस्तु याद रखना। पहली, चित्त निर्लोभ होना चाहिए। दूसरी, चित्त निर्वैर होना चहिए। तीसरी, चित्त निष्पक्ष होना चाहिए। चौथा, चित्त निर्भय होना चाहिए।

तो मैं कह रहा था, रावण इस बारे में मदद कर रहा है। दो ग्रीव है 'रामायण' में। सुग्रीव और दशग्रीव। रावण के सामने जब अंगद कहने लगा कि दशानन, मैंने कई रावण के बारे में सुना है, उसमें तू कौन-सा है? एक रावण तो सहस्रभुज कि भुजा छेदने गया तो उसको पकड़कर के बांध दिया था वो तू है? रावण ने कहा, नहीं, ये घटना जरूर है पर मैं वो नहीं हूं। बलि को बांधने पाताल में गया था और पाताल में रावण को बंदी बनाकर रखा था वो रावण तू है? रावण ने कहा, नहीं। मजाक उड़ाते हुए अंगद ने रावण की सभा में कहा, एक रावण के बारे में कहने में मुझे बड़ी लज्जा आ रही है। एक रावण मेरे बाप वालि की बगल में छः महीने तक दबाये रखा था। इनमें से तू कौन-सा रावण है? रावण ने कहा, तू सामनेवाले पक्ष का है, इसीलिए तूने रावण की खोज अपने ढंग से की। मेरे इन्द्रजित, कुंभकर्ण को पूछ तो वो कुछ और बयां करेगा कि रावण ये है। विपक्ष से भी सच्चा रावण नहीं दिखता और निजपक्ष से भी रावण ठीक से नहीं दिखता। रावण का मूल्यांकन तो रावण स्वयं करेगा और चार वस्तु से मुक्त होकर। निर्वैर होना, निर्भय होना, निष्पक्ष होना, निर्लोभी होना। रावण ने कहा, मैं वो रावण हूं जिसने महादेव के कैलास को उठाया था। कहने का मतलब है, भीतर का रावण तो है शिवभक्त। असली रावण तो संस्कृत स्तोत्र का कर्ता है, सर्जक है, कवि है, बलवान भी है और उपासक भी है। असली रावण कौन है? रावण कहता है, असली रावण वो है, कभी मैं निर्जन गुफा में बैठकर हाथ की अंजलि जोड़कर शिव-शिव रटा करूं। उसके अतिरिक्त कुछ न करूं, कुछ न कहूं। इसका मतलब है, रावण कहता है, सोने की लंका सुख का साधन नहीं है।

मैं अपने को बीच में डालकर ये समझाने की सरलता कर रहा हूं। अहोभाव होगा तो आप कहेंगे, ओहो, बापू की कथा तो गजब! अहोभाव नहीं है तो आप कहेंगे, ठीक है! आप उदासीन होंगे तो कुछ बोले नहीं पर अंदर तो भाव होता ही है। मेरे बारे में मुझे बोलने दो। मैं भी अपने आप को तभी ठीक पेश कर पाउंगा जब मैं निर्लोभी हूं। न कोई पद-प्रतिष्ठा, न प्रमाणपत्र चाहिए तभी। आप से कोई प्रलोभन होगा तो व्यक्ति आपको ठीक से नहीं पेश करेगा। कोई भय होगा तो भी नहीं कर पाएगा। कहीं राग-द्वेष से युक्त हो, तटस्थ नहीं होगा तो भी अपने आप को पेश नहीं कर पाएगा। और वैर हो तो भी पेश नहीं कर पाएगा। अपने बारे में कोई आत्मकथा लिखे तो वो कुछ भी लिख सकते हैं लेकिन मुझे कोई पूछे तो विनम्रता से कहूं कि चार बात को ध्यान में रखकर ही आत्मकथा लिखना। सत्य ही पहला है इस दुनिया में, इतना ही नहीं, पहले से था। अनादिकाल से जो था, जो है और भविष्य में रहेगा। कभी ओशो ने कहा था, इस संसार में अंधेरा है ही नहीं। प्रकाश के अभाव का नाम अंधेरा है। भजन का अभाव है इसीलिए जगत मिथ्या है। लेकिन जिसने भजन के सत्य को जान लिया है वो मिथ्या नहीं कहेगा, थोड़ी जीवंत बात सपना कहेगा। अथवा वो कहेगा, जगत मिथ्या है कि सपना मुझे कुछ नहीं कहना। भजन नहीं है तो क्लेश नहीं जाएगा।

उमा कहउँ में अनुभव अपना।
सत हरि भजनु जगत सब सपना।

निज अनुभव अब कहउँ खगेसा।
बिनु हरि भजन न जाहि कलेसा।।

कागभुशुंडि कहते हैं, गरुड, जगत सत्य है कि मिथ्या, खबर नहीं। मैं तो इतना ही जानता हूं, ये भ्रान्ति पतंजलिवाले पंचक्लेश बिना हरि भजन जाएगा नहीं। राम है सत्य, कृष्ण है प्रेम, शिव है करुणा।

कर्पूरगौरं करुणावतारं संसारसारं भुजगेन्द्रहारं...

सत्य होता है कुंआरा। सत्य किसी से गठबंधन नहीं करता। प्रेम ब्याहा हुआ है। ‘सब नर करहि परस्पर प्रीति।’ मित्र मित्र से, पति पत्नी से प्रेम करता है। गुरु-शिष्य दो चाहिए। जीव और शिव दो चाहिए। आत्मा और परमात्मा चाहिए प्रेम के लिए। वहां दो अपेक्षित है। तत्त्वत: वह एक ही है। जिसे प्रेमाद्वैत कहते हैं। मेरी व्यासपीठ का दर्शन है प्रेमाद्वैत। करुणा सदा अमर्त्य वृद्धा होती है। वृद्धावस्था के बाद आती है मृत्यु लेकिन करुणा अमर्त्य है पर है पकी हुई। करुणा शंकर है। भोलेनाथ परिपक्व है। वह बूढ़ा है। उसका बैल भी बूढ़ा। भस्म का वस्त्र है। सर्प के आभूषण। ये महादेव परिपक्वता का प्रतीक है।

सत्य है एकवचन, प्रेम है द्विवचन, करुणा है बहुवचन। गांधीबापू पहले तो कहते थे, ईश्वर सत्य है। लेकिन पूर्ण जाना तो कहते हैं, सत्य ही ईश्वर है। जिसस कहते हैं, ईश्वर प्रेम है। लेकिन पूरा जाना तो कहते हैं, प्रेम ही परमात्मा है। यद्यपि बुद्ध ईश्वर को नहीं मानते। आत्मा तक को नहीं मानते फिर भी करुणामूर्ति तो बुद्ध है। आत्मा जैसा कुछ है, करुणा जैसा कुछ है तो वो करुणा के रूप में आता है। पर प्रज्ञा परिपक्व हुई तो कहते हैं, करुणा ही ईश्वर है। ‘महाभारत’ कहता है, माँ को देव इसीलिए मानना, माँ ‘मातृदेवो भव’ के रूप में पूजी गई क्योंकि माँ अष्ट भुजावाली है और आठ भुजा से ये साधक की पूर्ति करती है। माँ अष्ट वस्तु से हमें भर देती है-

धनं प्रजा: शरीरं लोकयात्रां धर्मं स्वर्गं ऋषिं पितृम्।

माँ ये पांच की रक्षा करती है। ‘मातृदेवो भव’ सूत्र को समझने के लिए हमें मदद करेंगे ये व्यास के सूत्र। हमारे घर में हमारे पुरुषार्थ और प्रारब्ध के कारण जो भी धन है उसकी रक्षा केवल मातृशक्ति ही करती है। स्वाध्याय का विस्तार करनेवाले पांडुरंग दादा से मैंने सुना था, हमारे यहां धन कमाता है पुरुष फिर हमारे घर में जो स्त्री है उसे धन दे देते थे और धन का विनियोग केवल मातृशरीर करती थी। ऋषिकाल में ऋषि तो कृषि भी करते थे। इस विचार को लेकर विनोबाजी भी कृषि करते थे। तो ऋषि कृषि द्वारा जो धनोपार्जन होता था वो अपनी ऋषिपत्नी को दे देते थे। ऋषि को लोकयात्रा, वेदयात्रा में धन की जरूर पड़े तो जो मातृशरीर घर में थी उसीसे धन मांगते थे। भगवान करे, किसी पर विपत्ति न आए लेकिन मातृशरीर घर में हो तब माता ने कुछ पैसे बचाए होते हैं वह निकाल कर देती है अथवा ज़ेवर बेचने को दे देती है। नरसिंह मेहता के पिता के श्राद्ध की बात मैं करता हूं तब महेता की पत्नी माणेक ही कहती है कि अपने घर में सोने की बाली है, उसे बेचकर हम श्राद्ध करेंगे। राम को धन की जरूरत पड़ी कि केवट ने नौका में बिठाया तो उतराई के रूप में कुछ देना चाहिए तो जानकीजी अपनी प्रिय मुद्रिका राम को दे देती है। मैं युवानो को बिनती करूं, आपके मोबाईल में सब ग्रंथ आते हैं, उसमें मौका मिले तो ‘महाभारत’ पढ़ो। न समझ में आए तो किसी पहुंचे हुए फ़कीरों से सुनो। ‘मानस’ की चौपाईयां पढ़ो। केवल सोना, रूपया ही हमारा धन नहीं है। मीरां को पूछो-

पायोजी मैंने रामरतन धन पायो।

रामरूपी रतन का जतन किया मीरांबाई ने, मातृशरीर ने। मेरे तुलसी को पूछो, ‘मुनि जन धन संतन सिव प्राणा।’ रामतत्त्व ये धन है। वृंदावन और व्रजवासी तो यही कहते हैं-

हमारो धन राधा, राधा, राधा, राधा,
परम धन राधा, राधा, राधा, राधा।

तो ‘महाभारत’ कहता है, धन की रक्षा माँ करती है। विपत्तिकाल में वह खड़ी न रहे तो समझना वो अवसर चुक गई! प्रजा का रक्षण माँ करती है। प्रजा मानी बाल-बच्चे। कितनी मातृशरीर राष्ट्र की प्रजारक्षा के लिए आगे आई है! झांसी की रानी माँ है। भारतीय मूल धारा को नुकसान होने की तैयारी थी तब एक माँ ने लौरी सुनाई शिवाजी को और प्रजारक्षण के लिए आगे आई। ‘मातृदेवो भव’ सूत्र को समझने में ‘महाभारत’ कितना बल दे रहा है!

मेरे पास एक आदमी आया कि ‘जलारामबापा ने अपनी पत्नी दे दी। क्या कहते हैं आप इसके बारे में?’ भारत क्या नहीं कर सकता? गुजरात क्या नहीं कर सकता? सौराष्ट्र क्या नहीं कर सकता? दे सकता है। साधु ने वीरबाई माँ की मांग की तो वीरबाई माँ दे दी। मुझे आश्चर्य नहीं है। फिर भी उस महाशय को मैंने कहा कि ये बात आपको उतरती नहीं है तो मूल बात ऐसी है कि ईश्वर साधु का वेश लेकर आया था। वो साधु गांव की सीमा तक वीरबाई माँ को लेकर गया। सीमा के बाद साधु ने कहा, मैं आता हूं। फिर भगवान गया तो गया, वापस नहीं आया। और वीरबाई माँ रोती रही कि मेरे समर्पण में कमी रह गई कि ये साधु मुझे छोड़कर चला गया? अब मैं वीरपुर जाउं कि क्या करूं? दो-चार गोपबालकों ने पूछा कि माँ तू क्यों रो रही है? लोगों ने वीरपुर जाकर बापा को कहा, माँ रो रही है। और फिर धामधूम से माँ को लाते हैं। तो उस महाशय को मैंने कहा कि नारी का एक अर्थ होता है भक्ति। ये बनी घटना आपके दिल में न उतरती हो तो इस तरह समझो कि बापा ने अपनी भक्ति साधु को दे दी। ईश्वर साधु के रूप में आया था वो भक्ति लेकर गया लेकिन सीमा तक जाते ही उसने सोचा ये पहुंचे हुए भक्त की भक्ति को मैं नहीं संभाल पाउंगा। भगवान भाग गया! भक्त को घर लाओ तब ‘आजनी घडी ते रळियामणी।’

तो मातृशरीर रक्षा करती है प्रजा की। इसीलिए उपनिषद ने पहला सूत्र ‘मातृदेवो भव’ लिखा। पिता का स्थान दूसरा। आचार्य का स्थान तीसरा। अतिथि का अर्थ है परमात्मा, वो चौथे स्थान पर। कच्छ में पडोशी राष्ट्र ने बम्बमारी की थी तब भुज के पास जो माधापर गांव है उसकी महिलाएं टूटे हुए रन-वे बनाने के लिए तैयार हुई। शरीर की रक्षा माँ करती है। बच्चा छोटा है तब माँ दवा पीती है और माँ के दूध के द्वारा वो दवा बच्चे के शरीर को पुष्ट करती है। व्यासजी कहते हैं, लोकयात्रा माँ के बिना अधूरी है। राम के साथ सीता वन में न गई होती तो राम की लोकयात्रा सफल नहीं होती। राम की राज्ययात्रा होती। द्रौपदी पांडवों के साथ वन में न होती तो केवल रूखी-सूखी यात्रा होती। नल के साथ दमयंती न गई होती तो? सप्तपदी में मातृशरीर आगे होते हैं। जेसल जाडेजा की लोकयात्रा सफल न होती यदि तोरल साथ में न जाती। वशिष्ठजी की लोकयात्रा अधूरी होती, अरुंधती साथ न होती तो। अत्रि ऋषि की पौराणिक यात्रा रुक जाती, अनसूया साथ न होती तो। ये श्लोकयात्रा के नहीं, लोकयात्रा के आदमी थे।

हमारे धर्म की रक्षा मातृशरीर करती है। रामभगत जो पुनित परंपरा के थे वो कहते हैं, पत्नी को ही धर्मपत्नी कहते हैं, क्योंकि धर्म की रक्षा मातृशरीर करती है। देश की रक्षा होती है सीमा पर मातृशक्ति के आशीर्वाद के कारण। पति तो व्यस्त रहता है। छोटे-बड़े धर्म माँ करती है। घर में पुरुष हो और आपको महत्त्व का निर्णय करना है तो माता बनकर निर्णय करना। धर्म की रक्षा माँ करती है।

स्वर्ग की रक्षा माँ करती है। स्वर्ग है या नहीं ये मेरे लिए प्रश्नार्थचिह्न है। हमारा छोटा-सा घर ही स्वर्ग है, उसकी रक्षा माँ ही करती है। घर शुभविचारों से सुरक्षित रहता है। स्वर्ग यानी प्रसन्न दांपत्य। स्वर्ग यानी बच्चे आंगन में खेलते हो। स्वर्ग यानी कोई अतिथि को रोटी खिलाना। इसीलिए स्वर्ग की रक्षा माँ करती है।

ऋषि को प्रसन्न करती है माँ। ऋषियों के शास्त्र माँ अपने बच्चों को कहकर ऋषिऋण से मुक्त करती है। पितृ का पोषण माँ करती है। नारद भक्तिसूत्र कहता है, माँ ऐसे संतानों को जन्म देती है और वो संताने भजन करते हैं, तब स्वर्ग में रहे उनके पितृ नृत्य करते हैं, उत्सव मनाते हैं। ये बच्चे माँ के द्वारा ही आते हैं। तो ‘मातृदेवो भव’ में माँ के अष्टभुजा के ये वरदान है ऐसा ‘महाभारत’ में कहा है। आप लाख पितृत्व का घमंड करो पर मातृत्व के बिना आप सभ्य नहीं दिखते। धोती, कफ़नी, दाढी, मूछ, चोटी, जनोई (उपवित), छाता, लकड़ी, मोजड़ी, दवाई की डिब्बियां, चारपाई, चाय ये सब स्त्रीलिंग है।

तो बाप! ‘मानस-मातृदेवो भव’ अंतर्गत जो सूत्रात्मक संवाद चल रहा है। आज रामजनम की कथा गानी है। कल किसी ने पूछा कि बापू, हमारे यहां शक्तिपीठ कितनी है? इक्यावन-बावन जो शक्ति पीठ है, आप जानते हैं। पीठ का अर्थ है जहां बैठा जाए। जैसे व्यासपीठ। ‘रामचरित मानस’ में एक पीठ है चरणपीठ, पादुका। एक शब्द है ‘पलंगपीठ।’ सीता भी पीठ है। मैंने कल भी कहा, नवदुर्गा के नौ नाम मुझे गुरुकृपा से ‘मानस’ में मिलते हैं। जानकी-भवानी तत्त्वत: एक है। जानकी में भी तीन स्तर है-जनकसुता, जगजननी, जानकी। जानकी ‘मानस’ की कथा में बारह पीठ पर बैठी है। जानकी माँ की आह्लादिनी शक्ति है; क्षमारूपेण, शक्तिरूपेण, कृपारूपेण है। यद्यपि ये सब बातें ‘मानस’ में स्पष्ट नहीं है। गुरुकृपा से ये प्रगट होती है। बारह पीठ में पहली पीठ जो धनुष दशरथजी को मिला है, उसे संभालने के लिए उस धनुष पर बैठती थी। समझाने के लिए कहा जाता था, उस धनुष का घोडा बनाकर जानकी उससे खेलती थी।

तलगाजरडी दृष्टि में पहली पीठ है शिवधनुष। दूसरी पीठ है जानकी की शादी हुई और वो डोली में बैठी वो। तीसरी पीठ है पलंग। चौथी पीठ है गोद। कभी कौशल्या की गोद में, कभी दशरथजी की गोद में। जानकीजी राम से छोटी है। ‘हिंडोरापीठ’ पांचवीं पीठ है। राम के साथ चौदह साल की वनयात्रा शुरू हुई तब छठ्ठी पीठ थी रथ। सातवीं पीठ थी गंगा पार करने के लिए नौकापीठ। आठवीं पीठ, स्फटिक शिला। नववीं पीठ है पंचवटी में अग्नि में बैठ जाना। उसके बाद दसवीं पीठ है, ‘सीता बैठी सोच रत अहई।’ अशोकवाटिका में जानकी अशोकवृक्ष के नीचे बैठी है वो पीठ। ग्यारहवीं पीठ पुष्पक

विमान। बारहवीं पीठ राजपीठ। विश्व में रामराज्य कब आएगा? जब ये मातृशक्ति इन नव पीठों को सर कर के आगे बढ़ेगी। इतनी प्रसन्नता का कारण है गुरुकृपा। हमारे प्राचीन भजनों में लिखा है-

गुरु, तारो पार न पायो, हे, न पायो,
प्रथमीना मालिक, तमे रे तारो तो अमे तरीए...

ये बारह पीठ पे बैठी जानकी उपर से तो स्थूल लगता है पर सूक्ष्मदृष्टि से देखना होगा। ये कल देखेंगे गुरुकृपा से।

भगवान शिव और पार्वती की शादी की कथा कल गाई। कार्तिकेय का जन्म हुआ। फिर एक बार महादेव वेदविदित वटवृक्ष की छाया में अपने हाथ से आसन बिछाकर सहजासन में बिराजित है। पार्वती ने देखा कि आज पतिदेव विशेष प्रसन्न है। यह देखकर पार्वती शिवजी के पास जाती है-

पारबती भल अवसरु जानी।
गईं संभु पहिं मातु भवानी।।
जानि प्रिया आदरु अति कीन्हा।
बाम भाग आसनु हर दीन्हा।।

अपनी प्रिया को शंकर ने वामभाग में बिठाया। पार्वतीजी कहती हैं, भगवन्, आज आप बहुत प्रसन्न है, यदि आपकी प्रसन्नता टूटे ना तो मैं कुछ पूछना चाहती हूं। शिवजी ने कहा, पूछो। पति जब प्रसन्न हो तभी पत्नी कुछ पूछे तो रामकथा प्रगट होगी; वर्ना कथा नहीं, व्यथा प्रगट होगी। पार्वती ने कहा, आपकी कृपा से मुझे गतजन्म का स्मरण हो रहा है। मैं दक्ष की कन्या सती थी। आप मुझे कुंभज ऋषि के यहां कथा सुनने ले गए। बौद्धिकता के कारण मैं कथासुख से वंचित रह गई। राम का दर्शन हुआ तो भ्रम हुआ कि ये कहां का ब्रह्म है? सत्तासी हजार साल तक आपके वियोग में बैठी रही। उसके बाद दक्षयज्ञ मैं आपका अपमान सहा नहीं गया और मैं यज्ञ में समा गई। दूसरे जन्म में हिमाचल के घर मेरा जन्म हुआ और तपस्या कर के आपको पा सकी। इतना बिता फिर भी मेरा भ्रम नहीं गया, मुझे बताओ कि क्या राम ब्रह्म है? ब्रह्म है तो पत्नी के वियोग में कैसे रोता है? निराकार साकार होता है? निर्गुण सगुण हो सकता है? राम क्या है ये मुझे रामकथा के द्वारा बताइए। पार्वती ने रामकथा पूछी। शिवजी प्रसन्न होकर ध्यानरस में डूब गए। तुलसी ने ध्यान को रस कहा है। रसमय ध्यान है। आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, संयम, नियम, ध्यान, धारणा, समाधि को आवकार देता हूं। ध्यान को हमने जड़ कर दिया है! शिवजी काव्य के नवरस लेकर बाहर आए-

मगन ध्यानरस दंड जुग पुनि मन बाहर कीन्ह।

जहां कोई रास्ता न रहे ऐसी रसमय स्थिति का नाम है ध्यानरस। जिस ध्यान को तुड़वाने के लिए अप्सरा को आना पड़े। ध्यानरस हो तो पितृ नर्तन करे। जिसको शंकराचार्य कहते हैं, 'एकान्ते सुखमास्यताम्।' जीवन को दुःखधर्मी नहीं, सुखधर्मी बनाओ। मैंने अबू धाबी में कहा था, मेरी व्यासपीठ जीवनधर्मी है, मरणधर्मी नहीं। सब से बड़ा जीवन का रस है प्रेम।

भगवान शंकर बहिर्मुख हुए। पार्वती के उत्तर से पूर्व कहते हैं, 'भवानी, आपको धन्य है, आपने ऐसी कथा पूछी जो सकल लोक को पावन करनेवाली गंगा है। देवी, संसार को कार्य-कारण लागू होता है। ईश्वर को कार्य-कारण लागू नहीं होता, फिर भी परमात्मा के निराकार के साकार होने के कुछ कारण है। 'मानस' में पांच कारण की कथा है, जय-विजय, सतीवृंदा, महर्षि नारद, स्वयंभू मनु और प्रतापभानु। राम के अवतार के ये पांच हेतु बताए। प्रतापभानु ब्राह्मण के शाप से दूसरे जन्म में रावण हुआ। उसका भाई कुंभकर्ण होता है। एक विभीषण होता है। तीनों ने तप कर के दुर्लभ वरदान प्राप्त किए। रावण वरदान के कारण इतना शक्तिसंपन्न हुआ कि अपने बल का दुरुपयोग किया और पूरी धरती त्रस्त हो गई। गाय के रूप में पृथ्वी ऋषिमुनियों के पास और देवताओं के पास ब्रह्मलोक में गई कि मुझे बचाओ। ब्रह्मा ने कहा, एक ही उपाय है, हम ब्रह्मतत्त्व को पुकारे। सब ने पुकार की। आकाशवाणी हुई, 'देवगण, ऋषिगण, डरो ना। मेरे अवतार के कई कारण भी है और कोई नहीं भी है। मैं अंश सहित अयोध्या में अतार धारण करूंगा, प्रतीक्षा करो।'

तुलसीदासजी अयोध्या का वर्णन कर के रामकथा की ओर ले जाते हैं। महाराज दशरथजी, अयोध्या के सम्राट, कर्मयोग, ज्ञानयोग, भक्तियोग का त्रिवेणीसंगम। कौशल्यादि प्रिय रानियां, सब आचारण में जी रहे हैं पर एक ग्लानि है, पुत्र नहीं है। कल मेरा रघुवंश मेरे से समाप्त हो जाएगा? राजा सोचता है, मेरे पास लोग अपनी समस्याएं लाते हैं लेकिन मेरी समस्या किससे कहूं? राजा गुरुद्वार चले। वशिष्ठजी के आंगन में पधारे हैं। अपने दुःख-सुख की कथा सुनाई कि 'महाराज, आप बताइए, मेरे भाग्य में पुत्रसुख नहीं है क्या?' वशिष्ठजी ने कहा, मैं तो कब से प्रतीक्षा में था कि आप ब्रह्म जिज्ञासा करे तो आपके आंगन में ब्रह्म को बालक बनाकर खेलता कर दूं। थोड़ा धैर्य धारण करो। आपको चार पुत्र की प्राप्ति होगी। एक यज्ञ करना होगा। शृंगीऋषि को बुलाया है। पुत्रकामेष्टि यज्ञ का आरंभ हुआ। भक्ति सहित आहुतियां डाली जा रही है। आखिरी आहुति ग्रहण कर के यज्ञपुरुष प्रसाद की खीर लेकर बाहर आए। वशिष्ठजी को प्रसाद देकर कहा, महाराज, ये यज्ञप्रसाद है। अपने राजा को बोलो, अपनी रानियों में बांटे। राजा ने अपनी रानियों को बुलाई। आधा प्रसाद कौशल्याजी को। आधे का दो भाग कर के पा भाग कैकेई को और पा के दो भाग कर के कैकेई और कौशल्या के हाथों सुमित्रा को दिलवाया।

तीनों रानियों यज्ञप्रसाद पा कर सगर्भा स्थिति का अनुभव करने लगी। जोग, लगन, ग्रह, बार, तिथि, पंचांग अनुकूल हुआ। त्रेतायुग, चैत्रमास, शुक्लपक्ष, नवमी तिथि, मध्याह्न का सूर्य, मंगलवार; राम के प्रागट्य के संयोग बने हैं। मंद सुगंध शीतल वायु बह रही हैं। नदियों में अमृत बह रहा है। देवताओं को पता चल गया कि हरि आकारित होनेवाले हैं। पूरा नभ देवताओं से भर गया। घर-घर दुंदुभि बज रही है। देवता पुष्पवृष्टि कर रहे हैं। स्वर्ग के देवता, पृथ्वी के ब्राह्मण देवता और पाताल के नागदेवता पूरा अस्तित्व स्तुति कर रहा है। परमात्मा को प्रगट होने की वो पल आई। सभी देवता स्तुति कर के अपने-अपने लोक में स्थान ग्रहण करने लगे उसी क्षण निराकार ब्रह्म आकार धारण कर के माँ कौशल्या के भवन में प्रगट होते हैं। प्रकाश से भर गया भवन और माँ कुछ बोल न पाई!

भए प्रगट कृपाला दीनदयाला कौसल्या हितकारी।
हरषित महतारी मुनि मन हारी अद्भुत रूप बिचारी।।

माँ कौशल्या ने कहा, 'हे अद्भुत रूपवाले परमात्मा, किन शब्दों में आपकी स्तुति करूं? रोम-रोम में ब्रह्मांड सोह रहा है, ऐसा आपका अलौकिक रूप है। कौन मानेगा कि ये मेरे यहां प्रगट हुआ है?' माता को ज्ञान हुआ। प्रभु मुस्कुराए। माँ ने कहा, आप आये, आपका स्वागत लेकिन मुझे मनुष्य के रूप में ईश्वर चाहिए। चतुर्भुज नहीं, द्विभुज चाहिए। आप नर नहीं, नारायण लगते हैं। ये तुलसी का बहुत प्यारा विचार है। भगवान ने कहा, माँ, तू बता मनुष्य कैसे हुआ जाए? बहुत गौरव है भारत के लिए कि मेरे देश की एक माँ ईश्वर को मनुष्य बनना सीखा रही है। माँ ने कहा, ये चार हाथ हटा दो, दो हाथ रखो। भगवान ने दो हाथ रखकर कहा, अब मैं मनुष्य लगता हूं? माँ ने कहा, मनु-शतरूपा के रूप में हमनें मांगा था कि आप पुत्ररूप में आओ। आप पुत्र नहीं, बाप लगते हो! आप छोटे हो जाओ। भगवान छोटे होते-होते नवजात शिशु होकर माँ से कहे, अब मैं हो गया बालक? माँ ने कहा, आप बड़े की तरह बात कर रहे हो। बच्चा तो रोता है, आप रोओ। भगवान ने कहा, मेरे पर कौन मुसीबत आई कि मैं रोउं? माँ ने कहा, आप पर नहीं, आपकी बनाई दुनिया पर मुसीबत आई है, इसीलिए पीड़ा क्या होती है वो तू भी महसूस कर। माँ के कहने पर भगवान बालक बनकर माँ के अंक में सामान्य शिशु की तरह रोने लगे। तब तुलसी ने उद्घोषणा की कि अब रामजन्म हुआ।

बिप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार।
निज इच्छा निर्मित तनु माया गुन गो पार।।

बिप्र, धेनु, सुर और संतों के लिए परमात्मा ने मनुष्य अवतार लिया। शिशुरुदन सुनकर ओर रानियां दौड़ी कि कौशल्या को प्रसव की पीड़ा नहीं हुई और सीधा बालक रो रहा है? आया है ब्रह्म और हुआ है भ्रम! महाराज के घर कौशल्या माँ ने पुत्र को जन्म दिया ये बात फैल गई। महाराज दशरथजी को कहा कि महाराज, बधाई हो, आपके घर पुत्रजन्म हुआ है। महाराज ने सुना कि पुत्रजन्म हुआ तो मानो ब्रह्मानंद हुआ। लेकिन ये कौन निर्णय करेगा कि ये ब्रह्म है या भ्रम है? जल्दी गुरुदेव को बुलाओ। वशिष्ठजी ब्राह्मणों के संग आए और कहा कि महाराज, बधाई हो, आपके घर साक्षात् हरि बालक के रूप में प्रगट हुए हैं। पूरे संसार में खबर हो गई कि महाराज के घर पुत्रजन्म हुआ है। और वशिष्ठजी ने आदेश दिया, बधाईयां दो, उत्सव मनाओ। पूरे संसार में राम प्रागट्य का उत्सव शुरू होता है। माँ वैष्णोदेवी के अंक में, कटरा की इस पावन भूमि पर शारदीय नवरात्र में 'मानस-मातृदेवो भव' के दौरान आप सब को रामजन्म की बधाई हो।

परमतत्त्व कभी होली-डे पर नहीं होता। वो निरंतर अपनी सेवा में हाज़िर रहता है। हम उसे मौका नहीं देते हैं। हमारी खिड़कियां बंद है। द्वार खुले नहीं है हमारे। ये तो सूरज हमारे यहां बारह घंटे के बाद अस्त होता है, चला थोड़ा गया? वो दूसरी जगह होता है। चौबीस घंटे भगवान भास्कर हमारी सेवा में रहता है। जरा दरवाजा खुला रखो। माँ चौबीस घंटों हमारे द्वार पर दस्तक दे रही है, हमारे किवाड़ बंद है!

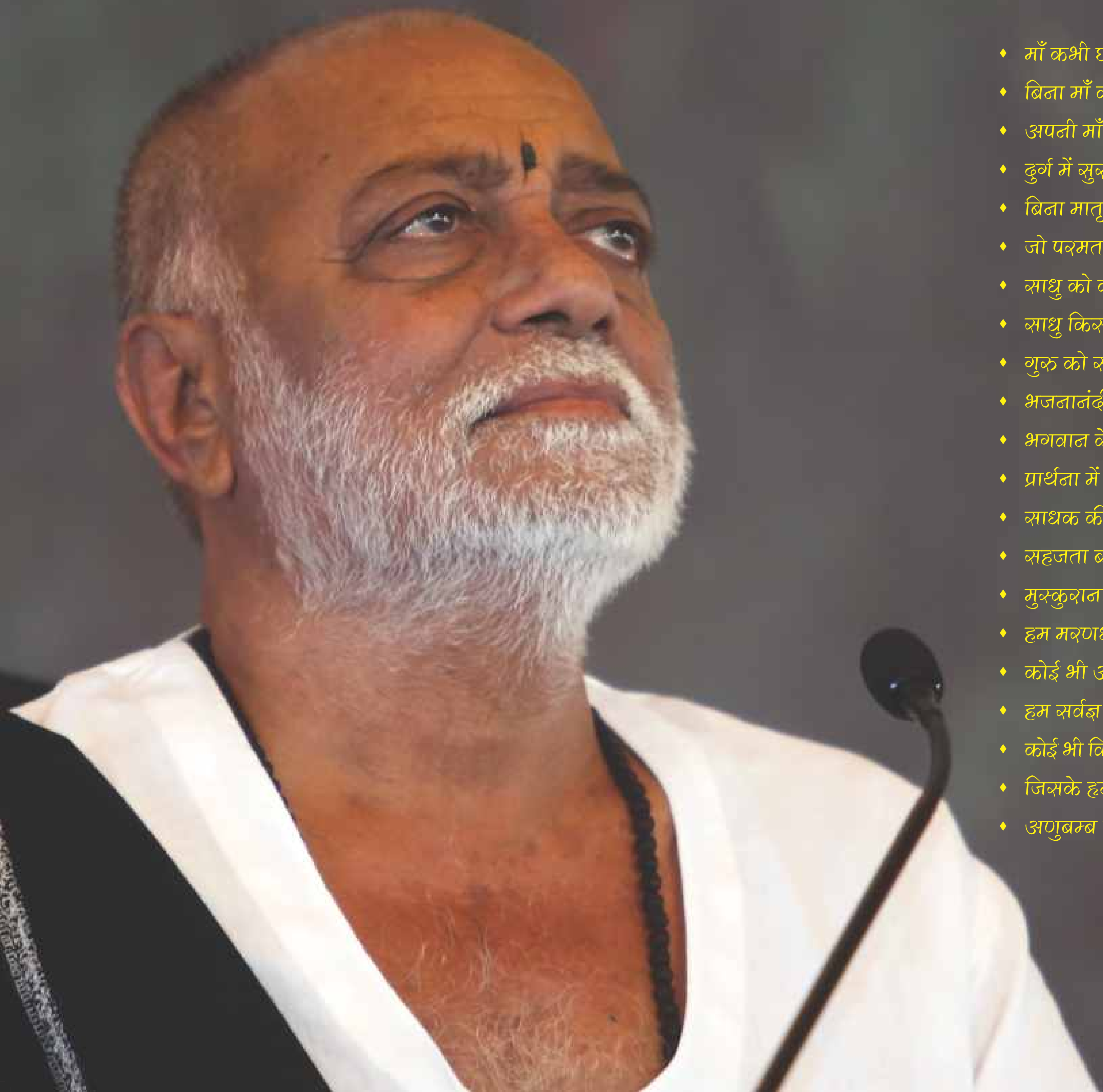

कथा–दर्शन

- माँ कभी छोटी नहीं हो सकती, माँ कभी संकीर्ण नहीं हो सकती।
- बिना माँ की आराधना आप परमतत्त्व को पा ही नहीं सकते।
- अपनी माँ की पूरे दिल से सेवा करो तो ये वैष्णोदेवी की पूजा है।
- दुर्ग में सुरक्षा सीमित है पर जो दुर्गा के पास पहुंच जाता है उसकी सुरक्षा असीमित है।
- बिना मातृशक्ति शक्तिमान पाया नहीं जाता।
- जो परमतत्त्व होता है वो कराल भी होता है और कोमल भी होता है।
- साधु को कोई करीब नहीं होता और साधु से कोई दूर नहीं होता।
- साधु किसी का पक्षधर नहीं होता। साधु साक्षी होता है कूटस्थ, तटस्थ।
- गुरु को समझना मुश्किल है, गुरु में समाहित हो जाना आसान है।
- भजनानंदी को किसी से कोई अपेक्षा नहीं रखनी चाहिए।
- भगवान के पास कभी लाभ की मांग मत करना, शुभ की मांग करना।
- प्रार्थना में तो शब्द का आयोजन होता है, पुकार में तो एक चीख होती है।
- साधक की भीतरी स्थिति का नाम रूखड है।
- सहजता बहुत बड़ी उपलब्धि है।
- मुस्कुराना धर्म है, मुरझाना अधर्म है।
- हम मरणधर्मा नहीं है, हम जीवनधर्मा है।
- कोई भी अवस्था को मुस्कुराकर स्वीकार लो तो प्रत्येक अवस्था की एक शोभा होती है।
- हम सर्वज्ञ न बन जाए तो कोई बात नहीं। हम स्वज्ञ बन जाए तो बहुत है।
- कोई भी विद्यारूपी थाल में भजन के तुलसीपत्र नहीं डालोगे तो ठाकुर इस विद्या को कुबूल नहीं करेगा।
- जिसके हृदय में विश्राम नहीं उसको महलों में भी कहां विश्राम मिलता है?
- अणुबम्ब से भी अश्रुबिंदु की ताकत बड़ी है। अणु बिलग कर देता है और आंसू मिला देता है।

मानस-मातृदेवो भव : ६

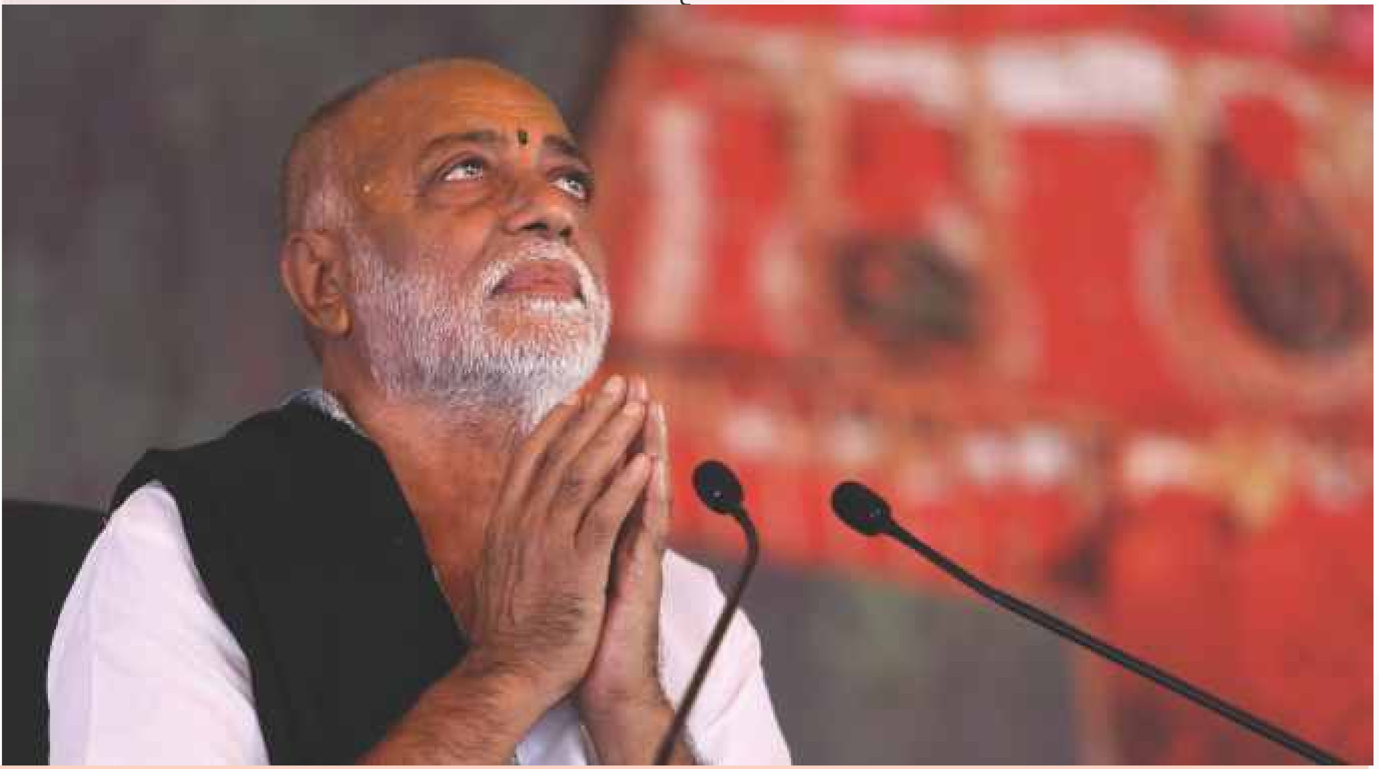

किसी बुद्धपुरुष की शरणागति ये डोली है

'मानस-मातृदेवो भव', 'मानस' के आधार पर उसकी सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा संवाद के रूप में चल रही है। गोस्वामीजी कह रहे हैं, जगत की माता सर्वज्ञ है। भवानी सुखद और मृदु बानी बोली है। और यही माता पार्वती योग्य समय पा कर शिव के पास जाकर के भगवान राम की कथा के बारे में जिज्ञासा करती है तब ये कथा आगे बढ़ती है। कल की हमारी जो चर्चा चल रही कि शक्ति की जो पीठें है, शक्तिनां ज्यां बेसणां छे। जानकी भी एक स्वयं शक्ति है। वही दुर्गा भी है। तो 'मानस' में जानकीरूपी दुर्गा की कौन-कौन पीठ है उसकी गिनती कल हमनें की। पहली पीठ की चर्चा हमनें की कि वो है धनुषपीठ। जानकीजी जब किशोरी थी तब हम जानते हैं कि वो धनुष का घोडा बनाकर के जनक के आंगन में अथवा जहां धनुष रखा गया था वहां खेलती रहती है। रोज पूजा होती थी जनकभवन में। और ये पुरानी पूजा पद्धति कि जहां पूजा होती थी वहां गोबर से लिंपन किया जाता था। तो धनुष की पूजा के समय अगल-बगल में गोबर का लिंपन होता था। लेकिन धनुष का भारी होने के कारण धनुष के नीचे रज रह जाती थी। कोई धनुष को उंचा करे तो लिंपन हो सकता था। और ये तो उठाया नहीं जा सकता था। एक दिन जनक के परिवार में ये चर्चा चली कि ये धनुष की पूजा तो होती है विधिवत् और नीचे लिंपन नहीं हो पाता। तब जानकी ने कहा कि माँ, थोड़ी सेवा मुझे भी दिया करो। हां बेटा, तू कर। तो जानकी पूजा, लिंपन ये सब कर रही है तब अचानक एक बार सुनयनाजी आती है और देखती है कि जानकी ने बायें हाथ से धनुष को उठाया, नीचे गोबर से लिंपन किया और फिर धनुष को रख दिया! ये दृश्य देखकर माँ सुनयना को हुआ कि ये क्या है? जनक को बात कही तो वो भी सोच में पड़ गए कि ये तो गजब है! इसी शृंखला में जनक ने संकल्प किया कि ऐसी परम शक्ति जो है उसके साथ तो वो ही ब्याह सकता है, जो इस धनुष को उठा सके, चढ़ा सके अथवा तो इसे तोड़ सके। फिर तो कई बार राजा और रानी ने देखा कि ये किशोरी धनुष को घोडा बनाकर खेलती रहती है।

तो तलगाजरडी दृष्टि में जानकीरूपी आदिशक्ति की बारह पीठ है 'मानस' में। इसमें पहली धनुषपीठ है। मैंने कल भी आपको संकेत किया था कि घटना तो त्रेतायुग की है। रामकाल तो कितने साल हुए वो खबर नहीं। आज वो जानकी हमारे पास स्थूलरूप में नहीं है; राम नहीं है; ये प्रसंग है हमारे पास। कहां त्रेतायुग, कहां कलियुग! आज का सत्य कैसे बनाया जाए इसको? आज भी रामकथा प्रासंगिक क्यों लगती है? ये सिद्ध हो चुका कि इतनी पुरानी सनातनी कथा हमारे जीवन का भी सत्य बन सकती है। उस समय में राम शिव का धनुष तोड़ते हैं और तुलसी कहते हैं कि आज हमारे अंदर भी जो अहंकार का धनुष है उसे हम तोड़ दे तो आज भी शांतिरूपी, शक्तिरूपी, भक्तिरूपी सीता हमारे कंठ में माला पहना सकती है। ये आज का सत्य है। और हमारी गंगासती तो साफ़ कहती है कि-

भक्ति करवी एने रांक थईने रहेवुं...

भक्ति कहां वरण करती है हमारा? तुलसी ने हर पात्र को, हर तत्त्व को आध्यात्मिक टच देकर आज हम जो जी रहे हैं उनका सत्य बनाया है। अहल्या का उद्धार तो उस समय हुआ था। आज अहल्या को हम कहां खोजे? तुलसी उसको आज का सत्य बनाते हैं कि अहल्या ओर कुछ नहीं है बल्कि हमारी जड़ मति ही अहल्या है। और ये जड़ मति यानी शिला, पत्थर की तरह उसको रामकृपा की रज मिल जाए तो आज कलियुग में हमारी बुद्धिरूपी अहल्या फिर वो ही रूप में आ सकती है। और फिर वो ही श्रेष्ठ के साथ संलग्न हो सकती है। प्रत्येक वस्तु को आज का सत्य बनाया गया है। इसीलिए रामकथा प्रासंगिक लगती है। तो धनुषपीठ का क्या मतलब है? 'मानस' में खोजना पड़ेगा कि तुलसी ने धनुष का क्या मतलब किया है? जानकी किस धनुष को पीठ बनाकर खेलती है?

दान परसु बुधि सक्ति प्रचंडा।
बर बिग्यान कठिन कोदंडा।।

'लंकाकांड' में विभीषण के सामने धर्मरथ की चर्चा राम ने की तब कहा कि मैदान में आदमी के हाथ में शस्त्र चाहिए। धर्मरथ में जो रथी होता है उसके शस्त्र कौन है? दान ही परसु है। कुहाड़ा एक ऐसा शस्त्र है कि कुहाड़े को आप डाली पर डालो, प्रहार करो तो तुरंत डाली कट जाती है। इसका मतलब कि दान एक ऐसी चीज है कि करो और फल पाओ। इस लिए तुलसी 'उत्तरकांड' में लिखते है कि-

जेन केन बिधि दीन्हें दान करइ कल्यान।

•

बुद्धिरूपेण संस्थिता, शक्तिरूपेण संस्थिता।।

आदमी की बुद्धि ही परम शक्ति है, प्रचंड शक्ति है। उसी शृंखला में धनुष की व्याख्या आई कि 'बर बिग्यान कठिन को दंडा।' विज्ञान ही धनुष है। तुलसी पुरातन नहीं है। वो लकीर के फ़कीर नहीं है। तुलसी एक ऐसा फ़कीर है कि जिसने आदमी के स्वभाव के अनुसार कई लकीरें तैयार की है। प्रत्येक व्यक्ति की रुचि, स्वभाव, प्रकृति भिन्न है। तुलसी ने ऐसा शास्त्र दिया कि प्रत्येक व्यक्ति के अनुकूल एक-एक पगदंडी दे दी कि तुम इस पर चलो। तुलसी कितने प्रासंगिक है बाप! उसने कहा, धनुष विज्ञान है। लेकिन तुलसी ने एक शब्द पहले जोड़ा, 'बर बिग्यान', श्रेष्ठ विज्ञान जानकी का घोडा है। जो विज्ञान चंद लम्हों में नागासाकी और हिरोशीमा के लाखों लोगों को मार दे वो श्रेष्ठ विज्ञान नहीं है। मैं फिर एक बार गांधीबापू को याद करूं। उसने सात सामाजिक पाप की उद्घोषणा की उसमें एक पाप उसने कहा था कि संवेदनाशून्य विज्ञान एक सामाजिक पाप है। विज्ञान श्रेष्ठ, शुद्ध हो। विज्ञान की शक्ति बहुत है बाप! विज्ञान कितना भी शक्तिशाली क्यों न हो लेकिन उस पर एक महाशक्ति का कंट्रोल होना चाहिए। एक महाशक्ति ये है माँ जानकी, ये है वैष्णोदेवी, ये है दुर्गा, भवानी, काली जो कहो। विज्ञान श्रेष्ठ होना चाहिए। विज्ञान विशुद्ध होना चाहिए। ऐसे विज्ञान के उपर कोई महाशक्ति कंट्रोलर के रूप में विराजमान होनी चाहिए। निम्न लोगों के हाथ में जब ये विज्ञान आ रहा है तब उसका कितना दुरुपयोग होता जा रहा है! महाशक्ति कभी नीचे बैठती ही नहीं। वो हमेशां उपर ही विराजमान होती है। माँ इतनी दुर्लभ क्यों है? वो उंचे आसन पर बैठनेवाली महाशक्ति है। ये वर विज्ञान पर सवारी करनेवाली है। हमारे यहां गाया जाता है-

माडी तारां बेसणां गढ गिरनार
ए नवेखंडे नजरुं पडे रे लोल...
माडी तारी छबियुं घरमां चोडे पण
कीधेलुं तारुं नव करे कोई....

पालखीपीठ; महाराज जनक ने जब सीता को बिदा किया तब वो पालखी में बैठती है। जैसे दुल्हन डोली में बैठती है। माँ आज दुल्हन के रूप में बैठी है। डोली के परदे से थोड़ा

दिखाई देता है। लेकिन आज का सत्य क्या है वो कवि दादल कहते हैं-

काळजा केरो कटको मारो हाथथी छूटी ग्यो...

पालखी का सत्य है कि उसमें बैठनेवाला चलता नहीं है। और चलते हैं उसे उठानेवाले लेकिन पहुंच जाता है बैठनेवाला। जानकी की दूसरी पीठ है किसी समर्थ की शरणागति। ये है पालखी। शरणागति सनातन है। जगद्‌गुरु शंकराचार्य शरणागति लेते हुए माँ दुर्गा को कहते हैं, 'यथायोग्यं तथा कुरुं।' मैं गिर पड़ा हूं तेरी शरण में। और मैं साफ़-साफ़ कहकर गिरा हूं कि 'मत्समः पातकी नास्ति।' मेरे समान कोई पापी नहीं है। अब तेरा परिचय तू न दे तो मैं दूं भगवती। तेरे समान पापहन्ता कोई नहीं है। इन दो बातों का विचार कर के तुझे अब जो निर्णय करना हो सो कर। मैं तेरी शरण में पड़ा हूं। किसी बुद्धपुरुष की शरणागति ये डोली है। भार उठाये बुद्धपुरुष और पहुंचे हम जैसे। शरणागति पहुंचा देती है और न पहुंचाये तो भी शरणागत को क्या चिंता? चिंता तो उठानेवाले को है।

अमे तारा अंग कहेवाईये,
जीवण कोने आशरे जईए...

कई लोग मुझे पूछते हैं कि शरणागति में किस हद तक जाना चाहिए? देखो भाई, मैं विशेषणमुक्त 'शरणागति' शब्द यूझ कर रहा हूं। शरणागति मीन्स शरणागति। द्रौपदी एकवस्त्री थी। उसे जो भी पहना था वो उसे बचाना चाहती थी पर सफल न रही। लेकिन दोनों हाथ छोड़ दिये और कहने लगी, हे द्वारिकावासी, अब तेरी शरण। अब जो करना हो सो कर। लाज मेरी नहीं जाएगी, यशोदा की जाएगी!

मुरारि मेरो क्या बिगड़ेगो,
जाएगी लाज तिहारी...

माँ, तेरे बेटे तो कई है लेकिन 'विरल तरलौ हम तव सुता।' इसमें से कोई विरल है, कोई तरल है। हम शरणागति की पालखी में बैठे हैं। शरणागति में बाधायें बहुत है। पलंगपीठ;

पलँग पीठ तजि गोद हिंडोरा।
सिय न दीन्ह पगु अवनि कठोरा।।

जानकी जब ब्याहकर आई अयोध्या तब धरती पर उसने कितनी बार कदम रखे वो भी गिने जाते थे। क्योंकि धरती पर जानकी को कदम रखने नहीं देते थे। इतना दुलार, इतना लाड और इतनी संभाल होती थी सीया की। कोई कौशल्या को पूछे कि आप सीता का इतना ध्यान रख रही है उसका कारण क्या है? तो बोले, धरती कठोर है, मेरी सीया के चरण अत्यंत कोमल है तो धरती पर कदम कैसे रखे? ये कौशल्या कहती है लेकिन उसको क्या पता कि सीता की नियति में क्या लिखा है? वही जानकी चौदह साल बिना पदत्राण कंटकीय रास्तों में घूमेगी! पलंग विश्राम का प्रतीक है। पलंग में आदमी क्यों जाता है? विश्राम के लिए। जानकी कहां बैठती है? हम शरणागति की पालखी में बैठने के बाद भी अकारण संताप करे, चिंता करे ऐसे संतापयुक्त चित्त में जानकी नहीं बैठती। पलंग हो जाओ। जगद्‌गुरु वल्लभाचार्य भगवान कहते हैं कि शरणागतों को चिंता नहीं करनी चाहिए। शरणागति के बाद चिंता क्यों? हमें तो विश्राम होना चाहिए। नरसिंह ने जब शरणागति कुबूल की तब क्या कहा?

जे गमे जगतगुरु देव जगदीशने
ते तणो खरखरो फोक करवो।

आज ही सुबह एक भीतर संवाद हुआ कि मुझे एक बार 'मानस-नागर' कथा कहनी है। पूरे 'मानस' में करीब तेहर बार 'नागर' शब्द आया है। ईश्वर को बहुत बुरा लगता है; नाम आश्रित, गुरु आश्रित जब चिंता करता है तब परमात्मा को धक्का लगता है कि मेरा होने के बाद भी चिंतित! मुझे दाग लगा रहा है। थोड़ा तो धैर्य धारण करता। तेरा गणित तेरा है। मेरा गणित मेरा है। कृपा का गणित स्कूलों में नहीं पढ़ाया जाता। उसकी पाठशाला करुणा से भरा पूरा अस्तित्व होती है। हम तुरंत उलझ जाते हैं! बहुत कठिन है साहब विश्राम में जीना। हमारी गंगासती कहती है कि जो ऐसे जीता है, 'जेने आठे पहोर आनंद।' आप याद रखिये कि जो भी बुद्धपुरुष संसार में देह धारण कर के आते हैं उसको मुश्किलें तो होती ही है लेकिन ये शरणागत होने के नाते निरंतर आनंद में रहते हैं। उपाधि को आनंद में दीक्षित कर देता है। उपाधि को समाधि की ओर ले चलता है। पालखी में बैठने के बाद पलंग का विश्राम न मिले तो क्या पाया? पल का अर्थ होता है माँस, तो पलंग का अर्थ होता है माँस को ढ़कनेवाला चमड़ा। उसे अंग कहते हैं। पल है भीतर और अंग है बाहर। ऐसा भीतर का एक पलंग है जिसको हृदय कहते हैं। जिसके हृदय में विश्राम नहीं उसको महलों में भी कहां विश्राम मिलता है? हमारे गुजराती में गाते हैं-

महलोना महेलथी अमने वहाली अमारी झूंपडी...

पांच वीघा के खेत में एक आदमी झोंपड़ी बना के रहता था। एक ही बैल था इसीलिए कभी-कभी वो आदमी खुद उसमें जोत जाता था। कभी एक बैल से खेती करता था। फ़सल पकाता था। कमाता था। खाये-पीये और मौज करता था। गांव का एक नगरशेठ घोडे पर निकलता है और गया वहां। उस आदमी ने कहा, आओ, आओ। खटिया डाल दी वहां। उसके उपर पुरानी गुदड़ी डाल दी। नरगशेठ ने उससे पूछा कि तू काम क्या करता है? बोले, बस खेती करता हूं और मौज करता हूं। तो नगरशेठ ने उसे कहा कि जमीन में खाद डाल; अच्छा बियारण ले; पानी की सिंचाई कर। इससे अच्छी फसल पकेगी तो फिर ये झोंपड़ी में नहीं रहना पड़ेगा। अच्छा मकान बना लेता। उसने कहा, मकान बनाने के बाद क्या करूं? तो कहा, बच्चों की शादी अच्छे से करना। बच्चों को अच्छे से पढ़ाना। फिर? बच्चों को नगर में भेजो। वो कमायें। फिर? पैसा इन्वेस्ट करे, ये करे, ये करे। करते-करते खूब सारे पैसे इकठ्ठे करो। फिर? नगर में अच्छा मकान बनाकर उसमें मौज से आराम करो। तो उसने कहा कि मैं तो अभी से आराम कर रहा हूं! विश्राम, जिसको तुलसी कहते हैं, 'पायो परम विश्राम।' ये है दिल का पलंग। भगवान तथागत बुद्ध का शरीर तो दौड़ता रहा, कभी यहां, कभी वहां। कभी इधर, कभी उधर घूमते रहे और ज्ञानप्राप्ति के बाद बांटते रहे। लेकिन उनके हृदय में विश्राम था। दुर्गा विश्राम की सवारी करती है।

गोदपीठ; निराभिमानिता; माँ की चौथी जो बैठक है वो गोद है, गादी नहीं। गादी जिसको भी मिलती है उसे अहंकार आये बिना रहता ही नहीं। और गोद जिसको भी मिलती है वो आदमी निराभिमानी ही बना रहता है। माँ की बेठक है निरहंकारिता, गोद। बच्चें में कोई अहंकार नहीं होता। गादी पर तो बैठना अहंकार है। और 'मानस' का तो सूत्र ही है-

नहीं कोउ अस जनमेंउ जग माँही।
प्रभुता पाई जाही मद नाहीं।।

पद मद लाता ही है। ये नियम है। किसी पर बहुत विशेष कृपा हो तब बहुत उंची उड़ान होने के कारण भी उनके पैर जमीन पर रहते हैं। मेरी दृष्टि में गोद ये निराभिमानिता का प्रतीक है। व्यवहार में तो मैं भी बोल लेता हूं कि व्यासपीठ, लेकिन मैं इसे हृदय से तो गोद ही समझता हूं, गादी नहीं। ये तो पराम्बा की गोद है।

हिंडोलापीठ; हमारे यहां हिंडोला का उत्सव होता है। वैष्णवों में तो जैसे ही सावन का महिना लगता है तो सावन के झुले लगते हैं। हिंडोला का दर्शन हवेली में होता है। हिंडोला है प्रसन्नता का प्रतीक। मेरी माँ ऐसे हिंडोले पर बैठी है। राम जो निरंतर वन मिले तो भी प्रसन्न; गादी मिले तो भी प्रसन्न। ऐसे राम की आश्रिता है जानकी। रथपीठ; वनवास जब हुआ तब ये पीठ आई। जानकी रथ में बैठी।

खोज मारि रथु हाँकहुं ताता।
आन उपायँ बनिहि नहिं बाता।।

मेरे गोस्वामीजी कह रहे हैं कि जानकी रथारूढ हुई बनपथ के लिए। सुमंत रथ लेकर आया और जानकी रथ में बैठी। रथ क्या है? 'मानस' में स्पष्ट कहा है कि-

सखा धर्ममय अस रथ जाकें।
जीतन कहँ न कतहुँ रीपि ताकें।।

अभी मैं बर विज्ञान की चर्चा कर रहा था तब धर्मरथ की यह पंक्ति 'लंकाकांड' की यह चौपाई है। तुलसीदासजी ने एक रूपक दिया 'लंकाकांड' में कि रावण रथ में है, राम

विरथ है। विभीषण को यह चिंता हुई कि नंगे पैर राम और रावण रथारूढ है। ऐसे इस वीर को कैसे जीता जाएगा? तब भगवान विभीषण से कहते हैं कि सखा, जिससे किसी को जीता जाये वो ऐसा स्थूल रथ नहीं होता, वो धर्मरथ होता है। मनु महाराज ने तो धर्म के दस लक्षण बतायें हैं। तुलसीदासजी ने चार एड कर दिये और चौदह लक्षण दिये। चौदह साल का वनवास था। माँ की बैठक है रथ। माँ वहां बैठती है जहां धर्म हो। माँ अधर्म में नहीं बैठेगी। तो रथ उसकी पीठ है; वो उनकी धर्मपीठ है। नौकापीठ;

मागी नाव न केवटु आना।
कहइ तुम्हार मरमु मैं जाना।।

केवट के पास गंगा के तट पर अब रथ का त्याग कर के भगवान को आगे जाना है। गंगा पार करनी है तो नौका में बैठने के लिए-

पद कमल धोई चढाई नाव न नाथ उतराई चहौं।

जानकी नौका में बैठी। आज शक्ति कहां बैठेगी? 'मानस' पीठों की चर्चा चल रही है। 'मानस' में नौका क्या है?

केवट बुद्ध बिद्या बड़ी नावा।

तुलसी ने आध्यात्मिक अर्थ कर के कहा कि विद्या ही नौका है। और पंडित उसका है केवट खेवैया है। जगदंबा कहां विराजमान होती है? विद्या में बैठती है, अविद्या में नहीं बैठती।

या देवी सर्वभूतेषु विद्यारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः।।

उसके बाद वो चित्रकूट पहुंचती है उसमें चाहे वेदिका ले लो या फिर स्फटिक शिला पर वो बैठती है। स्फटिक शिलापीठ; माँ वहां पूर्ण रूप से शृंगार सज के बैठी है। माँ प्रेमरूप से शृंगारयुक्त है। ये पूरा प्रसंग शृंगारमय है। स्फटिक शिला का अर्थ है जिसमें बैठनेवाला खुद को रोम-रोम देख सकता है। उसको स्फटिक शिला कहते हैं। जैसे स्फटिक की माला होती है। स्फटिक बहुत किस्म के होते हैं। लेकिन शिला के रूप में जब उस पर बैठनेवाला एक शीशे की तरह अपने आप को देखता है। प्रेमपूर्ण शृंगार ऐसा होना चाहिए कि जिसमें कोई परदा न हो। उसी में माँ बैठती है। जहां दंभ न हो, दुराव न हो, दूरी न हो। राम के पास बैठी है बिलकुल, मर्यादाभंग नहीं हो रहा है। आर-पारता स्फटिक की तरह। फ़टकिया मोती और स्फटिक के मोती उसमें बहुत भेद है। फ़टकिये मोती को फूटते देर नहीं लगती। स्फटिक बहुत दीर्घजीवी वस्तु है। माँ वहां बैठती है जहां ट्रान्सपरन्सी है। जहां दर्पण है ऐसी बैठक है माँ की। अग्निपीठ; उसके बाद भगवान का स्थलांतरण हुआ और भगवान पंचवटी गये। फिर-

तुम्ह पावक महुँ करहु निवासा।
जब लगि करौं निसाचर नासा।।

अग्नि में तुम बिराजो। मुझे अभी ललित नरलीला करनी है तो जानकीजी, आपका मूल रूप अग्नि में विराजित कर दो। और जानकी अग्नि में विराजित हो गई। क्या मतलब? सीताजी को जब रामजी ने पंचवटी में कहा कि देवी, लक्ष्मण फल-फूल लेने गया है। अब वनवास के तेरह साल पूरे हो चुके हैं और एक साल में अब मुझे नरलीला पूरी करनी है। क्योंकि आप जब तक रहोगी मैं राक्षस को मार नहीं सकुंगा। जब जानकी नहीं रही तभी राम ने मारा। क्योंकि जब तक माँ होती है तब तक बाप किसी को मार नहीं सकता क्योंकि तब माँ बीच में आ जाती है कि खबरदार यदि मारा तो! तो जानकी को कहा कि आप अग्नि में समा जाओ। तो सीताजी मुस्कुराई। तो भगवान ने कहा कि मैंने आपको अग्नि में समाने को कहा इसमें आपको तो दुःखी होना चाहिए, आप हंस क्यो रही हो? बोले, महाराज, मुझे खबर है कि आपका जनम अग्नि से हुआ है, यज्ञकुंड से हुआ है। आपका मूल पिता तो अग्नि है। वहीं से आप निकले हो। आप मुझे अग्नि को नहीं सौंप रहे, ससुराल भेज रहे हैं। मैं तो अग्नि में शांत बैठुंगी। अथवा तो अग्नि का एक अर्थ है ज्ञानाग्नि। 'भगवद्गीता' जिसको ज्ञान की अग्नि कहती है। पराम्बा कहां बैठती है? 'ज्ञानरूपेण संस्थिता।' ज्ञान उसकी पीठिका है।

प्रभु पद धरी हियँ अनल समानी।

फिर तो जानकी का अपहरण होता है। और जानकी फिर बैठी है अशोकवाटिका में।

वियोगपीठ; कभी-कभी नाम अच्छा होता है, गुण दूसरा होता है। जानकी अशोकवृक्ष के नीचे बैठी है। अशोक का तो अर्थ है कि जहां शोक होना नहीं चाहिए। और जानकी 'सीता बैठी सोच रत अहही।' जानकी सोच में डूबी है। जगदंबा चिंता में बैठी है क्या? नहीं। चिंता किसकी है? विरह की। जगदंबा विरहिणी है। स्वविहारिणी भी है और विरहिणी भी है। राधा कौन है? परमात्मा की आह्लादक शक्ति है। किस पीठ पर बैठी है? विरह की पीठ पर बैठी है। व्रजांगनाएं कौन है? ये भी छोटे-बड़े दुर्गाओं के रूप है। कहां बैठी है? यमुनाजी के तट पर। कहीं छोटी-बड़ी शीलाओं के उपर। उनकी विरह की पीठ है; आंसूओं की पीठ है। स्वयं दुर्गा कहां बैठेगी? कायम योग उसका तो मजा सब लेता है लेकिन माँ तो वहां हाज़िर रहेगी जहां वियोग के आंसू होंगे।

निसदिन बरसत नैन हमारे...

और अणुबम्ब से भी अश्रुबिंदु की ताकत बड़ी है। अणु बिलग कर देता है और आंसू मिला देता है। हमारी चर्चा 'मानस' की द्वादश पीठ की चल रही है।

विमानपीठ; रावण पर राम का विजय हुआ और फिर जानकी को अग्नि में से पुनः प्रस्थापित किया गया। विभीषण के राजतिलक के बाद फिर प्रभु अयोध्या की यात्रा के लिए निकलते हैं तब पुष्पक विमान में जानकी विराजित होती है। ये त्रेतायुगीन सत्य आज हमारे जीवन का सत्य कैसे बने, उसीकी ये यात्रा चल रही है। विमान का अर्थ है विगतः मान; मान-अभिमान से मुक्त स्थान में शक्ति विराजमान होती है। विमान का एक अर्थ होता है विशेष सन्मान। जो कोई पुन्य श्लोक होते हैं उनको अस्तित्व विशेष सन्मान देता है। विमान मीन्स एक उड़ान। जमीन पर रहे वो विमान का कलेवर है। लेकिन उड़ान भरे वो ही विमान का सही रूप है। 'रामचरित मानस' में लिखा है कि 'उत्तरकांड' में जब कागभुशुंडिजी ने, एक बुद्धपुरुष ने अपने आश्रित गरुड के सामने अपनी कथा को विराम दिया तो गरुड बैठा था लेकिन अब 'हरषित खगपति पंख उडाये।' गरुड ने पंख फैलाई और उड़ान शुरू की। यही है विमान। कथा सुनने के बाद हम पंख फैलायें। हम कुछ विशेष ग्रहण कर के घर जायें। अभ्यास करते रहना। वो विमान तो लेन्ड भी होता है, ये विमान कभी लेन्ड नहीं होता। वैकुंठ तक ले जाता है। और एक ऐसी जगह पहुंचा देता है कि 'यद् गत्वा न निवर्तन्ते।' जहां से फिर लौटा नहीं जा सकता। दुनिया देती है वो मानपत्र है। कुछ विशिष्ट लोग देते हैं वो सन्मानपत्र है लेकिन विमान तो सद्‌गुरु देता है। एक विशेष वस्तु। माँ जानकी वहां बैठती है जहां कुछ विशेष हो।

चलत बिमान कोलाहल होई।
जय रघुबीर कहइ सबु कोई।।

विमान उड़ान करता है। बीच में पडाव करता हुआ विमान श्री अवध में आता है। और वशिष्ठजी उद्‌घोषणा करते हैं कि आज ही राजतिलक कर दिया जाय। उसके बाद सीता-रामजी राज्यसिंहासन पर विराजित होते हैं। और-

प्रथम तिलक बसिष्ठ मुनि किन्हा।

वशिष्ठजी तिलक कर देते हैं तो जानकी की आखिरी पीठ 'मानस-मातृदेवो भव' की वो है सिंहासन; रामराज्य की पीठ। रामराज्य की पीठ पर जानकी बैठी है और रामराज्य का पर्याय है प्रेमराज्य। जानकी सत्ता पर नहीं बैठी है, सत् पर बैठी है; प्रेमपीठ पर बैठी है। रामराज्य मानी कोई सामंतशाही का पर्याय नहीं है बल्कि प्रेमराज्य है। यह सगोत्री शब्द है। गांधीबापू भी चाहते हैं कि रामराज्य आये।

सब नर करहीं परस्पर प्रीति।

तो जगदंबा की इक्यावन, बावन पीठों जो है। लेकिन मेरे लिए तो 'मानस' ही दुर्गा है।

रामकथा कालिका कराला।

एक बहुत प्यारा प्रश्न है कि बापू, 'सत्य, प्रेम, करुणा का स्वरूप क्या होता है?' सत्य, प्रेम, करुणा का एक-एक विशिष्ट रूप होता है। सत्य, प्रेम, करुणा का एक-एक विशिष्ट रंग होता है। और सत्य, प्रेम, करुणा का एक-एक विशिष्ट रस होता है। कल सुनियेगा।

किसी बुद्धपुरुष की शरणागति ये डोली है। भार उठाये बुद्धपुरुष और पहुंचे हम जैसे। शरणागति पहुंचा देती है और न पहुंचाये तो भी शरणागत को क्या चिंता? चिंता तो उठानेवाले को है। कई लोग मुझे पूछते हैं कि शरणागति में किस हद तक जाना चाहिए? देखो भाई, मैं विशेषणमुक्त 'शरणागति' शब्द यूझ कर रहा हूं। शरणागति मीन्स शरणागति। हम शरणागति की पालखी में बैठे हैं। शरणागति में बाधायें बहुत है। जगद्‌गुरु वल्लभाचार्य भगवान कहते हैं कि शरणागतों को चिंता नहीं करनी चाहिए। शरणागति के बाद चिंता क्यों? हमें तो विश्राम होना चाहिए।

मानस-मातृदेवो भव : ७

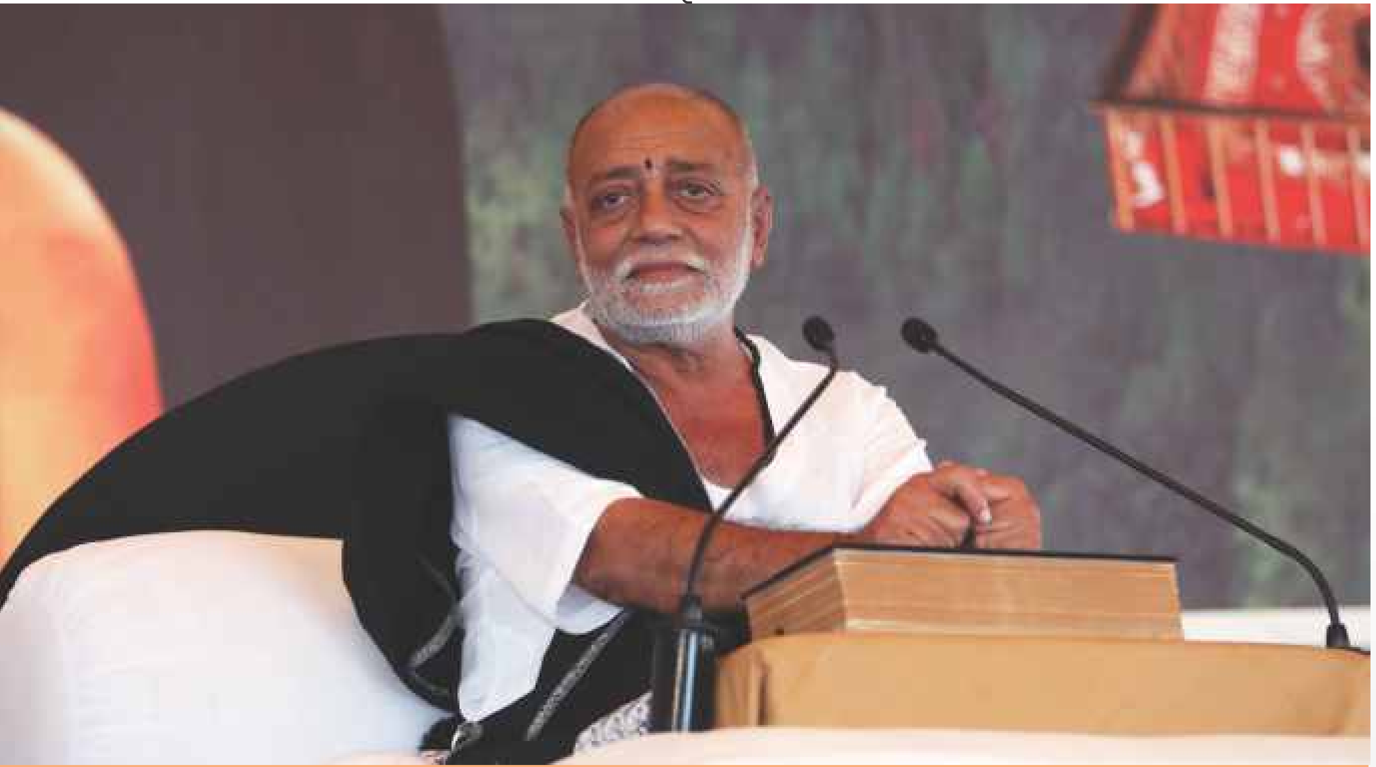

विश्व की कोई भी कन्या का नाम उमा है

'मानस-मातृदेवो भव', जो इस कथा का केन्द्रीय बिंदु है। संवाद के रूप में कुछ हम उसकी सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा कर रहे हैं। मूल में जिसको हम पराम्बा कहते हैं, आदि-अनादि शक्ति कहते हैं, आह्लादिनी शक्ति कहते हैं वो एक ही है। फिर इसके तीन रूप बनते हैं। एक, महाकाली; दूसरी, महालक्ष्मी; तीसरी, महासरस्वती। फिर उसके नव नाम प्रसिद्ध होते हैं, जिसको हम नवदुर्गा कहते हैं। जैसे कि शैलपुत्री, ब्रह्मचारिणी, चंद्रघंटा, कात्यायनी, स्कंन्द माता, सिद्धि दात्री, कालरात्रि आदि बिलग-बिलग उसके नव स्वरूप कहो। फिर संस्कृत वाड्मय में उसके प्रधान रूप में इक्कीस नाम आते हैं। फिर तो 'दुर्गा सप्तशती' में दुर्गा के सहस्र नाम भी है। ये जो पूरी प्रवाही परंपरा है उसको हम सात्त्विक-तात्त्विक दृष्टि से देखें। मूल में आह्लादिनी शक्ति है, जिसको हम आदि शक्ति भी कहते हैं।

आदि शक्ति जेही जग उपजाये।

जिसको हम सीता, राधा, भवानी कहते हैं। मूल में एक, फिर तीन, फिर नौ, फिर इक्कीस, फिर अपरंपार। जब 'मानस' को केन्द्र में रखकर मैं देवीपूजा कर रहा हूं तब जिसका तीन स्तर एक दिन मेरी व्यासपीठ ने आपके साथ शेर किया।

नाम उमा अंबिका भवानी।

विश्व में कोई भी कन्या, कोई स्वीकारे ना स्वीकारे, ब्याह के बाद नाम बदल जाये बात ओर है। हमारे यहां गोत्र, सरनेम, नाम बदल जाते हैं। विश्व की कोई भी कन्या का नाम उमा है। जब तक हम अपने घर की बेटी को उस आदिशक्ति के रूप में नहीं समझेंगे तब तक हमारी पूजा पूरी नहीं मानी जाएगी। ये पहली शर्त है। दुनिया की कोई भी विवाहिता स्त्री ये अंबिका है। और कोई भी स्त्री जब माँ बन जाती है तब विश्व की कोई भी स्त्री भवानी बन जाती है। ये तीन स्तर है। कन्या आती है। कन्या आती है तो हम क्या कहते हैं कि कन्या आयी; बेटी आई। जो कन्या आती है, वो कन्या ब्याहती है तो वो जाती है। अंबिका बनने अपने घर से कहीं दूर जाती है। और माँ कायम, कायम, कायम रहती है। चाहे गिरिशृंग पर हो या रावण के इष्टस्वरूप में पाताल में हो। चाहे ऋतुचक्र बनके, वायुरूपा बनके पूरे विश्व में घूमती रहती है। माँ कायम रहती है।

महासरस्वती सत्य है। क्योंकि उनका एक नाम है महाबानी। महाबानी मानी श्रेष्ठ बानी, सुखद बानी, मृदु बानी। और वो सत्य के अलावा कुछ भी नहीं हो सकती। सत्य ही मृदु होता है; वो ही सुखद होता है।

मातु सुखद बोली मृदु बानी।

महाबानी सरस्वती है। वो श्वेतांबरी होती है, शुक्लांबरी होती है। सत्य का रंग भी श्वेत होता है। सत्य मानी उज्ज्वल, धवल। माँ है महालक्ष्मी। महालक्ष्मी प्रेम है। उसका दूसरा नाम है महादानी। महान दान करती है। वेद का श्री सुक्त उसमें महालक्ष्मी की चर्चा है कि हे लक्ष्मी, तू मेरे घर आ लेकिन पडोशन बनकर मत आना। पडोशन कायम नहीं रहती। वेद का ऋषि कहता है, हे महालक्ष्मी, मेरे घर में तू कायम निवास करे। महालक्ष्मी मानी महादानी। प्रेम ही महादानी हो सकता है। विश्व में प्रेम के सिवा महादानी कोई भी नहीं हो सकता। प्रेम जितना दान देता है, उतना विश्व में कोई नहीं देता। खलील जिब्रान कहते हैं कि देते-देते प्रेम खुद को भी दे देता है। उसको जिब्रान ने महादानी कहा है। प्रेम का रंग है लाल। महालक्ष्मी गुलाबी-रक्त कमल पर बैठी है। उसका रंग ही लाल है। वेलेन्टाइन डे में भी सब एक-दूसरे को लाल रंग का ही गुलाब देते हैं। प्रेम है 'भूरिदा जना:।' प्रेम देता है, देता है, देता है। आखिर में देनेवाला भी समाप्त हो जाता है। फिर है महाकाली, उसका रंग है काला। महाकाली को मेरी व्यासपीठ कहेगी करुणा। ये तो उसका उपर का रूप ऐसा है।

करुणा कोमल भी होती है, कठोर भी होती है। सत्य कोमल भी होता है, कठोर भी होता है। और प्रेम कोमल भी होता है, कठोर भी होता है। मैं मेरे ही शब्द की व्याख्या करूं लेकिन सत्य कायम कोमल ही होता है; हमको कठोर लगता है। प्लीज़, इसे याद रखना। प्रेम सदैव कोमल होता है। कोई आपको सत्य कहे तब आपको चोट लगती है। आप को दिया था तो फूल लेकिन आपको लगी शूल! क्योंकि तुम इस सत्य को सुनने के लिए, सहने के लिए इतने तैयार नहीं हो। सत्य तो कोमल ही होता है। लगता है कठोर। प्रेम तो बिलकुल मासूम होता है। कितना कोमल होता है, कितना नाजूक होता है प्रेम! लेकिन प्रेम के कारण कोई अपनी प्रेमी व्यक्ति को उसके परम हित के लिए कुछ वाक्य कहेंगे तो उसको कठोर लगता है। प्रेम तो मासूम है। उसको लगे कठोर तो लगे। तुम्हारी मासूमियत बनाये रखो। फूल लगता है शूल! माँ कभी कठोर हो सकती है? लेकिन बालक की धारणा के विपरीत उसके परम कल्याण के लिए माँ कोई निर्णय करती है तब माँ का प्रेम, माँ की ममता बालक को कठोर लगती है।

तो सत्य है कोमल। तुम सत्य को कठोर बनाना मत। हम सत्य के रूपों को ठीक से समझे नहीं है। हम स्वयं उसको कटु बना देते हैं, उसे कठोर बना देते हैं। हमें लगता है कि इस सत्य को कटु बनाकर नहीं कहूंगा तो ये समझेगा नहीं। अरे! तेरा सत्य यदि सत्य है तो कभी न कभी उसे समझा जाएगा। प्रेम है मासूम। तो प्रेम है कोमल, कच्चा धागा। हम सत्य को और प्रेम को कठोर बनाये जा रहे हैं। और तीसरी है करुणा; वो है महाकाली। लगती है कठोर लेकिन उसका स्वभाव तो बहुत कोमल है। रूप कठोर लगता है। तो किसी की करुणा भी हमें कठोर लगती है। इसलिए एक प्रश्न आया है कि सत्य, प्रेम और करुणा कभी-कभी दोनों रूप में दिखता है। क्या मतलब इसका? दो रूप तो इसके है ही नहीं। एक रूप तो उसका मूल है और दूसरा रूप तो हमारे कारण ऐसा प्रतिभासित होता है। कारण हम है।

तो महाबानी, सरस्वती ये है सत्य। कोई भी शास्त्र की बानी महा होती है। सत्य की बोली महान होती है। महादानी-महालक्ष्मी ये है प्रेम; पिंक कलर। सत्य श्वेत कलर। और करुणा का रंग सदैव काला होता है। याद रखियेगा, महाकाली की करुणा का प्रतीक है काला रंग। एक गहरी, अत्यंत गहन, जिस करुणा में कोई दाग नहीं ऐसा काली का रूप ये है करुणा का रंग। तो सत्य है महाबानी। प्रेम है महादानी और करुणा है महाकाली अथवा तो महाराणी; शंभुराणी। ये महाराणी है; पटराणी है।

तो महाबानी, महादानी, महाराणी ये है उमा, अंबिका, भवानी। ये है सरस्वती, लक्ष्मी और काली। तो फिर एक में से तीन रूप हुए। और वैष्णोदेवी के भी तीन रूप है गुफा में। मैं कल हो आया। और आप सब को याद

करके मैं प्रणाम कर आया। मैं दिल से कहता हूं। अब मैं आपको कैसे बताऊं कि मैं जब यज्ञ करता हूं तो आप सबको याद करके करता हूं। मेरे लिए कुछ करना शेष नहीं है। दादा ने सबकुछ कर दिया। ओर क्या चाहिए? तो बाप! मुझे कोई प्रमाणपत्र नहीं देना है, लेकिन मैंने देखा कि व्यवस्था भी सुंदर, स्वच्छता भी सुंदर। और जहां माँ होती है वहां पवित्रता होती ही है। मैंने तीनों देखा। इतनी दूरी पर बैठी है माँ लेकिन मैंने बहुत स्वच्छता देखी है। मुझे बड़ी खुशी हुई। ये देवता और मातायें अपनेआप स्वच्छता अभियान चला रही है। ये कभी-कभी महिषासुर आदि-आदि को मारने की बात नहीं थी। ये भी एक स्वच्छता अभियान था। रावण को सकुल मारा ये कोई मारने की बात थी? ये तो स्वच्छता अभियान था। कभी-कभी स्वच्छता अभियान जरूरी है। पूरे राष्ट्र में ये चल रहा है अभियान गांधीजी की स्मृति में। व्यासपीठ स्वच्छता अभियान चला रही है। पवित्रता है ही। गंगा कभी अपवित्र हो सकती है? लेकिन स्वच्छता तो होनी चाहिए।

तो ये तीन रूप है माँ के। दुनिया की प्रत्येक बेटी उमा है। दुनिया की प्रत्येक परिणीता-बहू अंबिका है और दुनिया की प्रत्येक माँ भवानी है। और माँ, बेटी और परिणीता वो साडी पहनती हो वो जरूरी नहीं है। वो नारी ही हो वो जरूरी नहीं है। वहां कोई जातिभेद नहीं है। वहां स्त्री-पुरुष का भेद नहीं है। एक, गौरी माँ है। दूसरा, ग्रंथ भी माँ है। 'रामचरित मानस' माँ है। ग्रंथ के रूप में 'गीता' हमारी माँ है और वेदश्रुति भगवती है। 'भागवत' माँ है। क्योंकि 'भागवत' संहिता है। और 'भागवत' को परम हंसों की संहिता कही है। 'भगवद्गीता' तो माँ है ही क्योंकि उसे ब्रह्मविद्या कहा है। ये ब्रह्मविद्या है और माँ श्रुति भगवती के रूप में श्रुति हमारी माँ है। ज्ञानदेव की ज्ञानेश्वरी माँ है। विश्व में कोई भी स्तुति माँ का रूप है। ये चौपाई क्या है? माँ है। हर स्तुति माँ है। तो फिर तीन रूप विशेष। मूल में गौरी। दूसरा, ग्रंथ भी माँ है। और तीसरा, जिसको जो हो लेकिन गुरु उसकी माँ है। गुरु देवी है। गुरु चंद्रघंटा है। गुरु शैलपुत्री है। गुरु ब्रह्मचारिणी है। गुरु सिद्धिदात्री है। गुरु कात्यायनी है। गुरु साक्षात् देवी है। ये हनुमान को हम क्या कहते हैं?

जै जै जै हनुमान गोसांई।
कृपा करौ गुरुदेव की नांई।।

वो गुरु पाताल में जाकर देवी बनकर बैठा था। माँ बनकर पाताल में बैठा था। ये भी माँ है। तो फिर ये तीन रूप है। गौरी, ग्रंथ और गुरु। ये माँ जगदंबा है, पराम्बा है। फिर उसके नव स्वरूप है। चैतन्य दर्शन में ऐसा लिखा है कि भगवती के तीन रूप है। एक स्वरूप-शक्ति। दूसरा तटस्थ-शक्ति और तीसरा जीव-शक्ति, माया-शक्ति। भगवान चैतन्य गौरांग तीन प्रकार में शक्ति का विभाजन करते हैं। स्वरूप-शक्ति मानी भीतरी शक्ति। और दूसरी है तटस्थ-शक्ति। तट मानी किनारा। पानी से भी वो सटा हुआ है, लेकिन वो पानी नहीं है। एक शक्ति है ये तटस्थ-शक्ति। और तीसरी शक्ति जिसको माया-शक्ति कहते हैं। ये तीन रूप में शक्ति का निरूपण चैतन्य ने किया है।

हमारी निम्बार्कीय परंपरा में भी शक्ति का विभाजन किया है। 'वेदान्त पराग सौरभ' नामक एक ग्रंथ है हमारे यहां। आचार्यचरण ने दिया है। मैं दश:श्लोकी देखता हूं तो भी मुझे उसमें माँ के दर्शन होते हैं। निम्बार्कीय का प्राण है दश:श्लोकी। अंश का अर्थ हम करते हैं खंड, टुकड़ा। निम्बार्क भगवान कहते हैं कि अंश मानी जीव नहीं, आत्मा। एक प्रकार की शक्ति की बात करते हैं। ये अंश शक्तिरूप है। हमारे निम्बार्क प्रभु ने भी शक्ति का दर्शन दिया है। जगद्गुरु शंकराचार्य अद्वैत दर्शन में है वो शक्ति को त्रिपुरसुंदरी कहते हैं। ये पूरी तांत्रिक विधि है। मैं आप-से प्रार्थना करूं, माँ की साधना जो तांत्रिक है उसमें समर्थ गुरु न हो तो प्लीज़, मत जाना। तंत्र की साधनावाले स्वयं भीषण हो जाते हैं। भयभीत करनेवाले। मैंने मेरे जीवन में बड़े-बड़े तांत्रिकों को देखा है। मेरी तंत्र में कोई रुचि भी नहीं। और मेरा ये विषय भी नहीं है। मुझे तो मेरी माँ जानकी, मेरी माँ भवानी। तंत्र की सिद्धि तो मिल जाती है लेकिन शुद्धि नहीं मिलती। कराल लगते हैं तांत्रिक लोग। मैं कौतुक के लिए कहीं-कहीं जाता हूं। मेरा विषय भी नहीं है और मेरी रुचि भी नहीं है। मैं उज्जैन गया। वहां भैरव तो शराब पी रहा था! सब बोटल खरीदकर जा रहे हैं और भैरव पी रहे थे! मेरे पास तो कोई ऐसी अपेक्षा ही नहीं रखता है। मुझे वहां प्रसाद दिया तो मैंने कहा, तू पी! मैं तो अखंड पी के आया हूं।

धन्यास्ते कृतिन: पिबन्ति सततं श्री रामनामामृतं।

कई लोग शराब चढ़ाते हैं! लेकिन जाने दो यारों! जिसकी जैसी श्रद्धा! तब से मेरे मन में एक व्याख्या बन गई है, जो शराब पीये उसका दूसरा नाम है भैरव। बंद मत करना! अच्छा नाम है। मैं छुड़वाने नहीं आया हूं। तुम जैसे भी हो मैं तो वैसे ही स्वीकार करने के लिए आया हूं। प्रवचन प्रेम करने की मेरी विधा है। मैं यहां कोई प्रवचन करने के लिए नहीं आया हूं, बल्कि मैं मेरी सुंदर पृथ्वी को प्रेम करने के

लिए आया हूं। मैं पूरी कायनात को प्रेम करने के लिए आया हूं। प्रेम जताने के लिए कई अलग-अलग विधायें होती है। मेरी आपसे प्रेम जताने की विधा है भगवतज्ञान। कथा ये पूरी कायनात के लिए मेरी मोहब्बत है। 'खुदा है मोहब्बत, मोहब्बत खुदा है।' हमारे राहत इन्दौरीसाहब का शे'र है -

जनाजे पर मेरे लिख देना यारों,
मोहब्बत करनेवाला जा रहा है।

क्योंकि राम को पूजा प्रिय नहीं है। करो तो अच्छी बात है। राम को पाठ किया करो वो प्रिय नहीं है। करो तो अच्छी बात है। राम को प्रतिष्ठा प्रिय नहीं है। राम को पैसा, पद प्रिय नहीं है। राम को क्या प्रिय है? 'मानस' में लिखा है-

राम हि केवल प्रेमु पिआरा।
जानि लेउ जो जाननिहारा।।

परस्पर प्रेम करो बस।

ये हसीन चेहरे मेरी तस्बी के दाने हैं।
निगाहे घूमा लेता हूं और इबादत हो जाती है।

आप इतने दूर से आते हैं। नौ दिन तक बैठकर श्रवण करते हैं। ये बात ही कह देती है कि आप कितने हसीन है! आकृति तो नाशवंत है, श्रवण शाश्वत है। कोई आश्रित गुरु की सेवा करता हो और गुरु शांति से सो जाये तो वो फ़रिश्ता लगता है। आर्यावर्त की नारी पतिपरायण हो और पति सो जाये तो क्या उसको वो फ़रिश्ता नहीं लगता? मेरे श्रोताओं के प्रति मेरी ममता है। ये ममता मुझे जनम-जनम तक बंधन दे तो मुझे कुबूल है। मुझे मुक्ति चाहिए ही नहीं। मारो नरसिंह महेता अमने शीखवी गयो छे। 'मानस-नागर' जूनागढ में करेंगें।

तळेटी जतां एवुं लाग्या करे छे,
हजी क्यांक करताल वाग्या करे छे।
- मनोज खंडेरिया

हजो हाथ करताल ने चित्त चानक।
तळेटी समीपे हजो क्यांक थानक।
- राजेन्द्र शुक्ल

हरिनां जन तो मुक्ति न मागे,
मागे जनम जनम अवतार रे;
नित सेवा नित कीर्तन ओच्छव,
निरखवा नंदकुमार रे।
- नरसिंह मेहता

भजनानंदी को किसी से कोई अपेक्षा नहीं रखनी चाहिए। उनको तो सिर्फ़ सेवा ही करनी है। साधु को कोई करीब नहीं होता और साधु से कोई दूर नहीं होता। उपनिषद कहता है कि ईश्वरतत्त्व दूर से भी दूर है और करीब से भी करीब है। हम उज्जैन एक तांत्रिक के यहां कौतुक से गये। मेरे कदम क्यों वहां जाने के लिए बेताब हुए होंगे! उसका प्रमाण मुझे बाद में मिला जब मैं अंदर गया उसके कमरे में। वो जरा नादुरस्त थे। वहां वो अपनी रामकथा की केसेट सुन रहे थे! एक तांत्रिक सुन रहा था! मेरी आंखें थोड़ी नम हो गई। और लगा कि मुझे यहां आना ही चाहिए। ये तो मेरा श्रोता निकला! दुनिया उसे मानती होगी लेकिन उसकी नादुरस्ती में मेरी कथा औषधि का काम कर रही है तो बैद्य को जाना चाहिए। कम से कम मेरे मरीज़ को तो पूछुं कि हाल कैसा है? तो मेरे ऐसे कई अनुभव है।

तो मैं आप-से निवेदन करने चला कि तंत्र उपासना में मत जाना। नैमिषारण्य में भी बहुत तांत्रिक है। वहां एक प्रखर तांत्रिक है। मेरे पास तलगाजरडा आये और बोले, बापू, मेरी एक बेटी है और उसकी शादी नहीं हो रही है। मैंने पूछा कि आप तो तांत्रिक साधना भी करते हैं तो आपके पास तो कई लोग आते हैं और सफल भी होते हैं तो आपकी बेटी की शादी के लिए आप स्वयं कुछ नहीं कर सकते? बोले, नहीं बापू! आप ही कुछ बता दो। और चैत्र नवरात्र आनेवाले थे। मैंने कहा कि मैं तो यही कहूं कि आप 'रामचरित मानस' का पाठ करो। और मैं ये नहीं कहता कि इससे शादी हो जाएगी। आपको शांति मिलेगी। और साहब! उसने 'मानस' का पाठ किया और तीन महिने के बाद फिर आये और बोले कि बापू, मेरी बेटी की सगाई हो गई! ये कोई मोरारिबापू का करिश्मा नहीं है, बल्कि ये ('मानस') तो जगदंबा स्वयं है।

चैतन्य परंपरा में एक स्वरूप-शक्ति; दूसरी तटस्थ-शक्ति और तीसरी माया-शक्ति। हमारी निम्बार्क परंपरा में अंश शक्तिरूप है। खंड नहीं है, टुकड़ा नहीं है। जीव शक्ति है। और फिर शंकराचार्य त्रिपुरासुंदरी भुवन विमोहनी। तो उसमें भी श्री यंत्र की पूजा आदि-आदि है। और श्री यंत्र बहुत महत्त्व का है। लेकिन ठीक गुरु हो तो ही करना। और ठीक गुरु होगा तो वो ये ही कहेगा कि तुझे कुछ करने की जरूरत नहीं है, मैं ही सब कुछ कर दूंगा तेरे लिए।

'मानस' में भी नव दुर्गा है। जैसे कल हम खोज रहे थे कि द्वादश पीठ है 'मानस' में, वैसे नव दुर्गा भी है।

'मानस' एक ऐसी जगदंबा है। माताजी की अष्टभुजा का क्या अर्थ है? भुजा मानी भू का अर्थ होता है पृथ्वी। और जा का अर्थ होता है जन्म लेनेवाली। भुजा मानी पृथ्वी से जन्मलेनेवाली। जानकी का एक नाम है भूमिजा। पृथ्वी से प्रकट होती है। भुजा मानी पृथ्वी से निकलनेवाली वस्तु को भुजा कहते हैं। जमीन से निकलनेवाली आठ वस्तु ही माँ की भुजा है। एक, पृथ्वी से जल निकलता है। जल माँ अंबा की भुजा है। पृथ्वी महाभाग्यशाली है कि उस पर जलरूपी माँ अंबा का हाथ है। ओर ग्रहों में तो जल का एक बिंदु नसीब ही नहीं हो रहा है। दूसरा, गंध पृथ्वी से निकलती है। आपके आसपास जब कोई सुन्दर स्मेल आने लगे तो समझना कि मेरी माँ की भुजा मेरी ओर आ रही है। जैसे अमीर खुशरो कहता था कि मेरे पीर की खुश्बू आ रही है। दूसरी भुजा गंध जो जीवन की महक देती है। मुर्शिद की खुश्बू देती है; पादुका की खुश्बू देती है। जो साधना में ओर गहराई में जाते हैं उसको शब्द की सुगंध आती है। शब्द की एक महक होती है। हरिरस का जब पाठ करते हैं तब उसके शब्द की खुश्बू हमारे नासापुट में जाती है और उनसे हम आह्लादक होते हैं। ये तामसी खुश्बू नहीं है, ये बड़ी सात्त्विक खुश्बू है। माँ की तीसरी भुजा है अढार भार वनस्पति। पृथ्वी में जो वनस्पति उगती है ये माँ की हजारों भुजायें है। कोई छांया दे रही है; कोई फल दे रही है; कोई रस दे रही है; कोई विश्राम दे रही है; कोई जड़ीबुट्टियां दे रही है; कोई कुटियां की लकड़ियां दे रही है; अग्नि की धूणी के लिए समिध दे रही है। ये माँ की भुजा है।

एक भुजा है धातु। सोना, तांबु, कांसू, पित्तल प्रत्येक धातु की जन्मदात्री माँ है। स्वर्णधातु लो तो उसे एक संपत्ति का रूप दिया गया है। श्री का रूप, लक्ष्मी का रूप दिया है। माँ की एक भुजा हमें सोना देती है। यानी समृद्धि देती है। और यदि सोना न दे तो भी सोने तो जरूर देती है। माँ का हाथ फ़िरे और बालक सो जाता है। पांचवीं भुजा हीरा है। पृथ्वी की खदानों से पत्थर निकलते हैं और उनमें से कोई पत्थर से हीरा बनाया जाता है। हीरा माँ की भुजा है। छठ्ठा है ओईल। तेल मानी स्नेह। सित्त्क पदार्थ को संस्कृत में स्नेह कहते हैं। माँ की एक भुजा है स्नेह, ममता।

अखिल विश्वतणी जनेता।

उसको छोटे रूप में मत लेना। ये विश्वंभरी है। अविनाशभाईनी पंक्ति ए दिवसे में गाई'ती के -

माडी तारुं कंकु खर्युं ने सूरज ऊग्यो,
धरती माथे प्रभुताए जाणे पग मूक्यो।

सातवीं भुजा है पर्वत। हर पर्वत पृथ्वी से प्रकट होता है। ये माँ पर्वत पर क्यों बैठी है? क्योंकि उसे पता है कि ये मेरी संतान है। 'रामायण' के रूप में पर्वत का अर्थ कहूं तो 'पावन पर्बत बेद पुराना।' वेद और पुराण पवित्र पर्वत है। तुम्हारे पास कोई शास्त्र आये, पुराण आये तो समझना कि माँ की अपनी भुजा आपके पास आई है। आठवीं भुजा है लावा, एक ऊर्जा। दिखाव में उष्णता है लेकिन उष्णता नहीं, उष्मा है। माँ हृदय फ़ाड़ देती है तब लावा निकलती है। उसमें से उष्मा प्रकट होती है जो जरूरी हो उसको बचाये और बिनजरूरी का स्वच्छता अभियान कर डाले। एक धगधगता लावा ये माँ की आठवीं भुजा है। क्योंकि माँ के कई रूप है, कराल भी और कोमल भी। और एक बात याद रखना कि जो परमतत्त्व होता है वो कराल भी होता है और कोमल भी होता है। इसलिए सद्‌गुरु कराल भी होता है और कोमल भी होता है। कोमल उनका स्वभाव है और कराल आपके स्वभाव के कारण लगता है। परमात्म तत्त्व जो है वो अति विकट है, विचित्र है। निकट से निकट है और दूर से भी दूर है। कुसुम से कोमल और वज्र से कठोर है।

''एक आश्रित अपने सद्‌गुरु को बिलकुल सही-सही और सचमुच कब समझ पाता है? एक साधक सद्‌गुरु को परिपक्व रूप में कब पाता है?'' मेरा जवाब तो यही है कि सद्‌गुरु कभी भी पूरा-पूरा समझ में आता ही नहीं है। 'नेति-नेति' होना पड़ता है। 'गुरु तारो पार न पायो।' हम बिंदु है, वो सिंधु है। और बिंदु सिंधु का परिचय नहीं दे सकता। गुरु को समझना मुश्किल है, गुरु में समाहित हो जाना आसान है। बिंदु सिंधु में समा जाये। समझने की चेष्टा क्यों करते हो? तुम खुद वो हो सकते हो। जहां वो है वो ही हम बन सकते हैं। 'चिदानंद रूपः शिवोऽहं शिवोऽहं।' सूत्र के रूप में मेरा यही जवाब है कि सद्‌गुरु को समझा नहीं जाता बल्कि उसमें समाया जाता है।

तो माँ की ये तलगाजरडी दृष्टि में रही आठ भुजायें हमें किसी न किसी रूप में सहारा दे रही है; सिर पर हाथ घूमा रही है। वैसे मैंने कहा था कि मेरी व्यासपीठ को माँ का एक रूप निर्मित करना है। तो माँ की दो आंखें, दो हाथ और माँ के दो पैर वो क्या हो सकते हैं? ये पहले कभी कहा है। माँ की दो आंखें; मेरे अनुभव में एक आंख ममता की होती है और दूसरी आंख समता की होती है। माँ में कभी विषमता नहीं होती। माँ की दो भुजायें दूसरे संदर्भ में है, एक भुजा है अभय और दूसरी भुजा है वरद यानी वरदान देती है। एक पैर है आचरण और दूसरा आवरण है। आचरण मानी कुछ भी लिए बिना चौबीस घंटे अपने बच्चों का ख्याल रखना। दूसरा है आवरण मानी उनकी गति, उनकी प्रवृत्ति, उनकी सद्‌वृत्ति हमें ढांकती है। और वो जैसे हमारा एक आवरण हो। जो हमें किसी भी मौसम में सुरक्षित रखती है।

तो बाप! 'मानस-मातृदेवो भव' के नाते हम माँ की किसी न किसी रूप में पूजा कर रहे हैं। वाणी द्वारा माँ की हम साधना कर रहे हैं। लेकिन जैसे कल चर्चा हुई कि 'मानस' द्वादश पीठ है। वैसे नव दुर्गा है 'मानस' में। एक दुर्गा है पार्वती, शैलजा, ब्रह्मचारिणी जो आप कहो।

जय जय गिरिबरराज किसोरी ।
जय महेस मुख चंद चकोरी ।।

'मानस' की दुर्गा के रूप में नवदुर्गा में जो मूल है वो है माँ पार्वती। 'दुर्गारूपेण संस्थिता' ये 'मानस' है। दूसरी दुर्गा है 'मानस' में, माँ जानकी, सीता। चोटीला की कथा में मैंने कहा था कि माँ का एक रूप होना चाहिए और वो है 'अहिंसारूपेण संस्थिता।' जानकी का पात्र लीजिए 'मानस' में, इसने कहीं किसी की हिंसा नहीं की है। इसलिए मेरी व्यासपीठ माँ जानकी को 'अहिंसारूपेण संस्थिता' कहती है। तीसरी दुर्गा है अहल्या। कुष्मांडिका, इसका अर्थ है कि जिसके उदर में शुभ भी होता है और अशुभ भी होता है। अहल्या थोड़ी चूक करती है, लेकिन ये दुर्गा का ही रूप है। 'या देवी सर्वभूतेषु धृति रूपेण संस्थिता।' धृति के दो अर्थ है-धारक और धैर्य। धृतिरूपेण अहल्या। चौथी दुर्गा है कौशल्या। 'या देवी सर्वभूतेषु बुद्धिरूपेण संस्थिता।' कौशल्या बुद्धिरूप है। पूर्व जन्म में शतरूपा को परमतत्त्व ने कहा कि तेरा विवेक अलौकिक है। विवेक ये बुद्धि का हिस्सा है। अथवा तो शंकराचार्य की बोली में ज्ञानशक्ति कौशल्या। क्रियाशक्ति कैकेयी। उपासना शक्ति सुमित्रा। और राजा दशरथ साक्षात् वेद है। ज्ञानरूपेण, बुद्धिरूपेण, विवेकरूपेण ये कौशल्या है।

पांचवीं दुर्गा है अनसूया। 'पुष्टिरूपेण संस्थिता।' ब्रह्मा, विष्णु, महेश को बच्चे बनाकर गोद में रखकर अपना दूध पिलाकर के पुष्ट किया और दत्तात्रेय बना दिया। छठ्ठी है शबरी। शबरी को मेरी व्यासपीठ कहेगी 'भक्तिरूपेण संस्थिता।' सातवीं दुर्गा है 'मानस' में वालिपत्नी तारा। और आप जानते हैं कि माताजी के नाम में तारा एक पराम्बा का नाम है। आठवीं दुर्गा है स्वयंप्रभा। 'ज्योतिरूपेण संस्थिता।' 'या देवी सर्वभूतेषु प्रभारूपेण संस्थिता।' नववीं दुर्गा है मंदोदरी। वहां कोई जाति, वर्ण, कुल का भेद नहीं है। माँ की कोई जाति नहीं है। कितना उदर में समाकर बैठी है ये माँ! राम को पूरा जानती है, समझाती भी है, लेकिन फिर भी मुख्य व्यक्ति समझता नहीं है और फिर ये सागरपेटी भले ही मंदोदरी कही जाये, ये जो माँ है उसका एक ही छेद उसके उदर की विशालता का परिचय है। और सतियों के लिस्ट में मेरे देश के ऋषिमुनियों ने अहल्या को भी लिया है, तारा को भी लिया है और मंदोदरी को भी लिया है। तो मेरे 'मानस' में नवदुर्गा है-पार्वती, जानकी, अहल्या, शबरी, तारा, स्वयंप्रभा, कौशल्या, मंदोदरी, अनसूया।

तो ऐसी जगत की माता माँ पार्वती योग्य समय पाकर भगवान शिव के सामने बैठकर रामकथा के बारे में पूछती है और भगवान शंकर कथा के रूप में राम का अवतार कैसे होता है वो रामजन्म की कथा सुनाते हैं। कौशल्याजी ने एक पुत्र को जन्म दिया। कैकेयी ने भी एक पुत्र को जन्म दिया। और सुमित्रा ने दो पुत्रों को जन्म दिया। चारों भाई बड़े होने लगे। नामकरण संस्कार का समय हुआ। महाराज दशरथजी ने वशिष्ठजी को प्रार्थना की कि मेरे पुत्रों का नाम आप अपने हृदय की अंतःकरण की प्रवृत्ति के

विश्व की कोई भी कन्या का नाम उमा है। जब तक हम अपने घर की बेटी को उस आदिशक्ति के रूप में नहीं समझेंगे तब तक हमारी पूजा पूरी नहीं मानी जाएगी। ये पहली शर्त है। दुनिया की कोई भी विवाहिता स्त्री ये अंबिका है। और कोई भी स्त्री जब माँ बन जाती है तब विश्व की कोई भी स्त्री भवानी बन जाती है। ये तीन स्तर है। कन्या आती है। कन्या आती है तो हम क्या कहते हैं कि कन्या आयी; बेटी आई। जो कन्या आती है, वो कन्या ब्याहती है तो वो जाती है। अंबिका बनने अपने घर से कहीं दूर जाती है। और माँ कायम, कायम, कायम रहती है। चाहे गिरिशृंग पर हो या रावण के इष्टस्वरूप में पाताल में हो। माँ कायम रहती है।

अनुसार रखे। राजन्, कौशल्या के अंक में जो बालक खेल रहा है, जो आनंद का सिंधु है, सुख का समूह है, राशि है, खान है, जिसके नाम से दुनिया को आराम, विश्राम, विराम, अभिराम की अनुभूति होगी इसलिए कौशल्यापुत्र का नाम मैं राम रखता हूं। राम के समान चेहरा, वर्ण और स्वभाव भी ऐसा सब प्रकार से राम की तरह है, वशिष्ठजी ने कहा कि ये कैकेयी पुत्र का नाम में भरत रखता हूं। जिसके नाम से पूरे विश्व का भरणपोषण होगा। ये सबको भर देगा। पोषण करेगा, शोषण नहीं करेगा। तीसरा नाम सुमित्रा के छोटे बेटे शत्रुघ्न का रखा। जिसका नामस्मरण करने से शत्रुबुद्धि का नाश होगा, दुश्मनी मिटेगी, वैर खत्म होगा इसलिए इस बालक का नाम मैं शत्रुघ्न रखता हूं। लक्ष्मणजी का नामकरण तीसरे स्थान में होना चाहिए, लेकिन आखिर में रखा इसका कारण संतों से मैंने सुना कि लक्ष्मणजी शेष नारायण के अवतार है। और शेष जो होता है वह आखिर में ही होता है। और हम जानते हैं कि सब संख्या को काटा जाता है लेकिन शेष को नहीं काटा जा सकता। इसलिए शेष जो काल का रूप है। राजन्, ये चारों केवल आपके पुत्र ही नहीं है लेकिन वेद के सूत्र भी है। आप धन्य है।

व्यासपीठ हर वक्त कहती है कि ये चारों भाईयों का नामकरण हुआ लेकिन ये चारों नामों का हम हमारे जीवन में कैसे सदुपयोग करें? राम तो है महामंत्र। राम नाम भी है और महामंत्र भी है। दूसरे भाई का नाम भरत है, वो पोषण करता है। हमें यही सीखना है कि जो रामनाम जपता है वो किसी का शोषण न करे, बल्कि सबका पोषण करे। फिर आता है शत्रुघ्न। रामनाम जपनेवाला किसी के प्रति शत्रुता का भाव रखे बिना रामनाम जपे। द्वेषमुक्त चित्त से हरि नाम जपे। लक्ष्मण को सकल जगत आधार कहा। रामनाम जपनेवालों को सबको पुष्ट करना चाहिए, किसी से शत्रुता नहीं रखनी चाहिए और उसे चाहिए कि जितने का आधार बन सके बने। रामनाम साधक को चाहिए कि दूसरों को मदद करें। हम अस्पताल न बनाये लेकिन किसी मरीज़ को दवाईयां दे सकते हैं। इलाज के कुछ पैसे दे सकते हैं। हम विद्यालय न बना सके लेकिन किसी तेजस्वी विद्यार्थी की फीस भरकर उसे अलग श्रेणी में भेज सकते हैं। ये है आधार। मैं समाज से प्रार्थना करता रहता हूं कि अपनी आय का दसवां हिस्सा दूसरों के आधार बनाने में लगाया करें। और उसका अच्छा प्रतिभाव आ रहा है। किसी अनुष्ठान का भी दसवां हिस्सा यज्ञ में आहुत करना पड़ता है।

चारों भाई कुमार हुए तो यज्ञोपवित संस्कार हुआ। उसके बाद चारों भाईयों को गुरु वशिष्ठ के यहां विद्याप्राप्ति के लिए भेजा गया। अल्पकाल में विद्या प्राप्त की। विद्यासंपन्न होकर लौटे हैं। और उसे अपने जीवन में ऊतार रहे हैं। मैं ये भी विनंती करूं मेरे देश के भाईयों को, बच्चों को कि सुबह-सुबह माँ-बाप को प्रणाम करो। स्मृतिकार ने कहा है कि जो हम से बड़े हैं उसका अभिवादन करने से चार वस्तु बढ़ती है, ‘आयुर्विद्यायशोबलं।’ बड़ों को प्रणाम करने से एक तो आयुष्य बढ़ती है यानी बाकी के आयुष्य में प्रसन्नता बढ़ेगी। माता-पिता-गुरु को प्रणाम करने से विद्या बढ़ती है; यश बढ़ता है और बल बढ़ता है।

एक दिन विश्वामित्र महाराज आये। यज्ञरक्षा के लिए दशरथजी से पुत्र की मांग की। महाराज ने शुरू में तो मना किया। लेकिन वशिष्ठजी ने कहा कि राजन्, ये तो विश्व के लिए आये हैं। आप कब तक उसे अपने आंगन में केद करके रखेंगे? सौंप दो विश्वामित्र को। मुझे आनंद है कि मेरे देश का ऋषि सम्राटों के पास संपत्ति नहीं मांगता, संतति मांगता है। राम और लक्ष्मण को देते हैं। विश्वामित्र राम और लक्ष्मण को पाकर महानिधि पाने की अनुभूति करते हैं। यात्रा शुरू हुई। रास्ते में ताड़का राक्षसी आई और विश्वामित्र ने राम को कहा कि ये ताड़का के संतान ही हमारे यज्ञ के बाधक है। और भगवान राम अपने अवतारकार्य का श्रीगणेश करते हैं। पहले राक्षस को नहीं मारा, राक्षसी को मारा है। मारा तो नहीं, तारा है। भगवान ने हमें संदेश दिया कि आसुरीतत्त्व, आसुरीवृत्ति जहां से उत्पन्न होती है उसकी भूमिका को सबसे पहले नष्ट कर दिया जाये। विश्वामित्र के आश्रम में आये। दूसरे दिन मारीच को बिना फने का बाण मारकर फेंक दिया। यज्ञ को निर्विघ्न पूरा किया।

कुछ दिन आश्रम में रहे। उसके बाद विश्वामित्र ने कहा, राघवेन्द्र, मेरे यज्ञ के लिए आप आये। लेकिन एक अहल्या का यज्ञ बाकी है और दूसरा जनकपुर में धनुषयज्ञ है। वो भी संपन्न हो जाये। धनुषयज्ञ सुनते ही राम हर्षित होकर विश्वामित्र के साथ पदयात्रा करते हैं। गौतमऋषि के आश्रम में आये और अहल्या का उद्धार कर दिया। पतित को पावन करके भगवान गंगास्नान करके जनकपुर गये। बाग में निवास किया। जनकराज आये। स्वागत करके मिथिला के एक ‘सुन्दरसदन’ में मुनिगणों के साथ राम-लक्ष्मण को ठहराया। सबने भोजन किया और फिर विश्राम किया। और मैं भी आपको छोडूं। आप भी भोजन करे और विश्राम आपके नसीब में हो तो करना वर्ना मारो नाथ जाणे!

मानस-मातृदेवो भव : ८

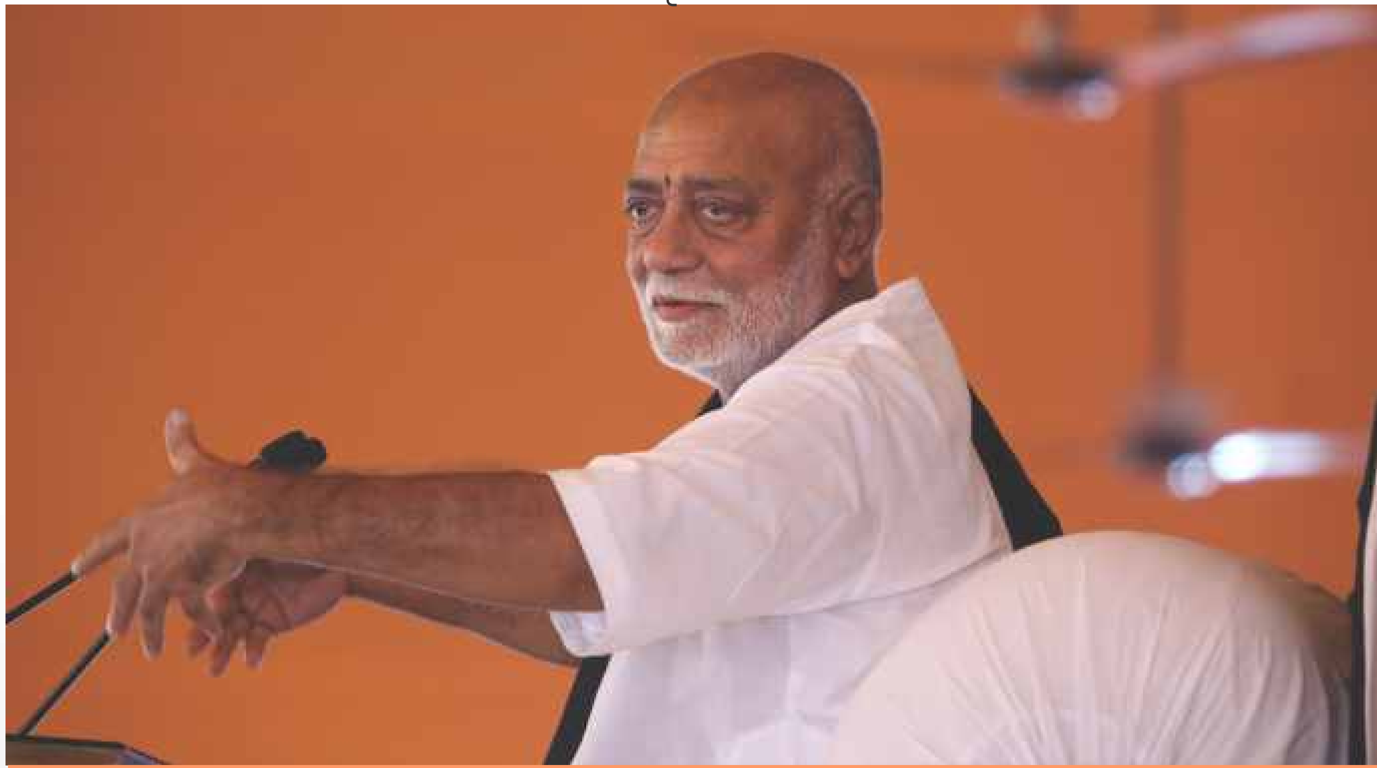

‘रामचरितमानस’ मेरे लिए वैश्विक शब्दकोश है

‘मानस-मातृदेवो भव’, जिस सद्विचार को लेकर हम इन दिनों माँ की वाङ्मयपूजा कर रहे हैं। हम आगे बढें उससे पूर्व अभी कुछ समय पहले मुंबई से आए मेरे परमस्नेही सौरभभाई ने अपने दो विचार व्यक्त किये और बड़ी अच्छी और प्यारी हिन्दी में व्यक्त किये। बहुत अच्छा लगा कि मातृदेवो से हम भारत माता की ओर गति करें। और भारतीय इतिहासों के साथ, भारतीय हकीकतों के साथ क्या-क्या खिलवाड़ होती रही खरीदे हुए व्यक्तियों से उसकी भी एक पीड़ा व्यक्त हुई। हम सब को चाहिए सावधान रहे। और सावधान रहना कोई अपराध नहीं, कोई गुनाह नहीं। और यह सावधान रहना गुनाह है तो यह गुनाह हम बार-बार करेंगे। मेरे ‘मानस’ में ‘सावधान’ शब्द कितनी बार आया! मेरा ‘रामचरित मानस’ मेरे लिए एक वैश्विक शब्दकोश है। उसमें क्या नहीं है? मेरे लिए यह पंचमवेद है। यद्यपि ‘महाभारत’ को महर्षियों ने पंचम वेद कहा है लेकिन मैं ‘महाभारत’ को दंडवत् करते हुए व्यक्तिगत भाव में कहूंगा कि ‘रामायण’ भी पंचम वेद है क्योंकि पंचमुख शंकर के मुख से निकला है। यह पंचम वेद है। तो सावधान होने की बात आई। कभी-कभी चंद क्षणों में गलत निर्णय किये जाते हैं। शताब्दियां उसका भोग बन जाती है। अब समय है कि सभी व्यक्ति अपने-अपने स्थान में सावधान होकर भारत का जो मूल रूप है, पृथ्वी का जो सौंदर्य है, अक्षुण्ण रखने के लिए सावधान रहे। तो अच्छा लगा सौरभभाई, खुश रहो बाप! आपकी एक आहुति हो गई इस ‘मानस-मातृदेवो भव’ यज्ञ में, प्रेमयज्ञ में।

आइए, आगे बढें। मैंने कल कहा था, सावरकुंडला से कथा में आते हैं, न आते तो पहले मैं विषय जाहिर कर देता कि मैं इस कथा में यह सब्जेक्ट पर बोलुंगा तो स्वाध्याय कर के भेज देते गुणवंतबापू। तो यह कथा का नामकरण शायद अबू धाबी में कर दिया था ना कि कटरा में माँ वैष्णोदेवी के चरणों में कथा होगी तो इस ‘मातृदेवो भव’ पर बोलूंगा। मैं पहले दिन स्मरण कर चुका हूं कि संस्कृत वाङ्मय में इक्कीस बार शब्द के अर्थ है, अनेक रूप रूपाय। माँ भी अनेक रूप

रूपाय। इक्कीस नाम गुणवंतबापू ने दिये। फिर उस पर गुरुकृपा से मैं आप से बात करता रहूंगा आगे-आगे।

पहला नाम है ‘मातृ।’ यह दिव्य स्वरूपा जो माँ है उसका एक नाम है मातृ। जो हम ‘मातृदेवो भव’ से हररोज उसका स्मरण करते हैं। उपनिषदीय भी विचार है मातृ। मैंने कल भी कहा कि संसार की हर एक नारी उमा है, लक्ष्मी है, अंबिका है और भवानी है। मातृमय जगत है। तो एक तो मातृ, उसमें ज्यादा कोई चर्चा करने की जरूरत नहीं। उसी पर तो हमारा संवाद चल रहा है। और ‘मातृ’ शब्द माता के रूप में आपको ‘मानस’ में बार-बार मिलेगा। पंक्ति यही उठाई है-

जगत मातु सर्बग्य भवानी।
मातु सुखद बोलीं मृदु बानी।
पारबती भल अवसरु जानी।
गई संभु पहिं मातु भवानी।।

तो ‘माता’ शब्द तो आपको ‘मानस’ में अनेक बार मिल जाएगा। तो एक शब्द है ‘मातु।’ दूसरा शब्द है ‘जननी।’ ‘जननी’ शब्द भी ‘मानस’ में है। जो प्रसूता है। राम वनवास के प्रसंग के दौरान उसका संदर्भ लेकर भगवान राम का जो वक्तव्य है। कैकेयी को जननी कहते हैं तीन बार-

सुनु जननी सोइ सुतु बड़भागी।
जो पितु मातु बचन अनुरागी।।
तनय मातु पितु तोषनिहारा।
दुर्लभ जननि सकल संसारा।।
मुनिगन मिलनु बिसेषि बन सबहि भाँति हित मोर।
तेहि महँ पितु आयसु बहुरि संमत जननी तोर।।

त्रिसत्य कर दिया-जननी, जननी, जननी। ‘जननी’ शब्द माँ का है यह भी हम ‘मानस’ में पाते हैं। ‘पूज्या।’ माता पूज्य है इसलिए उसका नाम पूज्या हो गया। आपको ‘पूज्या’ शब्द भी मिलता जाएगा एक अर्थ में। तो पूज्या नाम भी यह इक्कीस नामों में है।

सुमिरि सिवा पाई पसाउ।

‘शिवा।’ ‘मानस’ में भी लिखा है ‘सिवा।’ तुलसी तो बिलकुल देहाती में बोलते है ना? ‘स’ का ही उपयोग करते हैं। पांचवां नाम है ‘धरती।’ स्वयं जानकी धरतीपुत्री है, अवनिपुत्री है। स्वयं माँ का नाम धरती है इसलिए हम धरतीमाता कहते हैं। यह पराम्बा आदि शक्ति का नाम है। छठ्ठा नाम है ‘दया।’ ‘मानस’ में आपको कई बार मिलेगा, ‘धर्म न दया सरिस हरि जाना।’ माँ का नाम है बड़ा प्यारा। पुरुष का नाम भी हम रखते हैं, दयाभाई, दयाराम। हमारे गांव में एक दयाशंकरभाई थे जो स्वाध्यायी थे। बहुत भोले ब्राह्मण थे। बाप! दया पराम्बा का नाम है। ‘त्रिभुवन श्रेष्ठा।’ बहुत प्यारा नाम है। माँ का नाम है त्रिभुवन श्रेष्ठा। और त्रिभुवन तो ‘मानस’ में है ही। ‘तुम्ह त्रिभुवन गुरु बेद बखाना।’ ‘देवी।’ ‘देवी’ शब्द ‘मानस’ में सत्ताईस बार आया है। भूलचूक लेनदेन हो सकती है। क्योंकि शास्त्र में कोई यह नहीं कह सकते कि यह हमारा पक्का है। शास्त्र किसी के वश नहीं हो सकता।

हम पंचदेवियों से परिचित है। एक, हम जिस समाज में जन्मे हो उसकी एक कुलदेवी होती है। प्रत्येक की एक कुलदेवी होती है। जैसे मैंने निम्बार्कों की बात की तो कहा कि हमारी कुलदेवी रुकमणि मानी जाती है। कहीं-कहीं चामुंडा होती है; खोडियार माता होती है। सब की अपनी-अपनी कुलदेवी होती है। एक होती है नगरदेवी। आजकल तो सब बदल गया लेकिन प्रत्येक नगर की एक शक्ति स्थापित होती है। आप महुवा में आए तो महुवा की नगरदेवी मानी जाएगी भवानी। दो किलोमीटर दूर जाओ तो भवानी माता महुवा की नगरदेवी मानी जाएगी। शहरदेवी; पुरदेवी। राजाओं को अपने पुरदेवी की पूजा करनी पड़ती थी एक समय में। पुरदेवी हो। काशी में जाओ तो पुरदेवी है अन्नपूर्णा। चोटीला जाओ तो उसकी पुरदेवी कौन? चामुंडा। उसकी नगरदेवी वो। तीसरी देवी होती है राष्ट्रदेवी। हमारी राष्ट्रदेवी कौन? भारत माता स्वयं। वंदे मातरम्। और मैं कई बार आपसे बुलवाता हूं। आज भी बोलिए, ‘राष्ट्रदेवो भव।’ ‘राष्ट्रदेवो भव।’ ‘राष्ट्रदेवो भव।’ वहां ‘देवो भव’ शब्द है। शब्द तो ‘देव’ है लेकिन मातृवाचक है। तो राष्ट्र देवी है। हर एक राष्ट्र की अपनी-अपनी देवी होती है। हमारे लिए भारत माता स्वयं देवी। हमारे यहां कहा कि भारत का जो मानचित्र, नक्शा जो है वो एक भूमि का टुकड़ा नहीं, वो एक पराम्बा का रूप है। ऐसी एक हमारी श्रद्धा है। ‘भारत माता की जय’ बोलाते हैं हम। ‘वन्दे मातरम्’ हम गातें है। कई लोग इस बात का भी विरोध करते हैं! चौथी है भू-देवी। हमारी पूरी पृथ्वी यह भू-देवी है। पृथ्वीमाता। हम जय बुलवाते हैं, ‘धरती माता की जय।’ ठीक है? यह भू-देवी है। और पांचवीं माता है, जिसकी गोद में हम बैठे हैं वो है वैष्णोदेवी। मतलब विश्व देवी। विष्णु मानी व्यापकता।

तो ‘देवी’ शब्द आया तो कहने को जी कर रहा था देवी के पांच रूप। यहां इक्कीस नाम में देवी यह एक पर्टिक्युलर माता का नाम है। ‘देबि पुजि पद कमल तुम्हारे।’ माँ जानकी ने कहा, हे जगदंबा, हे पार्वती, तेरे चरण की पूजा करने से ‘सुर नर मुनि सब होहिं सुखारे।’ सब सुखी हो जाते हैं। देवताओं को स्वर्ग का सुख मिलता है, मनुष्य को पृथ्वी का सुख मिलता है और मुनियों को आत्मसुख मिलता है।

बाप! ‘देवी’ माँ का नाम है। ‘निर्दोषा।’ माँ निर्दोष है। ‘तुम निरदोस’, ‘मानस’ का शब्द है। तुम निर्दोष हो। तुम में कोई दोष नहीं। तुम दोषमुक्त हो। इसमें माँ तो निर्दोषा होती है। एक नाम है माँ का। कहीं बेटी का जन्म हो तो नाम रखने जैसा है ‘निर्दोषा’ ताकि उसकी जिम्मेवारी बन जाए कि जिंदगीभर निर्दोष रहूं। नाम रखने जैसा है। मेरे हजारों श्रोता, किसी के घर नवरात्र में बेटी जन्मी हो तो नाम रख देना निर्दोषा। माँ निर्दोष है।

राम तुम्हहि प्रिय तुम्ह प्रिय रामहि।
यह निरजोसु दोषु बिधि बामहि।।

‘मानस’कार कहता है, दोष तो विधाता का है, तुम्हारा नहीं। तो यह शब्दब्रह्म मिलता है इस वैश्विक शब्दकोश में। ‘सर्वदु:खहरा।’ जगदंबा का एक नाम है सर्वदु:खहरा। कलियुग का मैल हमारा दु:ख है, हमारी पीड़ा है। यह मंगलभवन है और अमंगलहारी है। जो अमंगलतत्त्व है उसका नाश करती है। सर्वदु:खहरा माँ का एक नाम है। ‘परम आराधनीया’, ‘परम सेव्या’ माँ का दिव्य ज्योति स्वरूप नाम इनमें एक यह भी है। ‘क्षमा।’ ‘मानस’ में भी मिलेगा।

बल बिबेक दम परहित घोरे।
छमा कृपा समता रजु जोरे।

‘क्षमा’ माँ का एक नाम है। ‘क्षमारूपेण संस्थिता।’ कई बेटियों का नाम क्षमा मैंने सुना है। क्षमा नाम रखते हैं। अच्छा है। ‘हृदया’, ‘हृदया’ माँ का एक नाम है। फिर है ‘धृति।’ धृति मानी धैर्य भी। धृति मानी धारण करना।

धृति सम जावनु देइ जमावै।

ज्ञानदीप में तुलसी ‘धृति’ शब्द का प्रयोग करते हैं। जैसे भगवान कृष्ण ने ‘भगवद्‌गीता’ में विभूतियोग में अपनी मुख्य विशिष्ट विभूतियों का वर्णन किया है उसमें प्रत्येक रूप में परमात्मा बसता है। लेकिन एक माँ ऐसी है, मातृशरीर ऐसा है जहां भगवान कहते हैं, मैं इतनी-इतनी विभूतियों के साथ निवास करता हूं। ‘कीर्ति, श्री, वाक् च नारीनां स्मृति धृति क्षमा।’ सात-सात रूप है विभूति के। एक अंबा रूप में परमात्मा निवास करता है। धृति एक नाम है माँ का। और धृति कई बेटी-माताओं का नाम होता है। ‘श्रद्धा’ और ‘स्वाहा।’ जो माँ के रूप में होती है। माँ तो स्वाहा ही होती है। ‘श्रद्धा’ और ‘स्वाहा’ दोनों शब्द प्रसिद्ध है। माँ का सत्रहवां एक नाम है ‘गौरी।’ ‘पद्‌मा।’ पद्‌मा भी माताजियों के नाम में से है और हमारे समाज में कई बहन-बेटियों के नाम भी पद्‌मा है। ‘जया।’ यह तो सीधा नाम है माँ का। ‘शांति।’ ‘शांतिरूपेण संस्थिता।’ ‘सांति सुमति सुचि सुंदर रानी।’ तो शांति जगदंबा का नाम है। इक्कीसवां, ‘दु:खहन्त्रि।’ फिर वो सर्व दु:खहरा माँ। ऐसे इक्कीस नाम मुझे दिये गये। नाम जप कर लिया आपके सामने। अच्छी माहिती मुझे मिली इसलिए मैं खुश हूं।

‘मातृदेवो भव’, ‘रामचरित मानस’ में जो लिखा है कि कल हम कह रहे थे मूल रूप में तो पराम्बा है। आह्‌लादिनी शक्ति है जिसको राधा कहो, सीता कहो जो परम माँ है। तुलसी का मंतव्य ऐसा है कि इनमें से फिर उमा, रमा, ब्रह्माणी प्रगट होती है। ये मूल शक्ति है। आज मैंने शब्दप्रयोग किया आदि शक्ति नहीं, अनादि शक्ति। आदि शक्ति तो हम सब बोलते हैं लेकिन ये वो तत्त्व की ओर संकेत है जो अनादि शक्ति है।

आदि अंत कोउ जासु न पावा।

आदि का मतलब है प्रारंभ। अनादि का मतलब है समाप्त। जिसका न कोई आदि है न कोई अंत है ऐसा जो परमशक्ति तत्त्व है। तुलसी की चौपाई है। अगनित उमा प्रगट होती है। अगनित सरस्वती प्रगट होती है। तो तीन रूप में वो ‘मानस’ में प्रतिष्ठित है। तीनों रूप में वो दिखती है। ‘मानस’ तीनों रूप है मेरी दृष्टि में। ‘मानस’ बानी है। यह (‘मानस’)महाबानी है। ये वाणी का ग्रंथ है। तुलसी वहां से तो शुरू करते हैं, ‘वन्दे वाणीविनायकौ।’ यह वाणी-सरस्वती है। तो यह महासरस्वती है। यह महालक्ष्मी है। ‘कहिअ रमा सम किमि बैदेही।’ ऐसा कहकर जो अनादि शक्ति है उसकी प्रतिष्ठा करने के लिए तुलसी कहते हैं तो इसमें रमा भी है, सरस्वती भी है और महादानी रमा भी है। तुलसी ने तो कितनी बार ‘रमा’ शब्द का प्रयोग किया है।

तो 'रामचरित मानस' में वाणी के रूप में सरस्वती है; महा सरस्वती है; महाबानी है। लक्ष्मी के रूप में यह महादानी है, जो कल हम चर्चा कर रहे थे। इसको तुलसीदासजी ने स्वयं रमा कहा है। 'रामायण' क्या है? महादानी। तुलसी कहते हैं-

संत समाज पयोधि रमा सी।
बिस्व भार भर अचल छमा सी।।

संत समाज रूपी समुद्र से निकली यह 'रामायण' महालक्ष्मी है। 'रामायण' में संतसमाज को प्रयाग भी कहा। और 'रामायण' में संतसमाज को पयोधि भी कहा। यह क्षमा भी है। 'रामायण' स्वयं रमा है; लक्ष्मी है; महादानी है। लक्ष्मी प्रगट होती है जलधि से, पानी से; समा जाती है पानी में। यह शक्ति पानी से प्रगट होती है। और पार्वती सती के रूप में अग्नि में समा गई। निकली थी बरफ से। ठंडक से निकली यह शक्ति और अग्नि में समा गई। अलौकिक जगत है यह देवियों का। द्रौपदी प्रगट होती है अग्नि से और समा जाती है ठंडक में। हिमालय में चली जाती है, समा जाती है। मेरी माँ जानकी प्रगट होती है पृथ्वी से, समा गई पृथ्वी में। इसलिए मैं कहता हूं देवियों की दुनिया अलौकिक है। माताओं की दुनिया, जगदंबा की दुनिया अलौकिक है।

संतसमाज के समुद्र में जब उर्मियां, तरंगें, हिलोलें चढ़ें तब उसमें से 'रामायण'रूपी लक्ष्मी प्रगट होती है। और यह 'रामायण' दुर्गा तो है ही। 'रामकथा कालिका कराला।' शिवरानी है; महारानी है। तो यह जो माताओं से भरा रूप है परमतत्त्व उनमें से तीन रूप आ गये। तीन रूपों का विचार करो जो वैष्णोदेवी के हैं। आपने इन तीनों के हाथ गिने कभी? आप सरस्वती के चार हाथ देखोगे। लक्ष्मी के दो ही हाथ है। फिर कोई चतुर्भुज कर दे तो आपत्ति नहीं हैं, कर सकते हैं लेकिन जहां तक देखिए एक हाथ वरद होता है। कमल पर बैठी और एक हाथ से रूपिये निकलते हैं। चार हाथ भी देखोगे आप लक्ष्मी के तो हो सकता है। और सरस्वती के चार हाथ में, दो हाथ में तो वीणा हैं। एक हाथ में ग्रंथ है, एक हाथ में माला है। बड़ा प्यारा सुंदर रूप है। महाबानी; बहुत सुंदर वाणी ऐसी होनी चाहिए कि संगीतमय हो। माँ के हाथ में हमारा बहुत पुराना वाद्य वेदकालीन वाद्य वीणा। इसका मतलब है परमात्मा ने जिसको वाणी दी है, सरस्वती दी है उसकी वाणी संगीतमय होनी चाहिए। वाणी में वीणा की झंकार होनी चाहिए। आप कोई भी वाद्य बजाने में निपुण है, प्रवीण है विद्या में तो भी एक हाथ में शास्त्र रखना। सरस्वती कहती है, ग्रंथ रखो। फिर भले वो संगीत का शास्त्र हो। लेकिन तुम्हारे हाथ में शास्त्र भी हो और तुम्हारी वाणी संगीतमय हो फिर भी भजन नहीं तो तुम अधूरे हो। इसलिए सरस्वती ने एक हाथ में माला रखी है। भजन होना चाहिए। कोई भी विद्यारूपी थाल में भजन के तुलसीपत्र नहीं डालोगे तो ठाकुर इस विद्या को कुबूल नहीं करेगा। सरस्वती जो महाबानी है, हमें इस रूप का दर्शन कराती है।

काली के भी दो प्रधान हाथ है। एक हाथ में खप्पर, एक हाथ में खडग। फिर बीस भुजा में तो कई हथियार दिखते हैं। अष्टभुजा में कई है। लेकिन महालक्ष्मी के दो हाथ। महाकाली के दो हाथ। सरस्वती के चार हाथ। यही है आद्य अंबा की अष्टभुजा। अब लक्ष्मी की दो भुजा। एक हाथ से रूपये निकलते हैं; एक हाथ वरदान। क्या संकेत है? धनवानों के लिए संकेत है। तुम्हारे हाथ से पैसे निकलते हो; जहां हाथ डालो वहां से पैसे निकले। लेकिन जिसके हाथ से पैसे निकलते हो उसको चाहिए एक हाथ वरद रखे। गरीबों के प्रति करुणा रखे। अकिंचन के प्रति इस हाथ का साया रखे। और यह गिरते हुए पैसों का कुछ न कुछ सदुपयोग करे। यह दोनों हाथ महालक्ष्मी के है। और काली माँ के दो हाथ में खड़ग और खप्पर है। शास्त्र में ज्ञान को खड़ग कहते हैं। एक हाथ में खप्पर है। एक भयभीत रूप दिखाया गया स्वच्छता अभियान के लिए। बाकी खप्पर साधना का एक प्रतीक है। यद्यपि वो तामसी साधना का प्रतीक है अवश्य। लेकिन है माँ का खप्पर तो देखने से रक्त का भरा होता है। तत्त्वत: एक खप्पर विरक्ति का खप्पर है। इतना त्याग और बलिदान माँ ही कर सकती है। विरक्ति और वीरपना भरा है। बहुत विरक्त लोग नाथ परंपरा में भी खप्पर रखा करते थे। और खप्पर के बहुत काम होते थे। एक भिक्षा मांगने के लिए भी, भिक्षा खाने के लिए भी। और यही खप्पर को सिर पर ओढ़ने का काम भी सिरछत्र का काम करती थी। तो उसके बहुत अच्छे काम थे। तो बाप! खप्पर है विशिष्ट प्रकार का पात्र। और माँ काली के दूसरे हाथ में है खड़ग। खड़ग है ज्ञानासि, ज्ञान+असि। ज्ञान खड़ग-असंग खड़ग। यह दिखने में शस्त्र है, है शास्त्र; असंगता की प्रेरणा देता हैं। माँ के हाथ में असंगता का खड़ग है।

तो कुल मिलाकर यह तीनों देवियों के आठ हाथ इसी रूप में भी होते हैं। चार हाथ सरस्वती के, दो महालक्ष्मी के, दो महाकाली के, शंभुराणी के, महारानी के। तो इस रूप में भी हम मातृ का दर्शन करते हैं। और 'रामायण' में वीणा भी है। 'रामायण' में 'कर पुस्तक दुइ बिप्र प्रबीना।' ब्राह्मण के हाथ में ग्रंथ भी है। 'रामायण' में माला तो है ही। और माला क्या? मालामाल कर देती हैं! 'रामायण' में माला है, शास्त्र है, वीणा हैं। खप्पर की चर्चा मैंने अभी कही, जहां खप्पर का उल्लेख है। और संपदा देनेवाली, सकल सिद्धि देनेवाली यह रामकथा है। यह धन भी देती है और वरदान भी देती है। ऐसे अष्टभुजा का एक संदर्भ भी यहां लिया जा सकता हैं। ऐसी है माता।

तो 'मानस-मातृदेवो भव' की कुछ सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा संवाद के रूप में हम कर रहे हैं। कथा के प्रसंग में आगे बढ़ूं इससे पूर्व मेरे पास आज कुछ शे'र है वो बीच में आपको सुना दूं। यद्यपि संदर्भ नहीं है लेकिन आया है तो मैं उसका सदुपयोग करूं। बहुत प्यारा शे'र है-

तेरे जैसा कोई मिला ही नहीं।
कैसे मिलता? कहीं पे था ही नहीं।

यह है माँ, यह है माँ। तेरी सुरत से किसी की सुरत मिलती ही नहीं।

मुझसे बचकर गुज़र गई दुनिया।
मैं तेरी राह से हटा ही नहीं।

बाप! कल तक की कथा के क्रम में हमनें चर्चा की कि भगवान राम जनकपुर में पधारे। जनकपुर में पांच दर्शन है। पांच प्रकार के दर्शन जनकपुर में गोस्वामीजी ने इस रूप में प्रस्तुत किया है। पहला दर्शन है जनकपुर में जनक की आंखों में भगवान राम का दर्शन।

इन्हहि बिलोकत अति अनुरागा।
बरबस ब्रह्मसुखहि मन त्यागा।।

एक ज्ञानी करीब-करीब जहां बड़े-बड़े ऋषियों, ज्ञानियों दीक्षा और ज्ञान लेने आते थे राजर्षि के पास ऐसे जनकजी की आंखों ने जो रामदर्शन किया यह पहला दर्शन है। दूसरा दर्शन है सायंकाल में राम की आंखों में नगरदर्शन। प्रभु ने जनकपुर का दर्शन कैसे किया? यह दूसरा दर्शन है। तीसरा दर्शन है दूसरे दिन सुबह भगवान राम-लक्ष्मण गुरु की आज्ञा लेकर पुष्प चुनने के लिए जनक की पुष्पवाटिका में जाते हैं वहां राम का सीतादर्शन।

तात जनक तनया यह सोई।

यह राम के द्वारा सीता का दर्शन। आगे का दर्शन है सीता के द्वारा माँ भवानी का दर्शन, गौरी का दर्शन। यह आगे का दर्शन है। पांचवां दर्शन है भगवान राम की दृष्टि में महाराज जनक ने जो धनुषयज्ञ आयोजित किया था वो 'धनुषजग्य सुनि रघुकुल नाथा।' जिससे उत्सुकता बढ़ी थी कि मैं आउं, यह राम के द्वारा धनुष्ययज्ञ का दर्शन, सात्त्विक-तात्त्विक दर्शन। यह आखिरी दर्शन है जो हमने कल से शुरू किया। और 'बालकांड' में समाप्त होता है वो है राम-सीता का विवाह दर्शन। यह दर्शन है। संक्षेप में उसको समझ लिया जाए। प्रसंग से हम परिचित है। अंतरंग से परिचित होना आवश्यक है कि यह प्रसंग, यह घटनाएं आज के काल में हमारे जीवन के लिए कैसे प्रासंगिक है?

महाराज जनक का रामदर्शन मैंने कल छोड़ दिया था लेकिन स्पर्श कर के आगे बढ़ूं कि अमराई में विश्वामित्र के संग राम-लक्ष्मण रुके हैं जनकपुर में। खबर मिलती है जनक को कि महाराज विश्वामित्र पधारे हैं। उसके सन्मान के लिए सब को लेकर वो जाते हैं। उस समय राम बाग देखने गए थे अमराई में और यहां जनक आते हैं। कुशल-मंगल पूछते हैं उसी समय राम-लक्ष्मण आते हैं। और जैसे राम आये ही जनकराज खड़े हो जाते हैं! आप जानते हैं कि जनक वो है जिसकी दृष्टि में नाम और रूप दोनों मिथ्या है। ऐसी स्थिति पर पहुंचा हुआ यह महापुरुष है लेकिन राम को देखकर ही जनक जिज्ञासा करने लगे कि यह कौन है? यह रूप कौन है? और यह रूपधारी इसका नाम क्या है? नाम और रूप जानने के लिए उत्सुक कर दिया जनक को क्योंकि राम की आंखों ने रूप ऐसा देखा! सीधा प्रश्न विश्वामित्र से करते हैं कि हे नाथ! ये दो बालक अत्यंत सुंदर लगते हैं वो है कौन? जनक कहते हैं, मेरा वैराग सहज है। मेरे कई प्रिय पद है उनमे सें एक प्रिय पद स्वामी निष्कुलानंदजी का, आप सब जानते हैं। 'त्याग न टके वैराग विना।' गांधीबापू ने भी अपनी प्रार्थनापोथी में शामिल किया। निष्कुलानंदजी कहते हैं-

त्याग न टके रे वैराग विना, करीए कोटि उपाय जी;
अंतर ऊंडी इच्छा रहे, ते केम करीने तजायजी.

यहां जनक कहते हैं विश्वामित्रजी को, मेरा मन है सहज वैरागी। और मैं इन बालकों को देखता हूं तो मेरा नयन चकोर बनकर उनके चेहरे के चंद्र में लुब्ध हो जाता है, तो यह है कौन? ये दो राजकुमारों को देखकर मेरे दिल में इतना अनुराग क्यों प्रगटता है? विश्वामित्रजी कहते हैं, इन बालकों ने हमारे जैसे त्यागियों का भी मन खिंच लिया है। ये दोनों राजकुमार संसार में जहां चेतन प्राणीसृष्टि है यह सब को प्रिय तत्त्व है। सब को प्रिय होना वो परम के बिना संभव नहीं है। यह परम है। सब को प्रिय लगते हैं। महाराज जनक को विश्वामित्रजी कहते हैं, राजन्, रघुकुल के यह मणि है, दशरथ के पुत्र है। मेरे कार्य के लिए राजा ने मुझको दिया है। मेरे कहने पर यहां आये हैं। जनकजी बहुत प्रसन्न हुए। यह पहला दर्शन एक ज्ञानी के आंख में रूप के प्रति आकर्षित होना। नाम जानने की उत्सुकता बढ़ना। 'सुंदर सदन' नामक एक हवेली में जनकजी राम-लक्ष्मण को विश्वामित्र और संतों के साथ ठहराते हैं। दोपहर हो गई। सब ने भोजन किया। भगवान ने विश्राम किया।

सायंकाल होने को है तब बात तो फैल गई जनकपुर में कोई दो राजकुमार आये हैं। और राम के जितने समवयस्क बालक जनकपुर में थे वो सब आ गये। 'सुंदर सदन' के फाटक पर जनकपुर के किशोर वृंद सब देख रहे हैं लेकिन इनको अंदर कौन जाने दे? परमात्मा सर्वज्ञ कहलाते हैं इसलिए यह अंतर्यामी राम इन लोगों का भाव जान गए और बहाना बनाया। भगवान इन बालकों के भाव को पूर्ण करने के लिए बाहर निकलते हैं। यह क्या संदेश देते हैं? इसका मतलब यह है कि आप कितने ही बड़े हो, दरवाजे से कुछ ऐसा जो तुम्हारे पास न आ सके, तो तुम्हारा कर्तव्य है कोई न कोई बहाना बनाकर तुम दरवाजे से बाहर निकलो; तुम लोगों के पास जाओ। भगवान ने योजना बनाई; बहाना बनाया कि लक्ष्मण नगर देखना चाहता है। राम-लक्ष्मण जनकपुर देखने के लिए बाहर आते हैं। भगवान नगर के रास्ते में निकले हैं।

मेरी व्यासपीठ कहा करती है, तीन प्रकार के दर्शक वहां मौजूद थे। बूढ़े-बुज़ुर्ग जो रास्ते के किनारे पर थे वो राम को देखते थे। आहा! क्या बालक है? प्रभु के श्री अंग को छुते हुए सभी स्थान बताते हैं। अपनी रुचि के अनुरूप भगवान को मोड़ते हैं। और मिथिला की स्त्रियां अटारी में खड़ी-खड़ी झुक-झुककर दो राजकुमार राजपथ पर निकले हैं उसको देखते हैं। तीन प्रकार के दर्शक है यह। एक बालक, एक बुज़ुर्ग और मिथिला की महिला। मेरी व्यासपीठ का मानना है, बालक आरपार है; शुद्ध चित्त है, अंत:करण है इसलिए भगवान का हाथ पकड़ते हैं। भगवान उसकी रुचि के अनुसार उसके पास जाते हैं। यह घटना घटी। मिथिला के जो बड़े बुज़ुर्ग थे वो ज्ञान के प्रतीक है। वो दूर से देखते हैं लेकिन नज़दीक नहीं जाते क्योंकि ज्ञानी आदमी होते हैं वो जल्दी कुबूल नहीं करते। अपना अहम् परेशान करता है उसको! देखते हैं; निकट नहीं गये। बच्चे तो निकट चले गये। और तीसरे दर्शक थे मिथिला की महिलाएं, वो भक्ति स्वरूपा है। अटारी में छुप-छुपकर, भीड़ से मुक्त होकर उपर से राम का दर्शन कर रही हैं। सखियां फूल बरसा रही है राम पर और भगवान पूरी जनकपुरी का दर्शन करते हैं। और पूरी नगरी को अपनी माधुरी में डूबोकर राघव और लखन लौटते हैं। संध्या वंदन किया। रात्रि भोजन हुआ। गुरु के पास बैठकर वेदांतों की चर्चा हुई।

दूसरे दिन सुबह भगवान राम-लक्ष्मण गुरु की पूजा के लिए फूल लेने जनक की पुष्पवाटिका में जाते हैं वहां राम की आंखों में सीता का दर्शन होता है। यह तीसरा दर्शन है। जानकीजी गौरीपूजा के लिए आई है। और वो सखी ने कहा, वो दो राजकुमार बाग में हैं जो कल नगरी को डूबो गए थे रूप में। जानकी, तू भी पृच्छा करती थी कि कौन आये हैं? चल, बाग में आये हैं। भीड से मुक्त हम शांति से दर्शन कर पाएंगे। सखी को साथ रखकर जानकी और राम का अरस-परस दर्शन होता हैं। मन ही मन मर्यादा से एक-दूसरे को देखा। बड़ा सुंदर प्रसंग है। शृंगाररस का प्रसंग है। और राम ने उसको देखा। जानकी जब ज्यादा परवश होने लगी तब सखी ने कहा, अब हम जायें? सखी लेकर जाती है। फिर वहां माँ की स्तुति जानकी करती है-

जय जय गिरिबरराज किसोरी।
जय महेस मुख चंद चकोरी।।

माँ दुर्गा की स्तुति जानकी करती है। दुर्गा प्रसन्न होती है। भवानी प्रसन्न हुई। सुंदर वचन कहे, तेरे मन में सुंदर सांवरा बस गया वो तुझे प्राप्त होगा। सीयाजू को बहुत आनंद हुआ। माँ का आशीर्वाद लेकर सीता सखियों के संग माँ सुनयना के पास। और यहां सीता के सौंदर्य को पवित्र मन से सराहते हुए मेरे ठाकुर रामभद्र और लखन फूल लेकर विश्वामित्र के पास आते हैं। पूजा की। आशीर्वाद मिला। उसके बाद के दिन में धनुषयज्ञ का दर्शन है। विश्वामित्र के संग राम-लक्ष्मण धनुषयज्ञ में आते हैं। बड़े-बड़े राजे-महाराजे कोई धनुष को कुछ नहीं कर पाया और भगवान राम ने क्षण के मध्यभाग में धनुष के दो टुकड़े कर दिये। अहंकार का धनुष टूटा। भक्तिरूपी जानकी ने राम के गले में जयमाला पहनाई। आनंदमय वातावरण था। उसमें परशुराम आए। परशुराम राम की स्तुति कर के तप करने चले गए। सब विघ्न हट गये। विश्वामित्र ने जनक से कहा, राजन्, राज वंश-व्यवहार के अनुसार दूतों को पत्र लेकर भेजो। महाराज दशरथ बारात लेकर आये और लोक और वेद के अनुसार ब्याह संपन्न करो। दूत गये अयोध्या।

महाराज दशरथ आते हैं। मागसर शुक्ल पंचमी। गोरज बेला। भगवान राम की दुल्हे की सवारी। और सीता-राम का ब्याह। मंगलफेरे शुरू हो रहे हैं। वशिष्ठजी ने कहा, मिथिलेश, सुना है आपकी तीन कन्या कुंआरी है-ऊर्मिला, मांडवी, श्रुतकीर्ति। हमारे तीन राजकुमार कुंआरे हैं। उसको ब्याह साज सजाकर ले आओ। एक ही मंडप में सीता राम को समर्पित, ऊर्मिला लखन को, श्रुतकीर्ति शत्रुघ्न को और मांडवी श्री भरतजी को। लोक-वेदविधि से ब्याह संपन्न हुआ। कुछ दिन बारात मिथिला में रुकी है। रोज-रोज नई-नई मेहमानगति चल रही है। अब जनक महाराज से बिदा मांगी गई। चारों कन्या को विदाय। महाराज दशरथ अयोध्या पहुंचे। माँ के आने से अयोध्या में सुख-समृद्धि ओर बढ़ गई। दिन बितते चले। सब ने बिदा ली। आखिर में विश्वामित्र ने बिदा मांगी तब पूरा राजपरिवार सजल नेत्र खड़ा रहा, हे बाबा, 'नाथ सकल संपदा तुम्हारी।' यह सब संपदा तुम्हारी हैं। मैं तो अपनी रानियां और पुत्रों के साथ आपका दासमात्र हूं। बाबा को कहा, आपको जब साधना में अवकाश मिले, हमें दर्शन देते रहिएगा। विश्वामित्रजी निकल पड़े।

मेरा 'रामचरित मानस' मेरे लिए एक वैश्विक शब्दकोश है। उसमें क्या नहीं है? मेरे लिए यह पंचमवेद है। यद्यपि 'महाभारत' को महर्षियों ने पंचम वेद कहा है लेकिन मैं 'महाभारत' को दंडवत् करते हुए व्यक्तिगत भाव में कहूंगा कि 'रामायण' भी पंचम वेद है क्योंकि पंचमुख शंकर के मुख से निकला है। यह पंचम वेद है।

मानस-मातृदेवो भव : ९

ब्रह्मांड की तरह हमारे पिंड में भी माँ की हाज़िरी हो सकती है

बाप! नवरात्रि का आज अंतिम दिन। माँ वैष्णोदेवी पराम्बा के अंक में बैठकर उन्हीं की ही कृपा से हम नौ दिन से यहां वाणी और श्रवण के द्वारा माँ की पूजा कर रहे थे। आज विराम के दिन पुन: माँ के चरणों में प्रणाम। आप सभी को मेरा प्रणाम। 'मानस-मातृदेवो भव'; आज समय के अभाव से ज्यादा संवाद संभव नहीं। फिर भी कुछ उपसंहारक बातें करें। एक दिन हमने चर्चा की ये 'रामचरितमानस' स्वयं अंबा है, माँ है। उसमें नव मातृशरीरी पात्र नवदुर्गा है। इसमें भवानी, जानकी, अहल्या, कौशल्या, अनसूया, शबरी, स्वयंप्रभा, तारा, मंदोदरी ये मातृशरीर के नव पात्रों को नवदुर्गा के रूप में हमने दर्शन किया। आप जानते हैं, नवरात्र में माता की उपासना, रास-गरबे, हवन-होम होते हैं। उसमें कई भाई-बहनों को शरीर में माताजी आती है। कहते हैं, माताजी की हाज़िरी लग गई। मैंने देखा है। कथा में भी बीच-बीच में कईयों को माताजी आती है। मैं माताजी को रोकता हूं! पहले बहुत होता था। ये किसीका भाव होता है। पुलकित भाव, एक प्रकार का अहोभाव। वो तो वो ही बता सके जिसको ये होता हो। हम नहीं बता सकते। होता होगा अपने-अपने अंतरभाव से। रामदेवपीर के दरबार में भी हमने देखा है। रामदेवपीर की हाज़िरी लग गई। ऐसा होता है। अब मैं स्वीकार करूं न करूं ये मेरा व्यक्तिगत मामला है। जिसको जो होता हो। देहातों में कईयों को भूत-प्रेत की हाज़िरी लगती है। कई लोग कहते हैं किसी को कोई ने कुछ कर दिया और शरीर में कोई आता है। मैं किसी की श्रद्धा को तोड़ना नहीं चाहता। ये उनकी श्रद्धा है।

आप यदि मुझे पूछना चाहे कि बापू, हमारे शरीर में माता की हाज़िरी कैसे लगे? कईयों को लगती है। हमारे ब्रिटन से एक श्रोता आते हैं। उनको ये भाव आता है। ये अपना-अपना स्फुरण होता है। मैं उसको नहीं कह पाउंगा। लेकिन आज संवाद करना है। एक दिन जो नव पात्र है उनमें से चुनकर आपके सामने रखे। आज मुझे कहना है, हमारे शरीर में माताजी की हाज़िरी नव रूप में होती है। ये आज के आखिरी दिन का संबल है। मैं इस स्वरूप में स्वीकारूं कि व्यक्ति के पंड में, शरीर में माताजी की हाज़िरी इस रूप में होती है। उसमें कोई वाद्य की जरूरत नहीं पड़ेगी। उसमें माताजी को लाने के लिए कोई विशिष्ट मंत्र के उच्चारण की जरूरत नहीं है। पर्टिक्युलर स्वर से एक नाद पैदा होता है उस नाद से आपके शरीर में एक रोमांच कर देता है और कुछ रह जाता है तो पंडित लोग बार-बार पानी छांटते हैं। तो भी थोड़ा स्फुरण होता है। तो ये जो हो। कोई बात सुनते, गीत सुनते हमारे रोम खड़े हो जाते हैं। आंखें गीली हो जाती है। ये कुछ होता है। एक शे'र है-

सबको वो मालामाल करता है।

बैठे-बैठे कमाल करता है।

-राज कौशिक

कोई बुद्धपुरुष शुद्ध अंत:करण से एक नज़र से देख ले तो एक हाज़िरी होने लगती है। जैसे 'मानस' में नवदुर्गा एक विग्रह के रूप में है, ऐसे हमारा शरीर एक गरबा है। ये ब्रह्मांड एक गरबा है। पूरा ये गरबा पुरुष और स्त्री का केन्द्रबिंदु है। आप सौराष्ट्र में जाय तो पुरुष जो नवरात्रि में रास लेते हैं उसको गरबी कहते हैं। शब्द नारीवाचक है। बहनें रास लेती हैं, उसको गरबा कहते हैं। दोनों का एकत्व सधता है। पुरुष लेते हैं उसको गरबी कहते हैं।

जळ जमुनाना रे हो ग्याता।

ये पुरुष की गरबी है। आज ये मुझे ग्यारह बजे कराना है।

जळ जमुनाना रे हो ग्याता।

हमारे गांव में भवान नागजी कणबी पटेल; रामजी मंदिर से हमारे पादर की और रूपावा नदी की ओर एक चौक आता है वहां भवाई होती थी। वहां भवान नागजी, मेघजी नागजी ये हमारे सब पटेल रहते थे। उनके बेटे कानजी, प्रेमजी ये सब हमारे बचपन के साथी हाथ में करताल ले। रामजी मंदिर के चौक में बीच में एक गरबी रखी होती और कोई साधु का बालक धीरे-धीरे हींच बजाता हो और दो झांझ बजाते हो और उन लोगों के जो स्टेप थे! कोई सीखे नहीं थे। मेरे बचपन में मैं खुद उसमें शरीक हुआ हूं। कुछ नहीं और तलगाजरडा का आकाश स्तब्ध हो जाता था! और ये गरबी खास वो गाते थे।

जळ जमुनाना रे हो ग्याता।

ऐसे पुरुषों की जो गरबी होती थी। एक सौ सत्तर देश में लोग ग्यारह बजे रास लेने को तैयार है। मैंने कहा है, टी.वी. को केन्द्र में रखकर मानो ये गरबी है। ये पूरा ब्रह्मांड नर्तन कर रहा है। जैसे 'मानस' में हमने नवदुर्गा का दर्शन किया वैसे ये हमारा शरीर ये पिंड है, इसमें भी माता की हाज़िरी हो सकती है। ध्यान से सुनो, किस रूप में? जब आपकी कुमति की जगह सद्‌बुद्धि का स्फुरण हो तब समझना आपके पिंड में माँ की हाज़िरी लगी है। और कुछ बातों में मेरी निष्ठा न हो तो मैं आपकी निष्ठा को तोडूं ना। आपके शरीर में रामदेवपीर की हाज़िरी हो, माँ की हाज़िरी हो, भूतप्रेत की हाज़िरी हो। लेकिन सार्वभौम रूप में देखे तो इस प्रकार नौ रूप में माँ की हाज़िरी होती है। प्रत्येक रूप में माँ का, नवदुर्गा का एक स्थान है। जैसे वैष्णोदेवी कटरा में यहां बैठी है। अंबाजी वहां बैठी है। चामुंडा चोटीला में बैठी है। कोई विंध्यवासिनी वहां बैठी है। सबके अपने-अपने स्थान है। और विश्वंभरी में हम बार-बार गाते हैं, 'दुर्बुद्धिने दूर करी सद्‌बुद्धि आपो।' बुद्धि तो सब में है, लेकिन दूसरे को शीशे में ऊतारने के लिए एक नेटवर्क बनाती है! हमारी बुद्धि कलिंग है! छलबल भरा है। उसकी जगह अचानक बिजली कौंध जाय और सुमति हमारे मस्तिष्क में आये और लगे, नहीं नहीं, मेरा उससे कोई रिश्ता नहीं है फिर भी मैं उसके लिए कुछ करूं। हां, उसने मेरा बिगाड़ा था, लेकिन कोई बात नहीं। मैं सामने से उसे हाथ मिलाउं। तो समझना, तुम्हारे शरीर में माँ की हाज़िरी लगी। इस रूप में माँ को आने दो। बाकी तो मुझे लोग कहते हैं, आपकी कथा में लोग धूणते हैं! आपको पचपन सालों से माताजी आई नहीं? मुझे माताजी ऐसे आती है। सद्‌बुद्धि की हाज़िरी आनी चाहिए। इसके समान माँ की कौन-सी हाज़िरी हो सकती है? माँ का तीन रूप मैं बताऊं बहुत संक्षिप्त में- महाकाली, महासरस्वती और महालक्ष्मी। अब महाकाली को मैंने करुणा कहा है। महाकाली का स्थान है इन्सान की आंख। करुणा सदैव मनुष्य की आंख में रहती है। हमारी आंखो में जब करुणा फूटे, मानो माँ आई।

साथिया पुरावो द्वारे दीवडा प्रगटावो राज।

आज मारे आंगणे पधारशे मा पावावाळी।

जय अंबे जय अंबे मा जय जय अंबे।

तुम क्यों इस परचे और चमत्कारों में जाते हो? तुममें माँ ऊतरी है, प्रगट नहीं हुई थी! आंसू आये तो समझना, करुणारूपी माँ की हाज़िरी मेरे शरीर में लग गई। इस रूप में देखे। ज़िंदगीभर आपने कटुवचन बोले! ज़िंदगीभर दूसरों का विरोध किया! ज़िंदगी भर कोई पोज़िटिव कहे तो भी

आप नेगेटिव किया करो! हर बात का ऊल्टा अर्थ ही लिया करो! उसकी जगह मीठे बोल आये, मीठी वाणी आये तो समझना, माँ सरस्वती ने हाज़िरी लगाई। करुणारूपी महाकाली का स्थान है नयन। इसलिए परमात्मा ने आंख के अंदर के दो भाग को अगल-बगल में सफेद, बीच में काला भाग, कीकी भी काली और आप काले रंग का कजरा भी तो लगाते हैं। पलकों के बाल भी काले। ये कालिका का स्वरूप है। ये करुणा का स्थान है। और सहज में शुभ वाणी प्रगटे, समझो वो तुम्हारे मुख में निवास करती है माँ सरस्वती उसने हाज़िरी लगाई। और तीसरा महालक्ष्मी। जब तुम्हारे हाथों से कमाई हुई लक्ष्मी सद्उपयोग में बांटने के लिए, दसवां हिस्सा निकालने के लिए बेताब बने तब मानना, मेरे हाथ में महालक्ष्मी ने हाज़िरी लगाई। मेरी एक मांग है। राष्ट्र में मनुष्य को दो ही हाथ होने चाहिए। खूब कमाओ नर बनके और चार हाथों से बांटो नारायण बनके। याद रखना, मेरा संसार, मेरी दुनिया, मेरा भारत वर्ष, मेरा जम्मु-कश्मीर हमारा है, हमारी माँ वैष्णोदेवी यहां बैठी है। मैं सबको कहना चाहता हूं विनीत भाव से, आप दो हाथ से जब-जब कमाते हैं तब-तब आप नर है, लेकिन आप चार हाथ से बांटते हैं तब तुझमें नारायण की हाज़िरी लगती है। मीठे बोल आये तो मानो माँ सरस्वती की हाज़िरी लगी। करुणा आये तो मानो माँ महाकाली की हाज़िरी लगी। कमाई हुई संपत्ति बांटे तो मानो माँ महालक्ष्मी की हाज़िरी लगी।

हियँ सुमिरी सारदा सुहाई।
मानस तें मुख पंकज आई।।
भगति हेतु बिधि भवन बिहाई।
सुमिरत सारद आवति धाई।।

ये वहां से गब्बर से ऊतरती है। और मुख में वास करती है वैसे पिंडरूपी ब्रह्मांड में माँ की हाज़िरी लगती है। मुझे ऐसी हाज़िरी राश आती है। मैं 'पक्षधर' शब्द कभी-कभी बोलता हूं। लेकिन वो भी मेरे होठ के शब्द है, हृदय के नहीं। साधु किसी का पक्षधर नहीं होता। साधु साक्षी होता है कूटस्थ, तटस्थ। तो बाप! जब सद्बुद्धि आये तो समझना, तुम्हारे मस्तक में अक्ल तो थी लेकिन सुमति का रूप लेकर माँ हाज़िरी देने लगी। उसे कहते हैं, 'बुद्धि रूपेण ...' मीठा बोल-बोलने की इच्छा हो जाय अचानक, उसे कहते हैं, 'वाणी रूपेण...' 'करुणा रूपेण...' आंख में हाज़िरी लग गई।

तो साहब! अचानक भक्ति का भाव जगे तो हाज़िरी है माँ की। तो 'पक्षधर' शब्द मेरी आत्मा की आवाज़ नहीं है। कभी-कभी औपचारिकता निभाता हूं। बाकी 'स्वदेशे भुवनः त्रय।' जब आंख में करुणा, तो माँ काली। जीभ पर मीठे बोल, तो माँ सरस्वती। किसीको कुछ दे, तो माँ लक्ष्मी की हाज़िरी। वैसे दिल में भक्ति, प्रेम भाव जगे तब समझना माँ ने भक्ति के रूप में हाज़िरी लगा दी। बाकी तो दिल पंपिंग करता है शुद्ध-अशुद्ध ब्लड का। जब दिल में भक्तिभाव उठे तो समझना, मेरे पंड में माँ ने भक्ति के रूप में हाज़िरी लगा दी। आगे तुम्हारे अंत:करण में शांति आये; ध्यान देना, मैं 'अंत:करण' शब्द का उपयोग कर रहा हूं। भक्ति हृदय में आये तो भक्तिरूपी जगदंबा की हाज़िरी लगी लेकिन शांति अंत:करण में आये, हृदय में नहीं। अंत:करण के चार विभाग है-मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार। मन में शांति होनी चाहिए। बुद्धि में उहापोह नहीं होना चाहिए। बुद्धि शांत होनी चाहिए। चित्त शांत विक्षेपमुक्त होना चाहिए। थोड़ा समय अहंकार शांत होना चाहिए। इन चारों में शांति हो तब समझना 'शांति रूपेण संस्थिता।' माँ दुर्गा ने हाज़िरी लगा दी। साहब! आपके चरण में किसी के लिए दौड़ने की इच्छा हो जाय। वो वहां पीड़ित है; वहां कोई भूखा सोया हो; ऐसे समय में तुम्हारे पैर दौड़ने को मजबूर हो जाय तब समझना, तुम्हारे पैर में दया नामक देवी की हाज़िरी लग गई। वैसे किसी ने आपका बुरा किया हो, फिर भी आपके चिंतन में कभी बुरी सोच न हो; मैं उसे क्षमा कर दूं, ऐसे क्षमाभाव हो जाय तो माताजी ने मेरे शरीर में क्षमारूपे हाज़िरी लगा दी। तो कर्म तो हम बहुत करते हैं। इच्छा तो होती है, हम सब कर्म कर लें लेकिन सब कर्म हम नहीं कर सकते। चुनाव कर सकते हैं। कोई ये कर सकता, कोई ये कर सकता।

भगवान योगेश्वर, उसका सब कर्म में प्रवेश है। ये आदमी गा भी सकता है; नाच भी सकता है; वाद्य भी बजा सकता है; रथ चला सकता है; ये युद्ध कर भी सकता है; युद्ध करा भी सकता है; रो भी सकता है; हंस भी सकता है; खड़ा होता है; दूसरों को भी खड़ा कर सकता है; हार भी सकता है, जीत भी सकता है। द्वारिका का सृजन भी कर सकता है और सबकुछ छोड़कर प्राची के पीपल तले बैठ भी सकता है। कृष्ण एकमात्र विश्व पुरुष है जो सबमें समाया है। इसलिए हमने गोविंद को पूर्ण पुरुषोत्तम कहा है। नि:शंक पूर्ण पुरुषोत्तम है। आईन्स्टाइन ने ये अणुशक्ति खोजी, सापेक्षता का सिद्धांत खोजा; आईन्स्टाइन को बाजार में बैगन लेने भेजो। ये ज्ञान उसमें नहीं आता! मेरा कृष्ण हीरा भी खरीद सकता है और बैंगन भी। ये सुन्दर राधा के पास भी बैठ सकता है और कुब्जा के घर भी उसके पास बैठ सकता है। ये पूर्ण है। सबकी शक्ति सबमें नहीं होती। किसी में दया तो किसी में दान; किसी में कुछ तो किसी में कुछ। तो जब क्षमाभाव जगे तो मानो माँ ने हाज़िरी लगा दी।

तो बाप! क्षमा, दया, बुद्धि हिंसकवृत्ति का नाश हो तब मानना माँ गौरी ने हाज़िरी लगा दी। बाकी आपकी काया पर कोई माया डाल दे! कोई कहे, अमारा घरमां कोईए कांई करी नाख्युं छे! 'रामायण' में लिखा है, इतना आपके पास हो तो कोई कुछ नहीं कर सकता। इतनी वस्तु आपके पास हो तो दुनिया की कोई माया, कोई अविद्या आपको छू नहीं सकती।

भरतु जनकु मुनिजन सचिव साधु सचेत बिहाइ।
लागि देवमाया सबहि जथाजोगु जनु पाइ।।

भरत का समाज, जनकजी का समाज और शायद राम को भरत लौटा जाएगा तो हमारा बनाया हुआ सब बिगड़ जाएगा! इसलिए देवताओं ने सबके चित्त में और सबके शरीर में देवमाया डाली। मेरे तुलसी ने इतने गिनाये। इतने को ये देवमाया लागू नहीं हुई। एक भरत; भरत मानी प्रेम। जिसमें प्यार-प्रेम होगा उसे दुनिया की कोई मेली विद्या असर नहीं कर सकती। विशुद्ध प्रेम होना चाहिए। हमारे पात्र में छिद्र हो तो पानी निकल जाय। हमारा पात्र अकबंध हो तो किसी की ताकत नहीं। भरत मानी प्रेम। प्रेम मानी भजन। जिसमें भजन है। भरत भजन का पर्याय है। उसको देवमाया असर नहीं करती। जनक; जनक मानी ब्रह्मज्ञानी। जनक पर देवमाया ने काम 'मानस' में नहीं किया। मुनिजन; जो मौनप्रिय है, जानता है जो हमारे लिए ये क्या-क्या गलत कह रहा है! लेकिन चुपचाप रहता है ऐसे मुनिजन को कोई देवमाया, अविद्या, ऐसी कोई विद्या उसको असर नहीं कर सकती। सचिव यानी मंत्री; आजकल के मंत्री नहीं! आज तो एक लाख रूपिया दो तो माया असर कर जाती है! यहां सचिव मानी वैराग। जो आदमी वितरागी है उसको कोई अविद्या असर नहीं कर सकती। भरत, जनक, मुनिजन, सचिव और साधु; जो साधु है उसको देवमाया असर नहीं कर सकती। 'सचेत' शब्द का यहां अर्थ है ज्ञानी, सावधान, जागृत, जो होश में हो। इतने को छोड़कर इन्द्र की माया पूरे चित्रकूट में जैसी-जैसी मानसिकता थी उसको लागू हो गई। बाकी छः मुक्त रह सके। मुझको, तुमको कोई कुछ नहीं कर सकता यदि हमारे में प्रेम है; यदि हम ब्रह्मज्ञान की ओर गति कर रहे हैं; यदि हमारे में मौन की शक्ति है; यदि हम वैराग के सचिव को लिए चलते हैं; यदि हम साधु है। हमारे पंड में सद्बुद्धिरूपी

माता को क्षमा, दया, करुणा की हाज़िरी देने दो और ऐसी माताएं हाज़िरी देगी तो तुम जहां बैठे हो वहां महारास शुरू हो जाएगा। हवे दुनियामां महारास शरू थाय छे। जय हो!

गई भवानी भवन बहोरी। बंदि चरन बोली कर जोरी।
जय जय गिरिबरराज किसोरी।
जय महेस मुख चंद चकोरी।।
जय गजबदन षडानन माता।
जगत जननि दामिनि दुति गाता।।

तो बाप! बिलग-बिलग रूप में माँ हमारे बदन में, हमारे पंड में जैसे वो ब्रह्मांड में नव रूप में है वैसे सूत्र के रूप में, वैचारिक रूप में हमारे शरीर में माँ की हाज़िरी होती है। बुद्धि के रूप में, आंसू के रूप में, क्षमा के रूप में, मीठी बोली के रूप में, दया के रूप में, कभी दान के रूप में, कभी प्रज्ञा के रूप में, अहिंसा के रूप में; अनगनित रूप हैं, ऐसे कुछ रूपों का दर्शन मेरी व्यासपीठ मुखर होकर संवाद के रूप में कर रही थी 'मानस-मातृदेवो भव।'

'बालकांड' कल हमने विराम दे दिया था। 'अयोध्याकांड' आप जानते हैं, भगवान राम का वनवास होता है। प्रभु चित्रकूट निवास करते हैं। सुमंत रथ लेकर लौटते हैं। अपने पुत्र के वियोग में अवधपति प्राण त्याग करते हैं। भरतजी आते हैं। उत्तरक्रिया की। फिर निर्णय लिया गया, हम सब चित्रकूट जाय। पूरी अयोध्या चित्रकूट जाती है। उधर से पूरा जनकपुर चित्रकूट जाता है। बहुत बड़ी-बड़ी सभाएं होती है और आखिर में निर्णय किया गया, पिता की आज्ञा मानकर चौदह साल राम वन में रहे और भरत अयोध्या में अपना फ़र्ज़ अदा करे। सबको वैसे तो निर्णय ठीक लगा लेकिन भरत रो पड़े! राम के चरण पकड़कर बोले, प्रभु, मैं जाउं तो सही लेकिन बिना आधार मैं चौदह साल कैसे व्यतीत करूं? भगवान ने कृपा करके अपनी चरणपादुका दी और पादुका लेकर श्री भरतजी अवध जाते हैं। दिव्य सिंघासन पर पादुका को राज्य सोंपा और पादुका को पूछपूछकर संचालन करने लगे। जनकपुरवासी सब जनकपुर गये। यहां भरत नंदिग्राम में कुटिया बनाकर तपस्वी बनकर रहने लगे। 'अयोध्याकांड' को विराम दिया।

'अरण्यकांड' में करीब-करीब तेरह साल चित्रकूट में रहकर भगवान स्थळांतर करते हैं। एक साल बाकी है। अपने अवतार कार्य को विराम देना है। और भगवान अत्रि ऋषि के आश्रम गये। वहां से मुनियों के निर्देश पर गोदावरी के तट पर निवास करने लगे। एक दिन लक्ष्मणजी ने भगवान से पांच आध्यात्मिक प्रश्न पूछे। भगवान ने पंचवटी में इसके उत्तर दिए। शूर्पणखा आती है। दंड़ित हुई। खर-दूषण को निर्वाण दिया। रावण को शूर्पणखा ने उकसाया और रावण मारीच के संग योजना बनाकर आया। जानकी का मूल रूप अग्नि में समा गया। प्रतिबिंबित रूप रखा। रावण जानकी की छाया लेकर भाग जाता है। मारीच को निर्वाण देकर जानकी विहीन कुटिया को देखकर प्रभु मानवलीला करते हुए बहुत रोये। सीता की खोज करते हुए आगे बढ़े। जटायु की शहीदी को देखा। गोद में लिया और पितृतुल्य आदर देकर भगवान ने उसका संस्कार किया। वहीं से भगवान कबंध का उद्धार करते हुए शबरी के आश्रम में आये। नव प्रकार की भक्ति की चर्चा की। शबरी योगाग्नि में अपने शरीर को पूरा करके चली गई, जहां से लौटना न पड़े। नारद आते हैं। प्रभु पंपासरोवर जाते हैं। यहां तीसरा सोपान पूरा किया जाता है।

'किष्किन्धाकांड' में भगवान और सुग्रीव की मैत्री हनुमानजी के माध्यम से हुई है। वालि को निर्वाण। सुग्रीव को राज्य और अंगद को युवराजपद दिया। वर्षाऋतु का आरंभ होता है। प्रभु चातुर्मास करने के लिए प्रवर्षण पर्वत पर रहते हैं। चातुर्मास पूरा होने के बाद सुग्रीव को जागृत किया थोड़ा डर बताकर। शरण में आता है। जानकी की शोध का अभियान चला। टुकड़ी के सब सदस्य प्रभु को प्रणाम करके जानकीजी की खोज के लिए निकलते हैं। सबसे पीछे हनुमानजी ने प्रभु को प्रणाम किया। प्रभु को लगा, कार्य तो हनुमान के द्वारा ही होगा। अपनी मुद्रिका हनुमानजी को दी, जानकी मिले तो पहचान के लिए देना। यात्रा शुरू होती है। स्वयंप्रभा से मुलाकात; संपाति से मुलाकात। समुद्र के तट पर सब अपने-अपने बल की उद्‌घोषणा करते हैं। हनुमानजी चुप बैठे हैं। जामवंत ने आह्‌वान किया कि रामकार्य के लिए आपका अवतार है। आप चुप क्यों है? तब हनुमानजी पर्वताकार हुए और प्रभु के कर्म के लिए तैयार हुए।

'सुन्दरकांड' में हनुमानजी लंका में प्रवेश करते हैं। सबके महल देखे। कहीं सीता नहीं मिली। विभीषण से भेंट होती है। मार्गदर्शन पाकर अशोकवाटिका में जाते हैं। माँ का दर्शन वृक्ष की घटा में छिपकर करते हैं। उसी समय रावण आता है। साम, दाम, दंड, भेद दिखाता है सीता की दृष्टि पाने के लिए। असफल रहता है। एक महीने की मुदत दी। धमकाकर चला गया। यहां जानकी बहुत विरह व्याकुल है। हनुमानजी मुद्रिका डालते हैं। माँ और बेटे का मिलन होता है। संदेश दिया। हनुमान को भूख लगी। फल खाये; तरु तोड़े; राक्षसों को मारे। इन्द्रजित हनुमानजी को बांधकर लंका के दरबार में ले गया। रावण-हनुमान का संवाद हुआ। रावण ने मृत्युदंड दिया। विभीषण ने रोक लिया, नीति मना करती है, दूत को मृत्युदंड नहीं दिया जाता। ओर कोई सजा दे सकते हैं। अग्नि लगा कर पूंछ को जलाने का निर्णय हुआ। पूंछ जलाई गई। हनुमान नहीं जले, पूरी लंका जल गई। लोगों की मान्यता का दहन हनुमानजी ने कर दिया। माँ के पास खड़े रहे।

चूड़ामणि लेकर माँ को ढ़ाढ़स देकर हनुमानजी लौटे। प्रभु से सब बातें कही। प्रभु की यात्रा चली। समुद्र के तट पर आये। यहां रावण की सभा से निष्कासित विभीषण राम की शरण में आया। भगवान ने शरणागत को रखा। मार्गदर्शन मागा, अब क्या किया जाय? शतजोजन सागर बीच में है, हम कैसे पार करें? विभीषण ने कहा, आप तीन दिन अनशन करे। सागर यदि कोई मार्ग दिखाये तो हमें बल का प्रयोग नहीं करना। तीन बार विनय किया जाय। और तीन बार के विनय से सामनेवाला न माना तो भगवान ने कहा, लक्ष्मण, धनुषबाण ला; मैं इस जड़ को दंड दूं। और जैसे प्रभु ने कहा, समुद्र ब्राह्मण के रूप में शरण में आया! भगवान को कहा, मेरी जड़ता में मैंने समय पर आपको जवाब नहीं दिया। क्षमा करे। आप बाण मारेंगे तो मैं जल जाऊंगा। असंख्य जलचर का नाश होगा। प्रभु, मैं आपसे निवेदन करूं, आपकी सेना में नल-नील नाम के दो बंदर है। वो ऋषि के आशीर्वाद से उसके हाथ से पत्थर तैरते हैं। आप सेतु बनाओ। सेतु बनाने का, जोड़ने का, संगम का विचार राम को अच्छा लगा।

'लंकाकांड' के आरंभ में सेतु बना और प्रभु को लगा, उत्तम धरणी है। प्रभु ने मित्रों को कहा, हम यहां रामेश्वर शिव की स्थापना करना चाहते हैं। ऋषिमुनि आये और मंत्रोच्चार से भगवान की स्थापना हुई। एक बार भाव से, 'नमः पार्वती पते हरहर महादेव।' राम और शैव को एक दिखाया; वैष्णव और शैव का सेतुबंध किया; समन्वय साधा और पूरी सेना को लेकर लंका में सुबेल पर्वत पर डेरा डालते हैं। सायंकाल को रावण अपना मनोरंजन पाने के लिए अखाड़े में आता है। वहां अप्सरा, गंधर्व, किन्नर नृत्य करते हैं। भगवान ने उसके महारस का भंग करके अपने आगमन का संकेत किया। रावण भवन गया। दूसरे दिन रावण की सभा में अंगद को फिर एक बार समझौता करने के लिए भेजा। अभी भी राम की ओर से रावण को समझाने के लिए प्रामाणिक प्रयास हुए फिर भी राम असफल रहे। उसके बाद राजदूत अंगद ने प्लान कर दिया, अब युद्ध अनिवार्य है। और अंगद प्रभु के पास आया। दोनों सेनाओं का युद्ध शुरू हुआ। लक्ष्मण मूर्छित हुए। संजीवनी लाये। सचेत हुए। उसके बाद कुंभकर्ण को निर्वाण मिला। इन्द्रजित को निर्वाण मिला।

आखिर में रावण का निर्वाण होता है। मंदोदरी ने प्रभु की प्रार्थना की; स्तुति की। रावण का संस्कार हुआ; विभीषण को लंका का राज्य मिला। सब राम की शरण में आये। हनुमानजी जाते हैं। जानकी को पुनः अग्नि से प्रकट करने के लिए जो अग्नि में समायी थी, प्रगट किया। उसके बाद प्रभु ने पुष्पक तैयार करने को कहा। अपने सखाओं को लेकर भगवान राम, लक्ष्मण, जानकी अयोध्या लौट रहे हैं। विमान से भगवान जानकी को रणमैदान की वो जगह दिखाते हैं, यहां ये हुआ, यहां ये हुआ। भगवान रामेश्वर के दर्शन कराये। कुंभज आदि मुनियों को मिलते हुए शृंगबेरपुर वो निषाद वो वंचित वो उपेक्षित समाज के पास विमान ऊतरा है। वो केवट जो नौका में प्रभु को बिठाकर पार कराया था। प्रभु ने कहा, मैं ऊतराई देने आया हूं। केवट ने कहा, महाराज, ये तो हमारी थोड़ी होशियारी थी कि ऊतराई बाकी रखें तो चौदह साल बाद आप आये और हमें

माँ का तीन रूप मैं बताऊं– महाकाली, महासरस्वती और महालक्ष्मी। महाकाली को मैंने करुणा कहा है। महाकाली का स्थान है इन्सान की आंख। करुणा सदैव मनुष्य की आंख में रहती है। हमारी आंखों में जब करुणा फूटे, मानो माँ आई। आंसू आये तो समझना, करुणारूपी माँ की हाज़िरी मेरे शरीर में लग गई। सहज में शुभ वाणी प्रगटे, समझो वो तुम्हारे मुख में निवास करती है माँ सरस्वती उसने हाज़िरी लगाई। और तीसरा महालक्ष्मी। जब तुम्हारे हाथों से कमाई हुई लक्ष्मी सद्‌उपयोग में बांटने के लिए, दसवां हिस्सा निकालने के लिए बेताब बने तब मानना, मेरे हाथ में महालक्ष्मी ने हाज़िरी लगाई।

दर्शन का लाभ मिले। बाकी आप पधारे, हम कृतकृत्य हुए। भगवान कहे, कुछ तो लेना पड़ेगा। तब केवट ने कहा, मैंने आपको नौका में बिठाया, हो सके तो आप मुझे विमान में बिठाकर अयोध्या ले चलो। रामराज्य तो ऐसे छोटे-छोटे आदमियों को पास बिठाने से आता है। उड़ान उसकी भी हो; केवल चुनाव में जीत जाय उनकी ही उड़ान नहीं होनी चाहिए! जिसने जिताया है उसकी भी उड़ान होनी चाहिए। रामराज्य की यही तो नींव है।

'उत्तरकांड' का प्रारंभ होता है। पूरी अयोध्या अश्रु में डूबी है। आज प्रभु न आये तो क्या होगा? भरत की दशा अवर्णनीय थी। ऐसे में डूबते को जैसे जहाज मिल जाय ऐसे श्री हनुमानजी भरतजी के पास आये हैं। भगवान सकुशल रावण का निर्वाण करके सपत्नी, सबंधु, समित्र पधार रहे हैं। मुझको खबर देने के लिए कहा। पूरी अवध बाहर निकल आई सरजू के तट पर। इतने में विमान सरजू तट पर ऊतरता है। भगवान ने पहले अपनी जन्मभूमि को प्रणाम किया। वशिष्ठजी को प्रणाम किया। भरतजी को मिले। पूरी अयोध्या और जो बंदर-भालू भगवान के साथ आये थे वो विमान से ऊतरे तो मनुष्य के रूप में! ये तो चमत्कार लगता है। लंका से बैठे थे तब बंदर-भालू थे। एक-दो घंटे की उड़ान में मनुष्य बनकर ऊतरे। इसका वैचारिक मतलब है कि रामकथा ये असुर को मानव बनाने की फोर्म्यूला है। ईश्वर यदि मानवीय रूप में आया तो ये सब मानव बनाने की प्रक्रिया है।

भगवान पहले कैकेयी के भवन गये, माँ, तूने मुझे वनवास न दिया होता तो कैसे पता चलता कि भाई कैसा हो, पत्नी का सत्य क्या होता है? मित्र कैसा हो उसका पता नहीं चलता; दुश्मन कैसा होता है, उसका ज्ञान नहीं होता। और तूने वनवास न दिया होता तो सेवक कैसा होता उसका पता नहीं चलता। माँ की ग्लानि को दूर की। सुमित्रा, कौशल्या के चरणों में तीनों ने प्रणाम किया। जानकी की जटा देखकर माँ रो पड़ी! स्नान किया। वस्त्राभूषण धारण किया। राम सिंहासन के पास नहीं गये; सिंहासन राम के पास आया। सत् कभी सत्ता के पास नहीं जाता। सत्ता को चाहिए सत् के पास जाय। पृथ्वी को, माताओं को, गुरु को, मुनिजनों, ब्राह्मणों को, छोटे से छोटे प्रजाजनों को, दिशाओं को, आकाश को, पृथ्वी को प्रणाम करके भगवान जानकी सह सिंहासन पर विराजित हुए। त्रिभुवन को रामराज्य मिला। वशिष्ठजी ने भाल में तिलक सारा। तुलसी की लेखनी गा उठी-

प्रथम तिलक बसिष्ट मुनि कीन्हा।
पुनि सब बिप्रन्ह आयसु दीन्हा।।

राज्याभिषेक की आरती ऊतरी है। त्रिभुवन में जयजयकार हुआ। चारों वेद ब्रह्मभवन से अयोध्या आये। भगवान की स्तुति की। पुनः ब्रह्मभवन चले गये। उसी वक्त भगवान शिव मूलरूप में पधारे। ओर कोई देवता नहीं आये! मैं बार-बार कहता हूं कि रामराज्य की स्थापना में भोगवादियों को कोई पड़ी नहीं! रामराज्य में तो कोई संत-फ़कीर शिव जैसे होते हैं। शिव ने स्तुति की। कैलास लौटे। मित्रों को निवास दिया। छः मास बीते। हनुमानजी को छोड़कर सभी मित्रों को बिदा दी गई। अद्‌भुत रामराज्य का वर्णन है, जो विश्ववंद्य गांधीबापू चाहते थे। भगवान की मानवीय लीला समयमर्यादा पूरी होने पर जानकी ने दो पुत्रों को जन्म दिया। वैसे तीनों भाईयों के घर दो-दो पुत्रों के जन्म की कथा आई। अयोध्या के वारिस की बात कहकर तुलसी ने यहां रामकथा को रोक दी। दूसरी बार के सीताजी के वनवास की कथा तुलसी नहीं कहना चाहते। क्योंकि जिस कथा में विवाद, अपवाद, दुर्वाद है वो नहीं कहते। उसके बाद भुशुंडिजी का जीवनचरित्र है। गरुड को रामकथा सुनाते हैं। आखिर में सात प्रश्न है जो रामकथा के सात कांड से उद्‌भवी सात जिज्ञासाएं है। और भुशुंडि के उत्तर सात कांड के उत्तर है।

भगवान शिव ने कैलास के शिखर पर कथा को विराम दिया। याज्ञवल्क्य और भरद्वाज संवाद की कथा विराम हुई कि नहीं उसका उल्लेख नहीं है। तुलसी ने भी यहां कथा को विराम दिया। शारदीय नवरात्र में माँ वैष्णोदेवी के चरणों में बैठकर ये रामकथा गाई गई। मेरी प्रसन्नता व्यक्त करते हुए इस कथा का पुण्य फल माँ वैष्णोदेवी के चरणों में अर्पण करता हूं। और ये फल प्रसादी के रूप में बोर्डर पर डटे हुए सभी नव जवानों को बल मिले और जो शहीद हुए हैं मातृभूमि के लिए उनको श्रद्धांजलि के रूप में समर्पित करते हैं। माँ के चरणों में मेरी प्रार्थना करता हूं कि सबको सद्‌बुद्धि प्रदान करें। मैं मेरी रामकथा को विराम देता हूं। अबू धाबी में मुझे प्रश्न पूछा गया कि आप व्यासपीठ पर आते हो तब क्या महसूस करते हो? मैंने कहा था, मैं व्यासपीठ पर आता हूं तब मैं बहुत पवित्रता महसूस करता हूं। जिसको मैं नाप नहीं सकता। मेरे आंसू ही इसका गवाह है। इसलिए मेरी अंत:करण की पवित्रता के साथ कहता हूं, बाप! खुश रहो, खुश रहो, खुश रहो।

मानस-मुशायरा

जिस जगह जाके इन्सान छोटा लगे,
उस बुलंदी पे जाना नहीं चाहिए।

●

जिस दीये में हो तेल ख़ैरात का,
उस दीये को जलाना नहीं चाहिए।
– ज़हूर आलम

तेरे जैसा कोई मिला ही नहीं।
कैसे मिलता, था ही नहीं।

●

मुझसे बचकर गुज़र गई दुनिया।
मैं तेरी राह से हटा ही नहीं।
–फ़ेहमी बदायूंनी

इससे उम्मीदे वफ़ा न रख फ़राज़।
जो मिलते हैं किसी से, होते हैं किसी के।
–अहमद फ़राज़

जनाजे पर मेरे लिख देना यारों,
मोहब्बत करनेवाला जा रहा है।
–राहत इन्दौरी

मज़ा देखा मियां सच बोलने का?
जिधर तू है, उधर कोई नहीं है!
–नवाज़ देवबंदी

ब्रह्मसूत्र है सत्य, उपनिषद है प्रेम और ‘गीता’ है करुणा

‘संस्कृतसत्र’–१८ में मोरारिबापू का अवसरोचित उद्‌बोधन

‘रामचरितमानस’ की एक चौपाई है, एक पंक्ति है-

भए जे अहहिं जे होइहहिं आगे।
जो हो गए हैं, जो आगे होनेवाले हैं,
प्रनवउं सबहि कपट सब त्यागे।।

इन सभी को ऋषिपंचमी के पावन दिन पर मैं प्रणाम करता हूं। प्रतिवर्ष आप सभी आदरणीय विद्वत्वृंद की सद्‌भावना इस स्थान पर हैं उसीके कारण ये ‘संस्कृतसत्र’ अठारह साल की यात्रा कर चुका। अवॉर्ड तो एक बहाना है। हमारे मन तो यही एक भाव है कि हम आपके चरणों में किसी न किसी बहाने प्रणाम करें। मुझे दीक्षित दनकौरी का एक शे’र याद आ रहा है कि-

शायरी तो फ़कत बहाना है।
अस्ल मक़सद तुझे रिझाना है।

आप कितना स्नेह आदर करते हैं ये मेरे पर! मेरे परम स्नेही आदरणीय बलदेवानंदसागरजी जो भाव प्रगट कर रहे थे, मुझे एक क्षण के लिए ये भ्रम हुआ कि वाचस्पति अवॉर्ड मुझे मिलनेवाला है! मैं एक क्षण भ्रम में रहा! लेकिन तुरंत भ्रम निरसन हुआ गुरुकृपा से कि मोरारिबापू, आपने यहां कोई दिवस नो मळे! ये आपका ‘प्रीति पुरातन लखै न कोई।’ ये हमारा कैलास आश्रम के आध्यात्मिक नाते आपकी तलगाजरडा के प्रति जो पुरातन प्रीति है उसीका ये भाव था।

सब बातें यहां कही गई है। सभी विद्वान वक्ताओं ने दो महिना, तीन महिना स्वाध्याय करके पैंतालीस मिनट में उसका सार हमें प्रदान किया। हम आपके बहुत-बहुत ऋणी हैं। प्रणाम के सिवाय हमारे पास कुछ नहीं। कागभुशुंडि ने जब सब कुछ दिया खगराज गरुड को तब गरुड उसका प्रतिभाव देते हैं तो कहते हैं, ‘प्रति उपकार करौं का तोरा।’ हे बुद्धपुरुष, मैं आपका प्रतिउपकार क्या करूं, क्योंकि ‘सनमुख होइ न सकत मन मोरा।’ क्योंकि मेरा मन भी आपके सन्मुख नहीं हो पा रहा है। तो हम क्या-क्या कहें? लेकिन मैं श्रवण भक्ति कर रहा हूं और हृदय भरकर सबको सुन रहा था। और वसंतभाई, हम यदि विषयी हो तो विषय पर रहने की जरूरत है। हम यदि साधक है तो विषय की ऐसी-तैसी! चाहे थोड़ा स्पर्श हो, न हो; ज्यादा हो, न हो। ये मंच सभी के लिए परिपूर्ण सद्‌भावनापूर्ण स्वतंत्र देता है। लेकिन ये संवाद होना चाहिए। ये विवाद नहीं होना चाहिए। तो सब अद्‌भुत बोल रहे थे।

मेहतासाहब ने सबसे पहले प्रारंभ किया यज्ञविज्ञान और आदरणीय भाणदेवजी ने योग में पूरा किया। बीच में हमने सब पीया, सुना। मैं सोच रहा था कि ये पदार्थविज्ञान, अणुविज्ञान, योगविज्ञान, आरोग्यविज्ञान, खगोलविज्ञान, यज्ञविज्ञान, अर्थविज्ञान, जो-जो विज्ञान की बातें यहां आई, मैं आपके साथ-साथ आप बोले जा रहे थे मेरे श्रवण को बिलकुल केन्द्र में रखते हुए गुरु कृपा से मेरे अंदर भी कुछ हो रहा था कि क्या ये सब विज्ञान जिस ग्रंथ को लेकर मैं बाबुल की तरह घूमता हूं इस ‘रामचरित मानस’ में है क्या? और तब मेरा गुरु मुझे संकेत करता रहा कि बेटा, ये सब विज्ञान ‘रामचरित मानस’ में है। अब यहां कोई अर्थवाद नहीं है, क्योंकि आप विद्वान है। आप मुझे कहे कि प्रमाण दो, साधार बोलो तो आख़िरी प्रमाण माना गया है अंत:करण प्रवृत्ति। और अभी-अभी तो कुछ दो-तीन सालों से मैं कहता हूं कि आखिरी प्रमाण तो तलगाजरडा के लिए साधु का भजन ही प्रमाण होता है, आखिरी प्रमाण।

भाणदेवजी बापा, आप मेरे एकदम इतने आत्मा से निकट हैं। सब निकट हैं लेकिन ये योगी बेरखा लेकर बैठा है। और मैं चाहूं, मेरे देश का योगी जप करता हो वर्ना योगियों..! लेकिन ये भजन है। निरंतर मैं देख रहा हूं कि उसका बेरखा चालू है। मेरे कहने का मतलब कि आपने सभी ने अपनी-अपनी बात रखी, तब मुझे विचार आया कि ये सब ‘मानस’ में है क्या? और मैं तो केवल संकेत करके छोड़ देता हूं। और मुझे बहुत खुशी है, अधिक खुशी इस बात की कि हमारे आदरणीय भाणदेवजी भी अब ‘रामचरित मानस’ की कथा कहने के लिए चित्रकूट जा रहे हैं। ‘भागवत’ तो कहते ही है। हर विषय का स्पर्श करके वो ऐसे ही मैंने जितनी बार सुना, फिर गार्गी पर बोले हो, गंगासती पर बोले हो, यहां ‘अस्मितापर्व’ में बोले हो, यहां बोले हो। तो अब वो बता रहे थे कि चित्रकूट रामकथा कहने जा रहा हूं। मुझे बहुत खुशी हुई, बहुत प्रसन्नता हुई। और अब मैं जो संकेत करना चाहता हूं शायद वो ‘रामचरित मानस’ की कथा कहते-कहते आप उसको विशेष खोजकर के समाज को दे पाएंगे, क्योंकि आपकी ये खोज है। आप उस क्षेत्र का विशेष शोधन करेंगे क्योंकि ‘मानस’ की कथा आप कहेंगे। मुझे बहुत प्रसन्नता होती है। भगवान शिव के चरणों में बैठी पराम्बा पार्वती शिव को पूछती है, बुद्धि जब श्रद्धा में परिणित हो गई। पहले वो ही सती दक्षकन्या थी। बौद्धिक आयाम था उसका लेकिन वो ही दक्षयज्ञ में बुद्धि, बौद्धिकता के बोझ में जल गई। बौद्धिकता की आग में बुद्धि खत्म हो गई और हिमालय के घर अटल श्रद्धा के रूप में प्रकट हुई पार्वती, सती, उसको श्रद्धा कहते हैं।

भवानीशंङ्करौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ।

तब शिव को पाने के बाद कैलास के शिखर पर वेदविदित वृक्ष नीचे आई। कई लोग मुझे पूछते हैं कि वेद में इस वृक्ष का उल्लेख है? अथवा तो कैलास पर बरगद का पेड़ है क्या? हम तो कितनी बार गये, वहां पेड़ हमने देखा नहीं है। शायद पेड़ इन आंखों से न देखा जाये। हो सकता है, कोई दूसरी आंख से।

पश्य मे पार्थ रूपाणि शतशोऽथ सहस्रशः।
नानाविधानि दिव्यानि नानावर्णाकृतीनि च।।

शायद दूसरी आंख चाहिए वो हमारे पास नहीं। लेकिन तुलसी कहते हैं, स्थूल रूप में बट के पेड़ को मत खोजो। ‘बटु बिस्वास अचल निज धरमा।’ अपनी निजता में, अपने निज स्वभाव में स्थिर रहना वो ही विश्वास का वट है। और शिव उसके नीचे बैठे हैं। पार्वती आई है। शिव ने सन्मान किया। शिव संन्यासियों के संन्यासी है और संसारियों के संसारी है। पार्वती को आदर देते हैं। पार्वती आई और कहा, मेरे वाम भाग में बिराजो।

पार्वती प्रसन्न है और शिव के पास जाकर पहले तो आदर कुबूल किया, बैठी और फिर सन्मुख हुई और कहती है, मुझे रामकथा सुनाओ। मैं आपको बहुत मेरी जिम्मेवारी के साथ कहूंगा कि पार्वती ने शिव को इतने प्रश्न पूछे। नौ पूछे हैं, ऐसा भी मानते हैं। इसके लिए रामकथा के नौ दिन निश्चित कर दिए गए, जो हो। बाकी तो ‘हरि अनंत हरि कथा अनंता।’ नौ प्रश्न, उसमें उसने राम का अवतार क्यों हुआ? बाल लीला क्या हुई? फिर वो शादी कैसे हुई? फिर वो वनगमन कैसे हुआ? फिर ये, ये, ये। आखिर में रावण को कैसे मारा? रामराज्य की स्थापना कैसे हुई और हे भोलेनाथ, एक आश्चर्य तो मुझे ये है कि भगवान राम प्रजा सहित अपने धाम में कैसे प्रस्थान कर गए? वहां तक की कथा सुनाओ। रामकथा केवल कथा होती, केवल वार्ता होती तो पार्वती यहां रूक जाती, आगे

नहीं पूछती। और शिव शुरू कर देते, 'वर्णानामर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि।' कथा शुरू हो जाती लेकिन नहीं, अब पार्वती जो पूछती है उसमें ये सब विज्ञान है।

पुनि प्रभु कहहु सो तत्त्व बखानी।
जेहिं बिग्यान मगन मुनि ग्यानी।।

खाली ओर अर्थ नहीं, केवल शब्दार्थ में ही चले जाइए। ये पराम्बा है, पार्वती है। जैसे आदरणीय गौतमभाई ने शब्द यूझ किया, अंधश्रद्धा भी नहीं, अश्रद्धा भी नहीं। ये मौलिक श्रद्धा है, गुणातीत श्रद्धा है। यद्यपि 'गीता' ने तीन प्रकार की श्रद्धा का उल्लेख किया है। लेकिन यहां गुणातीत श्रद्धा है। मेरा अप्रोच, मेरी मानसिकता सदैव गुणातीत श्रद्धा के प्रति गति करती है। सात्त्विक श्रद्धा अच्छी है, अवश्य। सात्त्विक श्रद्धा को तुलसी ने गाय कहा है लेकिन गाय भी दुहने जाए उसको पैर से हटा देती, ये भी हो सकता है। गुणातीत श्रद्धा जब पूछती है महादेव को, आप ये तो कथा कहिएगा रघुकुल की ये पावन कथा लेकिन अब मुझे इसके परिणामरूप, उसके फलस्वरूप, उसके रसस्वरूप आप मुझे ये बताना 'प्रभु कहहु सो तत्त्व बखानी।' उस तत्त्व का वर्णन मुझे बताओ 'जेहि बिग्यान मगन मुनि ग्यानी।' जिस विज्ञान में समस्त मुनि डूबे रहते हैं। ये विज्ञान क्या है? ये प्रश्न सुनिए, जिज्ञासा सुनिए।

भगति ग्यान बिग्यान बिरागा।
पुनि सब बरनहु सहित बिभागा।।

हे महादेव, भक्ति, ज्ञान, विज्ञान, वैराग्य उसका विधविध विभागीकरण करके आप मुझे ये सब विभाग बताईये। पार्वती बहुत समझदार है। आपने पूछा कि महाराज, मैं आपको पूछने में कुछ भूल भी गई हूं तो हे कृपालु, आप अपने आपको खोल दीजिएगा। मैंने न पूछा हो ऐसी बातें भी आप मुझे बता दें। क्योंकि 'गूढउ तत्त्व न साधु दुरावहिं।' गूढ़ से गूढ़ तत्त्व को साधु छिपाता नहीं। लेकिन कब? आरत अधिकारी जहँ पावहिं। जहां जिज्ञासु, आर्त जिज्ञासु आता है तो गूढ से गूढ तत्त्व भी साधु छिपाता नहीं। और आप मेरे लिए केवल साधु नहीं है।

तुम्ह त्रिभुवन गुर बेद बखाना।
आन जीव पांवर का जाना।।

पार्वती की छलविहीन वाणी सुनकर शिव बहुत प्रसन्न हो गए और भाणदेवबापा को मैं कहूं, शिव पर पहली असर क्या हुई?

मगन ध्यान रस दंड जुग पुनि मन बाहेर कीन्ह।

यम, नियम, प्राणायाम, प्रत्याहार, ध्यान, धारणा, समाधि। मैं आपसे प्रार्थना करूं, आप ज्यादा अच्छा कर सकेंगे क्योंकि 'मानस' की कथा करने जा रहे हैं। शिव अष्टमूर्ति है, ठीक है भगवान? शिव अष्टमूर्ति है। 'रामचरित मानस' में उज्जैन के महाकाल के मंदिर में एक बुद्धपुरुष ने रुद्राष्टक गाया है, अष्टक है। और मैं प्रार्थना करूं, मैं तो अपने ढंग से कहूंगा लेकिन आप ज्यादा अधिकारपूर्वक कह सकते है और जो अष्टक रुद्राष्टक है और वो ही पतंजलि का अष्टांग योग है। कहीं यम है पहले में, दूसरे में नियम, तीसरे में प्राणायाम, चौथे में प्रत्याहार, पांचवें में आप पूरा पूरा अष्टांग, आखिर में अष्टांग के बाद भी योगी कितना निराभिमानी है।

न जानामि योगं जपं नैव पूजां।
नतोऽहं सदा सर्वदा शंभु तुभ्यं।।
जरा जन्म दुःखौघ तातप्यमानं।
प्रभो पाहि आपन्नमामीश शम्भो।।
रुद्राष्टकमिदं प्रोक्तं विप्रेण हरतोषये।

ये पूरा पतंजलि; मैं बहुत खुश हुआ। मैंने ये पहली बार सुना है। शिवमंदिर पतंजलि का अष्टांग योग है, मैंने पहली बार सुना। मेरे लिए तकलीफ़ क्या है, मैं जब कहूं न तो कई लोग खड़े होते हैं उसमें पहले हमने भी ये कहा था! मैंने यहां से सुना! परहेज क्यों? जिससे सुना है वो कुबूल करो ना। साधना यदि करनी है, भजन यदि पकाना है, क्रियान्वित भजन को भावनात्मक बनाना है तो ये शील होना चाहिए। लोग कुबूल नहीं करते और कुबूल नहीं करनेवाले भी यदि निखालस हो जाएं और निर्दम्भ होकर बात कहे तो उससे भी आपत्ति नहीं होनी चाहिए।

दो दिन पहले मुझे एक पत्र मिला। पहला दिन अपना पूरा हुआ। दूसरे दिन एक पत्र मिला। उसमें लिखा कि मैं 'संस्कृत सत्र' में आया हुआ एक युवा पंडित हूं। मेरे से दो शर्त लगा दी! और इसलिए मैं उसका जवाब देने नहीं जा रहा हूं। मुझे कृष्णमूर्ति याद आते हैं; उसने कहा, मैं तुम्हारे जवाब के लिए नहीं हूं, मैं तुम्हारी जागृति के लिए हूं। जवाब तो दो कौडी के होते हैं। तर्क ज्यादा प्रबल होते हैं। यू केन। थोड़ी थोड़ी इंग्लिश बोलूं न! सुरेश दलाल का निवेदन है। ये कहे कि प्रवचन करे ना तो बीच में पाश्चात्य फ़िलोसोफ़र का नाम लें, अंग्रेजी का एक आध टुकड़ा बोले तो लोग कहते हैं कि ये बड़ा विद्वान है! अपनी इज्ज़त रह जाए! आपका आशीर्वाद है, मैं केम्ब्रिज में कथा कहने जा रहा हूं।

फ़र्क इतना ही है सय्याद कफ़स और आशियाने में।
ये तेरा दस्तूर है उसे मैंने बनाया है।

सय्याद ने पक्षी को पकड़ा। मैंने कई बार बोला, दोहरा रहा हूं; सोने के पिंजड़े में पक्षी को रखा। जो पानी चाहे वो पिलाया। ऋतु-ऋतु के फल विदेश से मंगवाकर खिलाये। लेकिन पिंजड़े में पक्षी को कैद किया इससे पूर्व तौला, वजन किया तो इतना था। एक महिने के इतने सुख के बाद पक्षी का वजन कम हो गया। तो सोचने लगा कि मैंने ऋतु-ऋतु के फल खिलाये और सोने के पिंजड़े में तुझे रखा, फिर भी तेरा वजन कम क्यों हुआ? तब पक्षी को वाणी फूटी और पक्षी ने जवाब दिया कि-

फ़र्क इतना ही है सय्याद कफ़स और आशियाने में।
ये तेरा दस्तूर है उसे मैंने बनाया है।

तो गुजराती तो आती है यार! हिंदी बोलते-बोलते गुजराती बोलूं तो कई मुझे फ़ोन करते हैं कि बापू, आपको ख्याल है कि कथा हिन्दी में है! क्या करूं? तो एक युवा पंडित ने मुझे पत्र दिया। उसने शर्त लगा दी, कसम की है इसलिए मैं इसको खोल रहा हूं वर्ना नहीं खोलता। मेरा भी एक शील है। आप मेरे अतिथि हैं। यहां आये हैं। यहां किसीको पांव लगने के लिए नहीं बुलाया जाता। यहां मेरा देश फिर पांव पर खड़ा रहे इसलिए बुलाया जाता है। पांव पड़ना मुझे बहुत संकोच होता है। तुम मुझे प्रणाम करो, ठीक है ये तो। और माँ-बाप बच्चे को कंधे पर उठाये इसमें दिक्कत ही क्या है? हम क्या करे? ये बंद तो होगा नहीं! चरणस्पर्श में दो बार ऊंगली टूटी है! लेकिन ये तो ऐसा है, गुड खाये वो चोकडा सहे!

बाप! मैं विनय के साथ इसका जवाब देना चाहता हूं। आपने लिखा कि 'बापू, मैं तीन साल से 'संस्कृत सत्र' में आता हूं लेकिन मुझे तीनों सत्र में आपके प्रति रोष आता है!' इस निखालस कबूलता को मेरा प्रणाम है। 'मुझे आपके प्रति रोष आता है और इसका मतलब ये नहीं है कि मेरे दिल में भाव नहीं है। वर्ना तो मैं क्यों आता? लेकिन आप निकलते हैं तो मैं देखता रहता हूं। सिर भी नहीं झुकाता, प्रणाम भी नहीं करता। मेरे मन में आपके प्रति रोष है। लेकिन पत्र में मेरा नाम लिखता हूं, आप बोलियेगा मत और मेरे प्रश्न का जवाब भी दीजियेगा।' पहला तो मेरा विवेकपूर्ण जवाब ये है कि आप युवापंडित नहीं है, आप बालपंडित है। बालपंडित किसको कहते हैं? 'मानस' में लिखा है। आज मेरा मन था कि हारमोनियम के साथ मैं गाऊं। खैर!

तन छार ब्याल कपाल भूषन नगन जटिल भयंकरा।
संग भूत प्रेत पिसाच जोगिनि बिकट मुख रजनीचरा।।

भगवान महादेव जब ब्याहने नगाधिराज हिमालय के घर आये और नंदी पर सवार है और हिमाचलवासी छोटे-छोटे बच्चे ये जो दुल्हे को देखने गए एकदम भागकर घर में आ गए! माता-पिता पूछ रहे हैं बेटा, क्या हुआ? बोले, दुल्हा ने शरीर पर भस्म लगाई है! ये कोई दुल्हा है? हमको तो पिताजी, ऐसा लगता है कि वो ही जीवित रहेंगे जिन्होंने बहुत पुण्य किये होंगे। लेकिन तुलसी कहते हैं कि ये किसने कहा? ये निवेदन बालपंडितों का है! युवास्यात् साधु युवा अध्यापक का नहीं है। हम कभी-कभी पंडित तो होते हैं, लेकिन बालपंडित होते हैं! शंकर की भस्म ही दिखती है। लेकिन ये शरीर कभी भस्म नहीं होनेवाला वो शादी करने जा रहा है, वो अमरत्व नहीं दिखा बालपंडित को! उसको तो तन छार ही दिखी! जैसे प्रभु आप कह रहे थे, महादेव के मंदिर में कापालिक और भैरव होते हैं। वो उसको नहीं दिखे! उसको दिखाए, 'तन छार ब्याल कपाल भूषन नगन जटिल भयंकरा।' क्योंकि ये शंकर की आलोचना जो थोड़ी बच्चों के द्वारा ये तुलसी कहते हैं, ये बालपंडितों का निवेदन है, युवापंडित का ये वक्तव्य नहीं है।

मूल बात पर आऊं। आपने पूछा है इसलिए जवाब दूं। आपने पूछा कि दो दिन से मैं सुन रहा हूं कि दो-तीन बुज़ुर्गों ने ऐसा कहा कि जगद्गुरु आदि शंकराचार्य उसके इस संवादगृह में एक-दो वड़ीलों ने भी आपको भी ये कहा कि एक आचार्य की अध्यक्षता; ये आपका उदार भाव था। मुझे आचार्य कहा, अब वहां तकलीफ़ हुई! आप कहां के आचार्य हैं? ये मैंने कहां कहा भाई साहब! मैं तो प्राईमरी स्कूल में नौकरी करता था तो आसिस्टन्ट था। आचार्य तो मेरे लिए बड़ी दूर नगरी! लेकिन बालपंडित को ऐसा लगे कि ये सब आपको आचार्य-आचार्य कहे! अब मूल बात, फिर उसने कहा कि आपने कोई भाष्य किया है?

आचार्य तो उसको कहते हैं कि प्रस्थानत्रयी का भाष्य करे। ब्रह्मसूत्र, उपनिषद, 'श्रीमद्भगवद्गीता', यही तो नियम है ना! भगवान रामानुज, भगवान जगद्गुरु शंकराचार्य के तुल्य, क्या कहूं साहब! 'शंकरं शंकराचार्यं केशवं बादरायणम्।' तो आचार्यों को भाष्य करना पड़ता है तभी आचार्य की पदवी मिलती है। तो आपने मुझे कहा कि ये लोग आपको आचार्य-आचार्य कहते हैं! लेकिन मैं क्या करूं? मेरा मौन चल रहा है। वो तो यहां बोल रहा हूं। मैं क्या करूं? और मैं बोलता तो भी क्या करूं? आ बधा मूढ मार कहेवाय! इसलिए 'रामचरित मानस' के हनुमानजी महाराज की रामजी ने बहुत प्रशंसा की तो एकदम बाहों में से निकलकर भगवान के चरण पकड़ लेते हैं। 'सुन्दरकांड' देखिये आप। राम उसकी सराहना करने लगे कि हनुमान, तेरे ऋण से रघुकुल कभी मुक्त नहीं होगा। तूने जो हमारा काम किया है। तू 'रामचरित मानस' के पंचप्राण का रक्षक है। अब परमात्मा अपनी बाहों में ले तो उससे निकलना कौन चाहेंगे? लेकिन जब प्रभु ने ये कहना शुरू किया तो हनुमानजी ये तो 'अति लघु रूप पवनसुत लीन्हा।' जो भगवन् कह रहे थे कल कि ये पतंजलि भगवान ने सिद्धियों का भी जिक्र किया है अणिमा, लघिमा आदि-आदि। तो एकदम अति लघुरूप हो गए और भगवान के आश्लेष से सरक गए और फिर मूल रूप में भगवान के चरणों में गिर पड़े। भगवान तो इसी तन्मयता में है कि हनुमान अभी भी मेरी बाहों में है। लेकिन वो नीचे हैं, गिर पड़े! तब प्रभु को पता लगा तो कहे, 'मारुति!' 'हां प्रभु!' 'मैं तेरे लिए हृदय का भाव व्यक्त कर रहा था और तू चरण में!' 'क्योंकि महाराज, आप जब हमारी प्रशंसा या तो हमारे लिए कोई विशिष्टता की बात बताने लगे तब गिरना स्वाभाविक है। अब मैं उन्नत नहीं हो पाऊंगा। क्योंकि प्रशंसा तो गिराती ही है साहब! अब गिरना निश्चित है तो मैंने निश्चय कर लिया कि गिरना है ही तो दूसरी जगह क्यों गिरूं? तेरे चरणों में क्यों न गिरूं?' इसलिए हनुमानजी भगवान के चरणों में त्राहिमाम् करके गिर गए।

तो आचार्य और मैं? आसिस्टन्ट भी मुझे नहीं होने दिया था! आपकी जो सरकारों की जो पद्धतियां है इसमें तीन महिना नौकरी करूं तो एक दिन कट कर देते थे ताकि ये आदमी कायम न हो! और मेहरबानी है इन लोगों की कि मुझे कायम नहीं होने दिया इसलिए मैं इसमें आज कायम हूं। ब्रेक कर देते थे एक दिन क्योंकि तो सब लाभ न मिले वर्ना सब माल TA DA जो है सब मिलता तो था लेकिन ये अंदर-अंदर बांट लेते थे! अकेले नहीं करते थे। जो-जो हो सब बांट लेते थे! और साधु तो बिक जाता है। तो मुझे पूछा कि आपने कोई भाष्य किया? मैं क्या भाष्य करूं? मैं तो अनुभव कहूं। जब तक मेरे गुरुकृपा की महसूसी है, भाष्य क्या करूं? और भाष्य अब करने की जरूरत क्या है? आपने कहा, तीन सौ भाष्य पतंजलि भगवान के योगसूत्र पर। और आप सभी एक-एक ग्रंथागार हैं। सब वास्तव में सजीव ग्रंथागार हैं। कितने-कितने ग्रंथों के स्वाध्याय आप करके यहां आते हैं! और हम तो स्विच दबाते हैं और प्रकाश हो जाता है लेकिन धुवारण तो आप हैं। कहां से कहां ये सब निकाल कर निचोड़कर के लाते हैं! आपका अनुग्रह है।

हम क्या भाष्य करें साहब! लेकिन, लेकिन, लेकिन तलगाजरडा ने भी ये तीनों का भाष्य किया है यदि उसको भाष्य कहना चाहो तो। मैं नहीं कहना चाहता लेकिन पूछा है तो कहूं। 'ब्रह्मसूत्र' का तलगाजरडी भाष्य है सत्य। 'सत्यं ज्ञान अनंतं ब्रह्म। सत्यं परं धीमहि।'-'भागवत।' पूरा 'ब्रह्मसूत्र' क्या कहता है? सत्य के इर्द-गिर्द में तो घूम रहा है। किसकी जिज्ञासा? 'अथातो ब्रह्म जिज्ञासा।' वहीं से तो शुरू होता है। और ब्रह्म क्या है? 'राम ब्रह्म राम ब्रह्म राम ब्रह्म रामो विग्रहवान् धर्मः साधुः सत्य पराक्रमः।' छोटा-सा भाष्य है तलगाजरडा का। बालपंडित! उसका नाम है सत्य। और उपनिषद का छोटा-सा भाष्य है जिसका नाम है प्रेम। निकट कौन बैठने दे? जिसको हमारे प्रति प्रेम हो वो ही बैठने दे। उपनिषद का अर्थ है, संन्निकट बैठना। मुझे विजयभाई के साथ मोहब्बत है तो मैं हाथ पकड़कर कहूं, विजयभाई, यहां आओ। जिसके प्रति हमें प्रेम होता है वो ही हमें निकट बैठने देता है अथवा तो उसके निकट बैठने का मन होता है। उपनिषद क्या है? निकट बैठाना, बैठो। इसलिए तलगाजरडी भाष्य कहेगा, उपनिषद प्रेम है। क्योंकि निकट बैठे थे। वहां व्याख्या की भी जरूरत नहीं। वो बोले न बोले। ये रिकोर्ड हुआ है कि नहीं, खबर नहीं, मैं रमण महर्षि के आश्रम में जब कथा गा रहा था 'मानस-महर्षि' तब मैंने एक उसके बहुत पुराने साधक से सुना कि बापू! एक बार एक जर्मन आदमी ने भगवान को प्रश्न पूछा कि मौन क्या होता है? तो भगवान ने कहा, वाणी के फूल का नाम मौन है। मौन है वाणीरूपी पौधे का पुष्प। दिखाई नहीं देता। उसकी खुश्बू ही लेनी होती है। रूह से महसूस करो। प्यार को प्यार रहने दो, कोई नाम न दो। मेरे कहने का मतलब कोई उपनिषद समझाए न समझाए। यहां तो अभी-अभी जो तैत्तिरीय उपनिषद का जो पाठ यहां आया, जो दीक्षांत समारम्भ में दिया जाता था। प्रेम उपनिषद का मेरी दृष्टि में भाष्य है। ये छोटी-सी उम्र में कितना-कितना पढ़ेंगे, कितना-कितना हम रख पाएंगे? आपने ठीक कहा भगवन् कि बहुत ऐसा करनेवाले आखिर में पागल हुए हैं। 'उलझनों में खुद उलझकर रह गए वो बदनसीब।' पारसा जयपुरी का शे'र सुनिए-

उलझनों में खुद ऊलझकर रह गए वो बदनसीब,
जो तेरी ऊलझी हुई झुल्फों को सुलझाने गए।

परमात्मा सुलझी हुई झुल्फ नहीं है। 'रघुपति भगति करत कठिनाई।' ये तो साधना मांगती है। वहां पंडित नहीं पहुंचे, तेरे दीवाने गए हैं। कभी कबीर पहुंचे वहां, कभी नानक पहुंचे, बिलकुल पहुंच गए। मेरे कहने का मतलब ये निकट बैठ जाना, ये प्रेम के बिना संभव नहीं है। इसलिए उपनिषद का भाष्य है प्रेम। मेरे लिए है, आपके लिए नहीं। आपने प्रश्न का आग्रह करके कहा कि आप जवाब दीजियेगा तो पूरे पत्र का पाठ मैंने कंठस्थ कर लिया है! इसमें तो लिखा है, हिम्मत है तो जाहिर में जवाब दो! हिम्मत थी नहीं साहब! साधु को किसको जीतना है? बाकी तो मैं गाता ही रहता हूं। हमारा बाबाजी बैठा हैं उसको ज्यादा अच्छा लगेगा।

कुछ तो लोग कहेंगे, लोगों का काम है कहना।
छोड़ो बेकार की बातें, कहीं बीत न जाये रैना।

वीजळी ने चमकारे मोतीडां परोववा माटे आपणे आव्यां छीए साहब! कहीं ये पल बीत न जाए एकदूसरे की आलोचना में! एकदूसरे के प्रति पूर्वग्रह के कारण, द्वेष के कारण, कहीं हम खो न बैठे! बाकी तो ये चलता ही रहता है। पात्र वो ही का वो ही रहता है। समय-समय पर भरनेवाले बदल जाते हैं। चाहे कबीर हो, चाहे नानक हो, चाहे कोई भी हो। अंदर द्वेष, निंदा, इर्ष्या भरनेवाले बदल जाते हैं! बाकी पात्र तो वो ही के वो ही। तो उपनिषद है प्रेम, ब्रह्मसूत्र है सत्य और 'भगवद्गीता' है मेरे लिए करुणा। करुणा न होती तो कृष्ण सारथि न होता। योगेश्वर कृष्ण। अर्जुन कान पकड़ रहा है, मुझे माफ़ कर देना गोविंद, क्योंकि-

सखेति मत्वा प्रसभं यदुक्तं हे कृष्ण हे यादव हे सखेति।
अजानता मिहमानं तवेदं मया प्रमादात्प्रणयेन वापि।

मैंने तुम्हें सखा माना, तुझे गालियां दी! तुझे ताना मारा, तुझे तू-तू मैं-मैं किया! लेकिन अजानता। उसीको मेरा नरसिंह मेहता नागरो जूनागढ़ में एम कहे कि 'अमे अपराधी कांई न समज्या न ओळख्या भगवंत ने।' यही भाष्य, ये मैं तो वो ही बात अपनी बोली में, नागरी बोली में, दामोदर कुंडीय बोली में, भवनाथीय बोली में, गिरनार की उत्तुंग बोली में करता हूं। मैं लास्ट कथा में कहकर आया हूं कि गिरनार मेरे लिए सत्य है। यस। हिमालय का दादा का दादा का दादा है। नरोत्तमबापा प्रमाण के साथ कहते हैं पलाणबापा। और जो बहुत शाश्वत हो वो ही तो सत्य है। गिरनार सत्य है। द्वारिकाधीश मेरा प्रेम है। और सोमनाथ करुणा है। तो कृष्ण सारथि बनने के लिए तैयार हो जाए ये करुणा बिना कैसे हो सकता है? हथियार नहीं लूंगा। निहत्था रहूंगा और वो ही करुणावश रहकर अर्जुन के लिए दुनिया की ऐसी-तैसी करके चक्रपाणि बनकर, रथांगपाणि बनकर जब कूदता है तो करुणा नहीं तो क्या है? और युद्ध के धमासान तुमुल आवाज़ों के बीच जो बिलकुल चैन से सात सौ श्लोको में 'गीता' का अमृत पिलाये वो करुणा नहीं होती तो कहां से होता?

तो 'गीता' है करुणा, उपनिषद है प्रेम, ब्रह्मसूत्र है सत्य। ये मेरे लिए व्यक्तिगत। अब मैं बालपंडित नहीं कहूंगा। मेरे दोस्त, आते रहना। और मैं निवेदन करता हूं, आग्रह करता हूं, मुझ पर कायम रोष करते रहना। क्योंकि क्या फ़र्क पड़ता है? भाणदेवजी बापा ने कल कहा कि बाहर भोग, अंदर योग। क्रोध तो बाहर होता है, भीतर तो बोध होता है साहब! यही तो जीव-शिव का पार्थक्य है। यही तो तफ़ावत है। तो मैं आपसे ये निवेदन कर रहा हूं कि जैसा है वो कह देना। मैंने शिवमंदिर अष्टांग योग का प्रतीक है ये पहली बार आपसे सुना है। और अब मैं जब भी आपसे कहूंगा, आप टी.वी. पर मुझे सुने, न सुने, आप उस समय पर हो न हो, मैं कब बोलूं ये क्या पता? लेकिन मैं जब बोलूंगा तब भाणदेवजी को याद करके बोलूंगा। क्योंकि इतना शील तो होना चाहिए ना! गंगासतीए बलवंत साधु ने पगे लागवानी मना करी छे, पण 'शीलवंत साधुने

पानबाई वारे वारे नमीए।’ शील ही तो हमारी मूडी है। शील ही तो हमारा अभिमान न आने दे ऐसा बल है। शीलयुक्त बल। तो बहुत प्यारी बात है।

तो ‘रुद्राष्टक’ अष्टांग योग है, यस। अब तो मैं भी अपनी अदा से बोलूंगा लेकिन आप ज्यादा बोल सकेंगे क्योंकि आपका योग का इतना अभ्यास है। आपने तप किया है, स्वाध्याय किया है। रवि ने कहा, गायत्रीमंत्र, गायत्री विज्ञान ये चौबीस अवतार जो हुए हैं, ये चौबीस अवतार जो एक है गायत्री के एक-एक अक्षर का अक्षर ब्रह्म है। चौबीस अक्षरों में है ना गायत्री मंत्र जिसे नवनीतभाई ने विश्वमंत्र कहा। आनंद करवाया साहब आपने। ज्यादा बोलते तो अच्छा लगता हमें। यहां कोई प्रतिबंध नहीं है। आपको संकोच होता होगा। आपने दो-तीन बार बीच में कहा, मुझे बुरा तो नहीं लगा लेकिन अच्छा भी नहीं लगा और वो ये बापू और दो-चार को छोड़कर हम सब काम से वश ऐसा कुछ नहीं। तुलसी कहते हैं-

भए कामबस जोगीस तापस पावंरन्हि की को कहै।
देखहिं चराचर नारिमय जे ब्रह्ममय देखत रहे।
अबला बिलोकहिं पुरुषमय जगु पुरुष सब अबलामयं।
दुइ दंड भरि ब्रह्मांड भीतर कामकृत कौतुक अयं।।

रस किसको नहीं चाहिए? भगवान ने कल आठ मुद्दे कहे कि प्रेम सबको चाहिए। शांति सबको चाहिए। शक्ति सबको चाहिए। ज्ञान सबको चाहिए। कहा न आपने! ये सबको चाहिए। ऐसा आपने बताया। बाबा, कहूं? ये महात्मा हमें कहते रहते हैं कि मेरी गति तो गर्लफ्रेंड तक है! ऋषिपंचमी के सुबह का ये सूत्र है। लेकिन उर्दू में एक सूफ़ी ने कहा है कि मेरा सर वहीं झुका है जहां खत्म बंदगी है। मैं उसी स्थान पर पहुंचा हूं कि उसके बाद जहां कोई बंदगी की जरूरत नहीं पड़ती है। चाहे आदमी सद्‌गुरु के पास पहुंच जाए और उसको फिर आगे उसकी दौड़ मिट जाए वो सद्‌गुरु ही उसकी मुक्ति है। और मुझे कोई आपत्ति नहीं, केवल गर्लफ्रेंड तक पहुंच जाओ न, लेकिन इसके बाद दौड़ नहीं होनी चाहिए। तो बाबा बोले, मेरी पहुंच तो गर्लफ्रेंड तक है! रूपवालों का रूप परमात्मा है। वहां कोई को विधि को निषेध? लेकिन इसका हल्का अर्थ न करे। बहुत ऊंचा सूत्र है।

तो मेरे कहने का मतलब गायत्रीमंत्र का एक-एक अक्षर ये चौबीस मानो चौबीस अवतारों के प्रति संकेत करता है। पदार्थ दर्शन रामकथा का। अणुदर्शन, ब्रह्मांडदर्शन की बात पांडेसाहब ने कही। और अभी आपने पिंड ब्रह्मांड की बात कही। और ‘मानस’ क्या कहता है? ‘उदर माझ सुनु अंडज राया।’ हे खगपति! भगवान राम छोटे थे। उस जमुहाथ लेते उसने दशरथ के आंगन में मुंह खोला और उसी समय कागभुशुंडि कहते हैं मैं उसके मुख में चला गया और हे गरुड, मैं क्या बताऊं? परमात्मा के उदर में मैंने अनेक ब्रह्मांडो की यात्रा की। अनेक ब्राह्मण प्रकरण है ‘मानस’ के ‘उत्तरकांड’ में। तो ब्रह्मांड विज्ञान भी वहीं है। पदार्थ क्या और प्रेम में कितना अंतर है वो पूरा प्रतिपादन ‘अयोध्याकांड’ करता है। राज्य पदार्थ है। समर्पण प्रेम है। आरोग्य; ‘सब सुंदर सब बिरुज सरीरा।’ रामराज्य में सब सुन्दर, सब नीरोगी सब ये था तो आरोग्य। खगोलशास्त्र ब्रह्मांडीय शास्त्र है साहब! कितना बड़ा वैज्ञानिक सूत्र है! ‘कोउ अवकास कि नभ बिनु पावइ।’ किसी साइंटिस्ट को दे दीजिए ये सूत्र कि आकाश-नभ के बिना आप कभी अवकाश प्राप्त कर सकते हैं? और तुलसी कहते हैं, वो ही शून्यता और वो ही स्पेस से ऊपर जाना जहां कोई किसी को छू नहीं सकता। आज हम अनुभव करते हैं कि स्पेस में गया आदमी तैरता है। किसीको छू नहीं सकता। ‘बिनु महि गंध कि पावई कोई।’ सभी वैज्ञानिक सूत्र ‘मानस’ में है। तो ब्रह्मांड विज्ञान भी है, गायत्री विज्ञान भी है, योग विज्ञान भी है, पदार्थ विज्ञान भी है, यज्ञ विज्ञान भी है। तो आप जब बता रहे थे तब-

नानापुराणनिगमागमसम्मतं यद्
रामायणे निगदितं क्वचिदन्यतोऽपि।
स्वान्तःसुखाय तुलसी रघुनाथगाथा
भाषानिबन्धमतिमंजुलमातनोति।।

बड़ा आनंद आया। घणुं बोल्यो। लगभग एक कलाक, खबर नहीं, पोणो कलाक तो बोल्यो हुं। बोलवानो आनंद छे, मूंगा रहेवानो आनंद छे। हर हाल में खुश रहो साहब! हर हाल में खुश रहो। और एक वस्तु कह दूं, जो दास होता है न उसी को ही बापू होने का अधिकार है।

(‘संस्कृतसत्र’-१८ में कैलास गुरुकुल, महुवा (गुजरात) में प्रस्तुत वक्तव्य : दिनांक १४-९-२०१८)

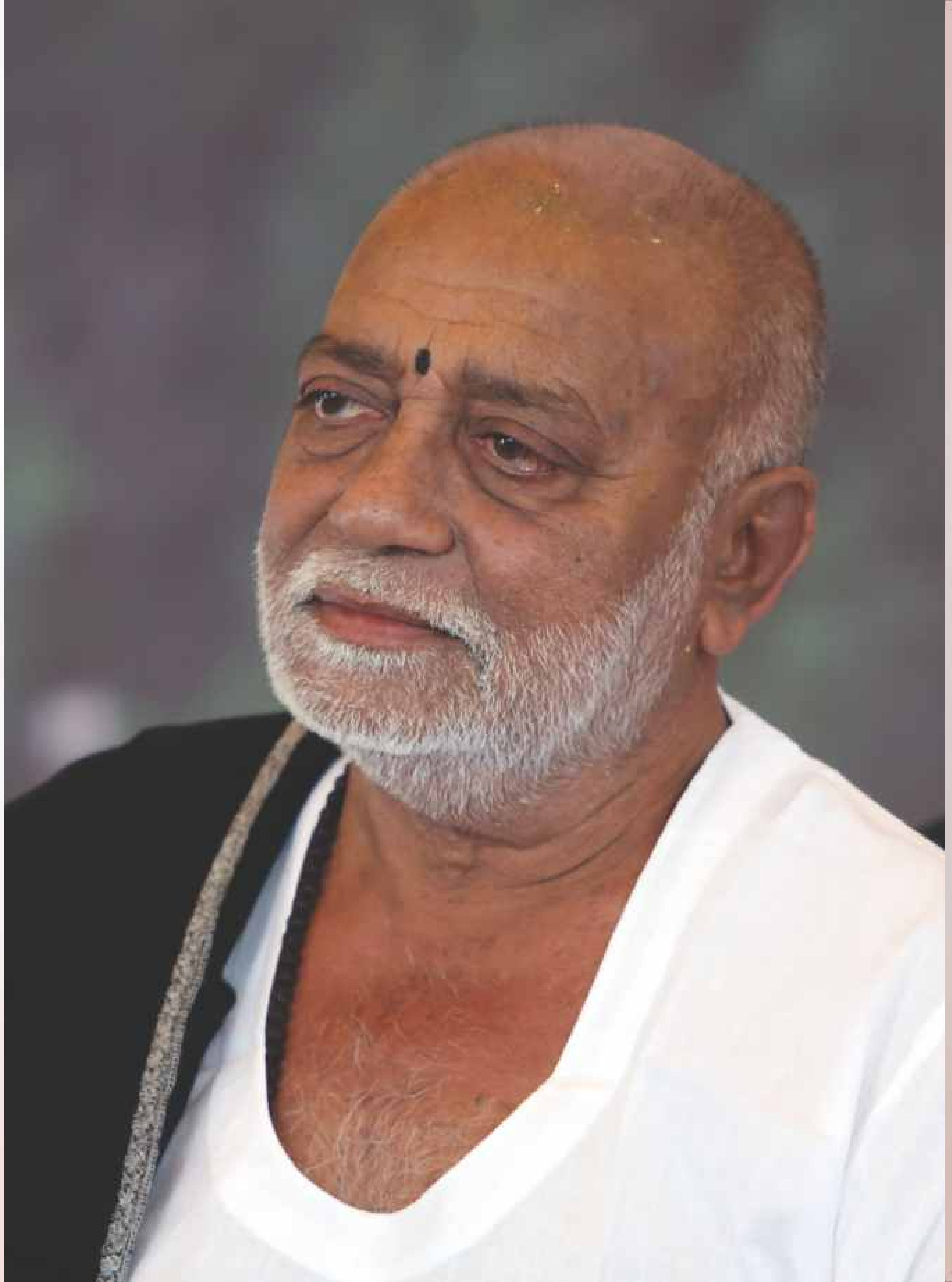

या देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः।।

॥ जय सीयाराम ॥